# साहित्य अमृत
मासिक

वर्ष-२४ अंक-२ ❖ पृष्ठ ९२ | भाद्रपद-आश्विन, संवत्-२०७५ | सितंबर २०१८



*संस्थापक संपादक*
**स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र**

*पूर्व संपादक*
**स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी**

*संपादक*
**त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी**

*प्रबंध संपादक*
**श्यामसुंदर**

*संयुक्त संपादक*
**डॉ. हेमंत कुकरेती**



*कार्यालय*
४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२
फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३
इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

**शुल्क**
एक अंक —₹ ३०
वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००
वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००
*विदेश में*
एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)
वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा
४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२
से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६,
कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।



**साहित्य अमृत** में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

इस अंक में


**संपादकीय**
एक इतिहास-पुरुष का महाप्रयाण ४

**पुस्तक-अंश**
अपनी बात/ *अटल बिहारी वाजपेयी* ९

**प्रतिस्मृति**
श्री शिवपूजन सहाय/ *श्रीनारायण चतुर्वेदी* १५

**कहानी**
घोष बाबू का स्कूल/ *प्रकाश मनु* १८
और वह रो पड़ा/ *तुलसी देवी तिवारी* २८
विकास की ओर/ *इंदु शुक्ला* ३७
एडवांस बुकिंग/ *रेणुका अस्थाना* ५२
बरसे मेघा फिर से/ *रजनी गोसाईं* ६२

**आलेख**
देवनागरी लिपि से ही होगी भारतीय अस्मिता और भाषाओं की रक्षा/ *मालती शर्मा* २४
अंग्रेजी मानसिकता से मुक्त हों/ *आचार्य बलवंत* ३४
नई हिंदी का वैश्विक स्वरूप/ *दीपक शर्मा* ४७
नन्ही फुदकती चहचहाती लौट आ 'चिरी' *सुदेश गोगिया* ५४
अपने कहन से चमत्कृत करती गजलें/ *ब्रजकिशोरी वर्मा 'शैदी'* ६४

**लघुकथा**
बेहाल व्यवस्था/ सत्य शुचि २६
चाबी में लैबर रूम/ सत्य शुचि ६१

**कविता**
हर चेहरा अनजान सा क्यों है ?/ *अरुणिमा शर्मा* १७
कहाँ रहोगे तुम/ गिरिराजशरण अग्रवाल २७
गुलदस्ता/ *रामगोपाल 'राही'* ५७
मेहनत रंग लाई/ *ओम उपाध्याय* ६९
हिंदी का महत्त्व/ *कुलभूषण सोनी* ७०
पावस के दोहे/ *शिवमूर्ति सिंह* ७८

**राम झरोखे बैठ के**
अदृश्य विकास और ईश्वर/ *गोपाल चतुर्वेदी* ४०

**डायरी-अंश**
शिक्षक दिवस/ *रामदरश मिश्र* ५०

**व्यंग्य**
इसे कॉर्पोरेट कल्चर भी कहते हैं/ *दिनेश बैस* ५६

**साहित्य का भारतीय परिपार्श्व**
सपेरा/ *उमा राव* ५८

**साहित्य का विश्व परिपार्श्व**
वह शर्त/ *अंतोन चेखव* ६६

**यात्रा-वृत्तांत**
मेरी चार धाम यात्रा/ *गुंजन गुप्ता* ७५

**लोक-साहित्य**
लोककाव्य में कुँअर सिंह/ *सुनील कुमार पाठक* ७९

**बाल-संसार**
शादी के दिन का इंतजार/ *हरीश कुमार 'अमित'* ८२

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ८३
वर्ग-पहेली ८६
साहित्यिक गतिविधियाँ ८७

संपादकीय

# एक इतिहास-पुरुष का महाप्रयाण

अटल बिहारी वाजपेयी के निधन से भारत के स्वतंत्रता-प्राप्ति के उपरांत के राजनीतिक जगत् से एक विशिष्ट देदीप्यमान नक्षत्र विलुप्त हो गया। पिछले दशक से वे अस्वस्थता के कारण सक्रिय राजनीति से अलग थे, किंतु उनकी उपस्थिति मात्र से ही राजनीति में सहजता का आभास होता था। अटलजी ने जो भी स्थान राजनीति में प्राप्त किया, वह अपनी योग्यता, परिश्रम और ध्येय की स्पष्टता से किया। उनका व्यक्तित्व अप्रतिम था। वे एक साधारण परिवार में जनमे। उनको बहुमुखी प्रेरणा अपने पिताश्री से प्राप्त हुई। उनकी उच्च शिक्षा डी.ए.वी. कॉलेज, कानुपर में हुई। १९४२ के आंदोलन में उन्होंने भाग लिया और जेलयात्रा की। कुछ समय उपरांत ग्वालियर में अपने एक शिक्षक से प्रभावित होकर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में सम्मिलित हुए। बाद की कहानी इतिहास है। वे जनसंघ के अध्यक्ष बने, भाजपा के अध्यक्ष बने और भारत के प्रथम गैर-कांग्रेसी प्रधानमंत्री भी।

उनके सहयोगियों ने, जो उनके साथ पार्टी में रहे और विभिन्न दलों के नेताओं ने, जो उनके विरोधी रहे, अपने-अपने अनुभव एवं संस्मरण व्यक्त किए हैं। एक बात, जो प्राय: सभी ने कही है, वह यह है कि अटलजी सबको साथ लेकर चलने की चेष्टा करते थे। विरोध पक्ष को वे उभय पक्ष कहते थे। राजनीति के वे शिखर पुरुष बने, किंतु उनका पदार्पण जनजीवन में पत्रकारिता के माध्यम से हुआ। वे कवि थे, कवि हृदय थे। वे अकसर कहते थे कि राजनीति ने उनको कविता के क्षेत्र में कार्य करने से वंचित कर दिया। जनसंघ की स्थापना के उपरांत वे डॉ. श्यामा प्रसाद मुकर्जी के निजी सचिव बने। डॉ. मुकर्जी की जम्मू में गिरफ्तारी के समय तक वे उनके साथ थे और डॉ. मुकर्जी के आदेशानुसार वे जम्मू-कश्मीर के हालात देश को बताने के लिए दिल्ली वापस आए। उनके जीवन के अनेक पन्ने धीरे-धीरे खुलेंगे।

अटलजी की ख्याति एक प्रखर, ओजस्वी वक्ता की थी। उनके शब्दों का चयन अद्‌भुत था। बोलते हुए वे रुक जाते थे तो श्रोताओं की उत्सुकता बढ़ती रहती कि देखें वे क्या कहते हैं; और फिर अपने शब्दजाल एवं विषय प्रस्तुतीकरण से वे श्रोताओं को मोह लेते थे। उनको सुनने के लिए लोग घंटों इंतजार करते और दूर-दूर से चलकर आते थे। उनके भाषण में कहीं रोष, कहीं जोश एवं फिर हँसी-मजाक और अंत में पुन: गंभीर विश्लेषण। अटलजी की विशेषता थी कि उनकी भाषा में कभी किसी प्रकार के अपशब्दों का प्रयोग नहीं होता था। चाहे संसद् हो या राजनीतिक मंच, वे किसी पर व्यक्तिगत आक्रमण नहीं करते थे। दूसरों के आक्रामक शब्दों को वे व्यंग्यात्मक ढंग से टाल जाते। यदि उन्हें यह आभास होता कि कुछ अनर्गल आक्रमण हुआ है तो वे अपना रोष संतुलित ढंग से प्रकट करते। स्वयं व्यक्तिगत आक्षेप नहीं करते, वरन् जो अनुचित शब्द किसी ने इस्तेमाल किए होते तो वे उनकी ऐसी व्याख्या करते कि प्रयोग करनेवाले को भी छठी का दूध याद आ जाए। यही नहीं, वे अपनी गलती महसूस करने लगते। एक बार ऐसा प्रसंग सोनिया गांधी के भाषण के विषय में आया था, पर उन्होंने कोई व्यक्तिगत आक्षेप नहीं किया। अटलजी ने बांग्लादेश बनने के बाद इंदिराजी को 'दुर्गा' कहकर संबोधित किया था। अच्छे काम की वे सदैव सराहना करते थे। उनकी मुसकान सबका दिल जीत लेती थी।

अटलजी के नेतृत्व के गुणों का बखान करना मुश्किल है। वे समय की नब्ज पहचानते थे। समय के साथ क्या परिवर्तन होना चाहिए, वे अच्छी तरह जानते थे। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को उन्होंने अपनी आत्मा कहा। हिंदुत्व में उनका अटूट विश्वास था। समय आने पर वे अपने को व्यक्त करने में नहीं झिझकते थे। संघ परिवार के विचारों को ध्यान में रखते हुए उन्होंने अपने प्रधानमंत्रित्व काल में नरसिंह राव के समय के डॉ. मनमोहन सिंह (वित्तमंत्री) की उदारीकरण योजना को आगे बढ़ाया। वे नरसिंह राव और चंद्रशेखर से कभी-कभी विचार-विमर्श करते थे। अपनी राय बनाने के पहले उनका प्रयास रहता था कि मतिभिन्नता में जहाँ तक मतैक्य खोजा जा सके, खोजा जाना चाहिए। वे देश की भाँति-भाँति की विविधता को बड़ी संवेदनशीलता से देखते थे। यह उनकी सार्वजनिक लोकप्रियता का एक रहस्य था, ऐसे लोगों में जो उनकी भाषा नहीं समझते थे। सत्ता में बने रहने के लिए कोई अनैतिक कदम उठाया जाए, इसके वे सख्त विरोधी थे। एक वोट से उनकी सरकार गिर जाए, पर वे खरीद-फरोख्त में विश्वास नहीं करते थे। कैसे अलग-अलग विचारवालों को देशहित के मुद्‌दों पर एकजुट किया जाए, इस विषय पर वे गंभीरता से विचार करते थे। साझा सरकार कैसे चलाई जाए, उसका उदाहरण वाजपेयीजी ने प्रस्तुत किया। इसीलिए आज भी कई दल वाले कहते हैं कि हमें अटल बिहारी वाजपेयी चाहिए।

अटलजी दूर की सोचते थे। दूसरों से परामर्श करने में विश्वास करते थे। उनकी सरकार की उपलब्धियों या उठाए गए कदमों की चर्चा आसान नहीं है। उत्तर से दक्षिण, पूरब से पश्चिम सड़कों द्वारा देश को जोड़ने का जो कार्य 'प्रधानमंत्री सड़क योजना' से प्रारंभ हुआ, वह अभूतपूर्व है, जिसे 'गोल्डन ट्रायंगल' कहा जाता है। यही नहीं, वे एक-एक गाँव को 'प्रधानमंत्री सड़क योजना' के द्वारा जोड़ना चाहते थे। वे हिंदी प्रेमी थे और सर्वप्रथम यू.एन.ओ. में हिंदी में भाषण देकर उन्होंने देश की राष्ट्रीय अस्मिता को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रस्तुत किया। विदेश नीति में कई कदम उठाए, जिससे देश की प्रतिष्ठा बढ़ी। जब विश्व में सभ्यताओं के टकराव की बातचीत हो रही थी, तब उन्होंने यूनेस्को के सहयोग से दिलों में सभ्यताओं के आपसी संवाद पर सम्मेलन आयोजित करवाया। 'भारतीय प्रवासी दिवस' की योजना अटलजी की थी। इतिहास इन सबका आकलन धीरे-धीरे करेगा।

अटलजी की मेधा और उनके भविष्य की संभावनाओं का आकलन प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू को हो गया था, जब अटलजी संसद् में आए ही थे। श्रीमती मेनन, जो नेहरूजी की सरकार में

राज्यमंत्री थीं। उन्होंने लिखा है कि नेहरूजी एक बार संसद् में हो रही बहस के दौरान बैठे-बैठे थकान महसूस करने लगे और घर जाने की इच्छा प्रकट की। फिर नेहरूजी ने यकायक पूछा कि कितने और वक्ता बाकी हैं? श्रीमती मेनन ने कहा कि तीन-चार और, जिनमें अटलजी का नाम था। नेहरूजी ने अटलजी का नाम सुनकर कहा कि फिर तो वे इस युवा सांसद को सुनकर ही जाएँगे। वह हमारे खिलाफ बोलता है, किंतु इतना अच्छा बोलता है, तर्क और तथ्यों के साथ अपनी बात कहता है। उसके (अटलजी) भाषण के बाद ही वे संसद् से जाएँगे। यही नहीं, एक डेलीगेशन विदेश से भारत आया था। उसमें चेगुवेरा भी थे। अटलजी का परिचय कराते हुए नेहरूजी ने कहा कि आगे कभी-न-कभी यह हमारा युवा सांसद देश का प्रधानमंत्री बनेगा।

डॉ. मनमोहन सिंह ने, जो उनके बाद प्रधानमंत्री बने, उन्हें 'अजातशत्रु' कहा है। अटलजी मानवतावादी थे। वे हर प्रकार के अहंकार से सदैव दूर रहे, पर आत्मसम्मान के प्रति सदैव सचेत। उनका सबसे बड़ा गुण था—अपनत्व की भावना। सभी उनके अपने। वे अत्यंत उदारमना थे, संकीर्णता से दूर। इसी कारण वे जन-जन के प्यारे थे। साधारण-से-साधारण कार्यकर्ता उन्हें अपना मानता था। जिससे वे मिलते, ऐसी आत्मीयता से मिलते कि वह उनका हो जाता। हमें भी उनके साथ पार्टी और संसद् में कार्य करने अवसर मिला। प्रधानमंत्री काल में जब भी उनको फोन किया, यदि वे नहीं होते तो रात को या प्रातः उनका फोन आता कि किस विषय के बारे में फोन किया। जब वे विदेश मंत्रालय की स्थायी समिति के अध्यक्ष थे, तो उभय पक्ष में थे। कभी यदि समिति की बैठक में कोई विदेशी डेलीगेशन आया या कोई अहम/महत्त्वपूर्ण विषय पर विचार-विमर्श होना होता तो वे परेशान या चिंतित नहीं होते थे। उनकी भद्रता, शिष्टता अद्‌भुत थी। कभी उनको जल्दी-जल्दी चलते नहीं देखा। प्रधानमंत्री काल में भी खरामा-खरामा चलते हुए, सबका अभिवादन स्वीकार करते हुए सदन में प्रवेश करते। कभी जल्दबाजी नहीं, उत्तेजना नहीं, एक विचित्र संतुलन और आत्मविश्वास के वे धनी थे। यह ठीक है कि भाजपा के विस्तार का श्रेय अटलजी और उनके पुराने मित्र आडवाणीजी को है। आडवाणीजी ने संगठन में अभूतपूर्व योगदान दिया। अटलजी ने उसके आधार पर भाजपा की विचारधारा को देश के जन-जन में प्रचारित किया। दोनों के सम्मिलित प्रयास से भाजपा में समर्पित कार्यकर्ताओं के समूह-के-समूह तैयार हो गए। यह एक बहुत बड़ी देन है। उनके राजनीतिक जीवन में उनको भाँति-भाँति से बदनाम करने की चेष्टाएँ समय-समय पर की गईं, पर उसकी उन्होंने कोई परवाह नहीं की। हाथी अपने रास्ते चलता रहा। आज अटलजी देश के नहीं, पूरे विश्व के लीजेंड या चर्चापुरुष हैं।

अटलजी अब हमारे बीच पार्थिव शरीर में नहीं हैं, किंतु उनका यश, उनकी शक्ति, उनकी विचारधारा, उनके आदर्श, उनकी कार्यशैली, उनके व्यक्तिगत मनमोहक गुण सतत प्रेरणा के स्रोत रहेंगे। ऐसे अप्रतिम इतिहास-पुरुष एवं प्रेरणा-पुरुष को हमारा शत-शत प्रणाम!

## स्वतंत्रता दिवस की विरासत

पंद्रह अगस्त को देश ने ७२वाँ स्वतंत्रता दिवस मनाया। यह लेखा-जोखा प्रतिवर्ष होता है और होता रहेगा। आयोजन एक रस्म बनकर रह जाता है। उसकी आत्मा निवाक् दिखाई देती है। आखिर स्वतंत्रता संग्राम की विरासत क्या है? कौन सी धरोहर है, जिसकी रक्षा करना हर नागरिक का कर्तव्य है। हमारी मान्यता है कि हमें चार मूल तत्त्व स्वतंत्रता संग्राम की विरासत के रूप में प्राप्त हुए। कहा जाए तो स्वतंत्रता संग्राम के ये प्रेरणादायी अभिप्रेरक भी थे। प्रथम था—नागरिक अधिकारों को प्राप्त करना और उनका संरक्षण। उस समय आज जैसी स्थिति तो थी नहीं, जहाँ संविधान में नागरिक अधिकार रेखांकित हैं और जिनमें न्यायिक व्याख्यानुसार समय-समय पर वृद्धि ही होती है। अंग्रेजी शासन के समय पढ़े-लिखे लोग मैग्ना कार्टा की बात करते अथवा १८५७ के उपरांत तत्कालीन ब्रिटिश सम्राज्ञी विक्टोरिया की घोषणा का सहारा लेते। १९३६ में सिविल लिबर्टीज यूनियन भी बना, जिसके अध्यक्ष थे रवींद्रनाथ टैगोर और सचिव जवाहर लाल नेहरू। उस समय तक कराची कांग्रेस में नागरिक अधिकारों से संबंधित एक प्रस्ताव भी पारित हो चुका था। लेकिन बहुत पहले अदालत के सामने लोकमान्य तिलक की घोषणा कि 'स्वराज हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, और हम उसे लेकर रहेंगे' ने पूरे देश को आंदोलित कर दिया था। जहाँ तक नागरिक अधिकारों का सवाल है, नरम दल और गरम दल दोनों में कोई मतभेद नहीं था। नागरिक अधिकारों में एक मुख्य अधिकार है—अभिव्यक्ति की आजादी। इतिहास गवाह है कि इस माँग के लिए लोकमान्य तिलक और अनेक पत्रकारों को कालेपानी या देश निकाले की सजा भुगतनी पड़ी। सरकार या किसी भी व्यवस्था की आलोचना कर सकते हैं, अपना भिन्न मत प्रकट करना हमारा मौलिक अधिकार है। आज इसकी भी सीमाएँ संविधान में निर्धारित की हैं।

दूसरा तत्त्व है—राष्ट्र निर्माण या नेशन बिल्डिंग का एवं राष्ट्रीय एकता का। राष्ट्रीय आंदोलन के पुरोधा सुरेंद्रनाथ बनर्जी ने अपने आत्मचरित का नाम रखा है—'ए नेशन इन मेकिंग'। राष्ट्रीय आंदोलन के सभी पुरोधा इस बात से परिचित थे, उन्हें जानकारी थी कि यह देश अनेक मत-मतांतरों का देश है, अलग-अलग तरह के खान-पान, वेशभूषा, रहन-सहन, रीति-रिवाज हैं, भारत बहुभाषाई देश है, जातीय विभिन्नताएँ हैं और इनको ध्यान में रखते हुए राष्ट्र का निर्माण करना है। इसीलिए समाज सुधार के विवाद से उस समय उन्होंने कांग्रेस को अलग रखा। आकांक्षा थी कि भारत की एक कल्पना, जो जनता के हृदय में है, उसका एक हलका सा प्रस्फुटन आभास लोगों में है, पर उसका स्पष्टीकरण होना चाहिए। इसीलिए सदैव सामंजस्य और समन्वय पर जोर रहा, ताकि सब देशवासी एकजुट रहें एवं राष्ट्रीय एकता सुदृढ बने। भाँति-भाँति की विभिन्नताओं और देश के विशाल फैलाव में आवश्यक है कि मतभेद बातचीत द्वारा शांतिपूर्वक दूर किए जाएँ। संवाद ही मतभेदों को दूर करने का एक रास्ता है। कानून को हाथ में लेना अनुचित है और संविधान विरोधी भी। दूसरों को अपनी राय व्यक्त करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए, चाहे वह हमें पसंद न हो। तर्क के साथ उत्तर देना चाहिए। यही लोकतांत्रिक रास्ता है। चाहे गौ अथवा अन्य पशुओं की तस्करी हो, चाहे किसी महिला पर चुड़ैल होने का शक हो या बच्चों के अपहरण

का शक हो, हमें उनको कानून-व्यवस्था के जिम्मेदार अधिकारियों को सौंपना चाहिए, न कि मार-पीट शुरू कर दें और हत्या ही कर डालें। हम गाय को माता रूप में पूजा करते हैं। कुछ राज्यों में गो वध कानूनन मना है, जिसका पालन होना चाहिए। यह शासन का दायित्व है। इसके माने यह नहीं कि कोई गाय को ले जा रहा है, जब खरीद-फरोख्त पर मनाही नहीं है, तब तथाकथित गौ रक्षकों को यह अधिकार नहीं है कि वे कानून हाथ में लेकर गौ ले जानेवाले की मार-मारकर हत्या कर दें। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने यह पहले भी स्पष्ट किया है। भीड़ के द्वारा हत्या, जिसे अंग्रेजी में लिपिंग कहा जाता है, प्रजातंत्रात्मक व्यवस्था स्वीकार नहीं कर सकती। शीर्ष न्यायालय ने इसकी रोकथाम के लिए विशेष कानून बनाने को सरकार से कहा है। इसकी अवश्यकता नहीं होती, यदि अधिकारी वर्ग सतर्क रहें।

दूसरी तरफ हमें गौरक्षा के मामले को सकारात्मक रूप से देखना चाहिए। कानपुर और जयपुर के गौशालाओं की दुर्वव्यवस्था चाहिए। कानपुर और जयपुर की गौशालाओं की दुर्वव्यवस्था देखकर हमें शर्म आनी चाहिए। आखिर सरकारी पैसे का दुरुपयोग क्यों? हिंसा का कोई स्थान नहीं है, यदि हम समाज में एकता बनाए रखना चाहते हैं। विनोबा भावे ने ठीक ही कहा है, ''जिस देश के लोग अपने पर काबू नहीं रख सकते, वहाँ पर स्वतंत्रता नहीं रह सकती।'' नरेंद्र मोदी ने १५ अगस्त को लालकिले के अपने भाषण में श्रीअरविंद को उद्धृत किया था। प्रजातंत्र शांति और सौहार्द में फलता-फूलता है। वह नागरिकों से आत्मानुशासन और आत्मनियंत्रण की अपेक्षा करता है। श्रीअरविंद को उद्धृत करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि हमारी राष्ट्रीयता और राष्ट्र की अवधारणा केवल भूखंड के रूप में नहीं है, वरन् देश में रहनेवाले समस्त जन से है। प्रधानमंत्री ने यह ध्यान भी दिलाया कि १५ अगस्त श्रीअरविंद का जन्मदिवस भी है। प्रधानमंत्री का समावेशी मूलमंत्र 'सबका साथ, सबका विकास' इस धारणा से ही निसृत हुआ है। राष्ट्रीय आंदोलन के प्रणेताओं ने सभी की संवेदनाओं को ध्यान में रखने की जरूरत महसूस की। श्रीअरविंद के एक और संदेश, जो उन्होंने १५ अगस्त, १९४७ को तत्कालीन ऑल इंडिया रेडियो के लिए दिया था, उसकी ओर ध्यान दिलाना चाहेंगे। उसमें श्रीअरविंद ने उन समस्याओं का विश्लेषण किया, जिससे आज देश जूझ रहा है। श्रीअरविंद का वह कथन आज भी काफी हद तक प्रासंगिक है।

देश की अखंडता को बड़ा आघात लगा, जब १९४७ में देश का विभाजन हुआ। उस समय भारत दो भागों में बँटा था—एक ब्रिटिश शासित भारत और दूसरा राजा-रजवाड़ों का भारत। उस समय की एटलसों में ब्रिटिश शासित हिस्सा लाल रंग में रँगा होता था और प्रिंसली इंडिया, यानी राजाओं का भारत पीले रंग में। ये रियासतें छोटी-बड़ी चेचक की तरह फैली हुई थीं। सरदार पटेल ने उनका एकीकरण कर चमत्कार कर दिखाया। यह सरल काम नहीं था। विभाजन के समय देश में ऐसी उथल-पुथल मची थी कि भारत की राजनीतिक स्थिरता के संबंध में लोगों को संदेह होने लगा था। एक तरफ सरदार पटेल और दूसरी तरफ सरकार के राजनीतिक विभाग के सचिव सर जान कोरफील्ड, भोपाल के नवाब हबीबुल्ला, जो उस समय चैंबर ऑफ प्रिंसेज के अध्यक्ष थे, के षड्यंत्र और कुछ बड़े हिंदू रजवाड़ों को भारत के विरुद्ध उकसाने की उनकी तिकड़म। हैदराबाद के निजाम हथियार आयात कर रहे थे। हर तरह की सहायता इस षड्यंत्र को सफल बनाने के लिए उपलब्ध की जा रही थी। सरदार पटेल ने धैर्य और कुशलता से इस कुचक्र को असफल कर दिया। आज हम सरदार पटेल की भूमिका का सही आकलन नहीं कर पा रहे हैं। आज की पीढ़ी उस समय भारत के टुकड़े-टुकड़े करने की, बालकलाइजेशन की चाल की गंभीरता से अपरचित हैं। वी.पी. मेनन ने अपनी पुस्तक 'इंटीग्रेशन ऑफ इंडियन स्टेटस' में जो देखा और किया, उसका वर्णन किया है। अब और भी शोध हुए हैं। एक नई पुस्तक 'सरदार पटेल यूनीफाइर ऑफ इंडियन स्टेटस' ए.एन.पी. सिंह लिखित पुस्तक वितस्ता, अंसारी रोड, दिल्ली से प्रकाशित हुई है। अच्छी जानकारी देती है। बलराज कृष्णा की सरदार पटेल की जीवनी है, (प्रकाशक रूपा, दिल्ली) जो अत्यंत उपयोगी है। आज की पीढ़ी को इस इतिहास को जानना जरूरी है। आज ऐसे लोग भी हैं, न केवल जे.एन.यू. में, बल्कि अन्यत्र भी, जो देश के टुकड़े-टुकड़े करने की बात करते हैं। सरदार पटेल ने केवल राज्यों का एकीकरण ही नहीं किया, बल्कि विभाजन से पहले के ब्रिटिश राज्य से बड़े भारत का निर्माण किया; जिसकी रक्षा आज हमारा दायित्व है। देश के विभाजन, यानी पाकिस्तान बनने के समय भारत ने ३.६ वर्ग मील की जमीन और ८१.५ मिलियन आबादी को खोया था। सरदार पटेल के अथक प्रयासों से राज्यों के एकीकरण और उनके भारत में सम्मिलित होने के उपरांत उन्होंने ५ लाख वर्ग भू-भाग और ८६.५ मिलियन आबादी प्राप्त कराई। आज का भारत ब्रिटिश राज्य के भारत से बड़ा है। महात्मा गांधी और सरदार पटेल के इस भारत की सुरक्षा और विकास का दायित्व आज हम सब पर है। ३१ अक्तूबर उनकी जन्मतिथि है।

तीसरा तत्त्व है जनसाधारण से संपर्क, तादात्म्य और उनका विश्वास प्राप्त करना। किसी भी बड़े कार्य या आंदोलन के लिए आवश्यक है कि जनता जनार्दन से कैसे संबंध जोड़ा जाए, ताकि पारस्परिक विश्वास का वातावरण पैदा हो। इसके बगैर कोई सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। एक नेता योग्यता और विचारों की दृष्टि से चाहे जितना महान् हो, किंतु जनता में यदि उसकी विश्वसनीयता नहीं है तो वह सफल नहीं हो सकता। कहावत है 'अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता।' द्वितीय युद्ध के प्रारंभ में सुभाष चंद्र बोस का गांधीजी से आग्रह था कि वे अंग्रेजों के खिलाफ आंदोलन छेड़ दें, पर गांधीजी का कहना था कि अभी जनता तैयार नहीं है। सुभाष चंद्र बोस का कहना था कि गांधीजी का व्यक्तित्व ऐसा है कि जनता, मासेज उनका अनुसरण करेंगे। गांधीजी ने कहा, ''My prestige does not count. It has no independent value of its own. India will rise or fall by the quality of the sum total of the acts of her many millions, Individuals however high they may be, are of no account except in so for as they represent many millions.'' वास्तव में कोई आंदोलन जन साधारण की अपनी क्रियाशीलता और रचनात्मकता पर बहुत कुछ

निर्भर करता है। इसके लिए आवश्यक है—पारस्परिक विश्वास। नेता में विश्वास और नेता की जनता से तादात्मिकता सफलता की कुंजी है। कालांतर में सुभाष बाबू ने आई.एन.ए. के दिनों में जनता में यह अटूट विश्वास पैदा कर दिया, जिसने देश के स्वतंत्रता आंदोलन में एक नया इतिहास लिख गया।

विरासत का चौथा तत्त्व है कि भविष्य की क्या तसवीर है। स्वतंत्रता केवल साध्य नहीं, साधन भी है। किस दिशा में हम आगे बढ़ेंगे, ताकि जनता का हित सर्वोपरि हो सके। जनता की क्या आशाएँ हैं, अपेक्षाएँ हैं, क्या वे पूरी हो सकीं? यहाँ फिर वही प्रश्न आपसी विश्वास का उठता है।

राजनैतिक स्वाधीनता सर्वतोमुखी विकास के अवरुद्ध मार्ग को खोलती है। आगे जनता की आकांक्षाओं और आशाओं को मूर्तरूप देने के लिए नेतृत्व को नीतियाँ व कार्यक्रम बनाने होते हैं और यह भी देखना होता है कि उनका अनुपालन तथा क्रियान्वयन कैसे हो रहा है! सन् १९४७ के बाद जनता में आशाएँ बढ़ना स्वाभाविक था। एक गरीब देश कैसे विकसित हो। रोटी, कपड़ा, मकान और स्वास्थ्य की सबसे अधिक आवश्यकता होती है। बिना किसी जाति-पाँति, धर्म, रंग, क्षेत्र अथवा लिंग भेद के ये सबको उपलब्ध होने चाहिए। सबके साथ समान व्यवहार होना चाहिए। यह एहसान नहीं, नेतृत्व का कर्तव्य हो जाता है। इसके साथ शिक्षा जुड़ी है, ताकि जनता को अपने कर्तव्यों और अधिकारों का भान हो सके। शिक्षा अगली पीढ़ी के विकास का मार्ग प्रशस्त करती है। हाशिए पर पड़े या अभी तक उपेक्षित समुदायों के लिए शिक्षा एक बहुत बड़ी समतल भूमि तैयार करती है। तभी समानता और भ्रातृभाव की भावना जनमती है। बराबरी व समानता का वातावरण तभी बनता है। शिक्षा को लोकतंत्र का एक महान् Leveller एवं Equaliser कहा गया है। शिक्षा सभी को उन्नति का अवसर प्रदान करती है। पूरी शिक्षा व्यवस्था, विशेषकर प्राथमिक और माध्यमिक हर एक को सहज उपलब्ध होनी चाहिए। तभी लोकतंत्र की भित्ति मजबूत होगी और समता, समरसता, सामाजिक न्याय का माहौल बनेगा। प्रत्येक नागरिक की गरिमा का सम्मान ही लोकतंत्र का सच्चा मानक है, मापदंड है। इसीलिए उसकी गुणवत्ता का प्रश्न उठता है। लोकतंत्र में हर व्यक्ति की गरिमा का सम्मान समान रूप से होने की अपेक्षा है। नेतृत्व कितनी ईमानदारी और नेकनीयति से इस दिशा में काम करता है, यह देखना आवश्यक हो जाता है। ऊपरवाले जो कहते हैं, वह जमीन पर दिखाई देना चाहिए। कथनी और करनी में एकरूपता दिखाई देती है। १९४७ का आश्वासन एक धरोहर है, जिसको पूरा करना है। इसके अभाव में देश में आशंका और असंतोष का वातावरण बनता है। योजनाओं का लाभ, जिनके लिए वे बनती हैं, उनको न मिलकर मगरमच्छ खा जाते हैं, तब जनता में रोष उभरता है। १५ अगस्त को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने एक चिकित्सा सुविधा की बहुत बड़ी घोषणा की, जो सितंबर माह से प्रारंभ होगी। इसके कार्यन्वयन में राज्य सरकारों और केंद्र दोनों का सहयोग होना जरूरी है। हमारी जन स्वास्थ व्यवस्था कितनी लचर है, यह सर्वविदित है।

पहले भी जनता को चिकित्सा सुविधाएँ पहुँचाने के नाम पर बड़े-बड़े घोटाले हो चुके हैं। वे सीएजी की ऑडिट रिपोर्टों में दर्ज हैं, पर उनपर कोई प्रभावी काररवाई नहीं हुई। इक्के-दुक्के अधिकारियों को भले दंडित किया गया हो, किंतु जो बड़े-बड़े लोग इन घोटालों के पीछे हैं, उनका बालबाँका भी नहीं हुआ। कहने का तात्पर्य है कि जब आयुष जैसी बड़ी योजना चालू होगी तो और भी सावधानी रखनी होगी। पिछले अनुभव से आगे के लिए कुछ तो नसीहत लेनी है। हर सुधार न्यायपालिका करेगी, यह अव्यावहारिक है। यह केवल एक उदाहरण मात्र है। सर्वत्र सतर्कता अनिवार्य है। जनता के अभावों और आशाओं की पूर्ति स्वतंत्रता संग्राम का आश्वासन एक विरासत है, जिसे नेतृत्व को पूरा करना है। ये चार कसौटियाँ—नागरिक अधिकारों को देश की एकता और आपसी सौहार्द, तीसरी नेतृत्व और जनता जनार्दन का पारस्परिक विश्वास, और चौथी स्वतंत्रता-सम्मान की आशाओं व आश्वासन की ईमानदारी तथा बिना किसी भेदभाव के पूर्ति, यही निश्चित करेंगी लोकतंत्र का भविष्य। यह एक बड़ी चुनौती है, जिसके प्रति जनता एवं संपूर्ण राजनैतिक और संवैधानिक व्यवस्था को जागरूक रहना होगा।

## भ्रष्टाचार और हमारी शासन व्यवस्था

पिछले दिनों एक पुस्तक 'Gods of Corruption' हमारे देखने में आई। प्रकाशक हैं, मानस पब्लिकेशंस, नई दिल्ली। पुस्तक उत्तर प्रदेश काडर की एक सेनानिवृत्त IAS अधिकारी श्रीमती प्रमिला शंकर की है। १९७६ में उन्होंने आईएएस की सेवा प्रारंभ की। उनके पति भी उत्तर प्रदेश में आईएएस के अधिकारी थे। पुस्तक उत्सुकतावश पढ़ गए। उसमें चर्चित बहुत से अधिकारी हमारे प्रशिक्षु या प्रोबेशनर मसूरी अकादमी में रहे थे और कई ऐसे हैं, जो राज्य और भारत सरकार में उच्च पदों पर प्रतिष्ठित हुए। हम उन सबसे परिचित हैं। पुस्तक में प्रमिला शंकर ने अपने सेवा काल के अनुभवों को खुलकर रेखांकित किया है। पुस्तक पढ़कर मन खिन्न हुआ। सेवाकाल में उनके अनुभव शुरू से बहुत कटु रहे। उनके अनुसार सेवाकाल में तभी सफलता मिल सकती है, जब कोई चाटुकार हो, अपने वरिष्ठ अधिकारियों की हाँ में हाँ मिलाए। उन्होंने उच्चाधिकारियों के नाम लिए हैं, कुछ को बेईमान कहा है, एक को जातिवादी और अपनी जाति के अतिरिक्त दूसरी जातिवालों का विद्रोही। वरिष्ठ अधिकारी अपना दोष अपने जूनियर अधिकारियों पर थोपते हैं। बड़े यहाँ तक कि मुख्य सचिव उनकी बात सुनने को तैयार नहीं हैं। उन्होंने नाम लेकर यहाँ तक लिखा है कि एक मुख्य सचिव ने अपनी बात को रखने के लिए न्यायपालिका के अंग का दुरुपयोग किया। कानुपर जहाँ से उन्होंने अपनी सेवा प्रारंभ की, वहाँ उन्होंने देखा कि किस प्रकार कठिन परिस्थिति में उच्च अधिकारी बच निकलते हैं और कनिष्ठ अधिकारियों को फँसाने की कोशिश करते हैं। ३६ साल के अपने सेवाकाल में अनेक पदों पर रहीं, किंतु जल्दी-जल्दी स्थानांतरण होते रहे, क्योंकि उनके अनुसार वे हाँ में हाँ नहीं मिलाती हैं या उनके अनियमित कार्यों में साझेदार नहीं होती हैं। उच्चाधिकारी भ्रष्ट अधिकारियों को बचाने में तरह-तरह के हथकंडे अपनाते हैं। भ्रष्ट राजनेताओं और भ्रष्ट अधिकारियों की साँठगाँठ का भी जिक्र है। वे नाम

लेकर चिह्नित करती हैं। मुख्यमंत्री मायावती ने एक बार उन्हें निलंबित भी किया था। एक तरह से पूरी पुस्तक उनकी अपनी सर्विस के अनुभव और उनके अनुसार अध:पतन की कहानी है। पुस्तक दो भागों में है। दूसरे भाग में उन्होंने निष्कर्ष रूप में लिखा है कि उन्होंने सेवाकाल में क्या सीखा तथा कुछ आज की समस्याओं पर अपने विचार व्यक्त किए हैं। हम न लेखिका को जानते हैं और न उन अधिकारियों की प्रतिक्रिया से परिचित हैं, जिनकी प्रमिला शंकर ने नाम लेकर कटुतम आलोचना की है।

पुस्तक के अवलोकन से हमें लगा कि प्रारंभिक सेवा काल में अधिकारियों को ऐसे जिलों में रखना चाहिए, जहाँ के अधिकारी उनके प्रशिक्षण में दिलचस्पी लें, उनकी कठिनाइयों को समझें, प्रशासनिक वातावरण का उनको सही परिचय दें, उनके व्यवहार और कार्यप्रणाली में उचित मार्गदर्शन दें, ताकि कालांतर में वे अच्छे और संतुलित अधिकारी बन सकें। पहले प्रशुक्षिओं की फील्ड ट्रेनिंग पर काफी ध्यान दिया जाता था, शायद अब इस विषय में कोताही बरती जा रही है। संवेदनशील अच्छे अधिकारी, जिनके जीवन-मूल्य सही हैं, वे ही भविष्य के लिए अच्छे अधिकारियों का निर्माण कर सकते हैं। यह अत्यावश्यक है। आज भ्रष्ट आईएएस अधिकारियों की काफी चर्चा है। नोएडा में रहे एक निवर्तमान आई.ए.एस. अधिकारी के कारनामे प्रकाश में आए हैं। सरकार योजनाओं के लिए कौन सी भूमिग्रहण करेगी, इसकी जानकारी वे अपने नाते-रिश्तेदारो को देते, कम मूल्य पर वह जमीन खरीदी जाती और फिर उसे भूमि अधिग्रहण के अंतर्गत ऊँची कीमत मिलती। इस तरह उन्होंने और उनके सहयोगियों ने करोड़ों रुपए कमाए।

उन्होंने गाजियाबाद में भी यही काम किया। मामला खुलने पर वे गायब हो गए, मध्य प्रदेश में एक प्रसिद्ध देवी के मंदिर में पकड़े गए। शायद उन्हें आशा थी कि उनकी आराध्य देवी उनके आपराधिक कार्यों को अपने चमत्कार से संरक्षण प्रदान करेगी! दिल्ली में सी.बी.आई. ने पब्लिक सर्विसेज ऑफिसर्स इंस्टीट्यूट (P.S.O.I.) में एक जाँच या सर्च के दौरान पाया कि वहाँ के कैटरर राकेश तिवारी की अलमारी में ३.६ करोड़ नकदी, २० रोलेक्स घड़ियाँ, १६ करोड़ के जेवरात और कई आई.ए.एस. अधिकारियों के व्यक्तिगत दस्तावेज मिले। दो अधिकारी, जिनकी जाँच सी.बी.आई. कर रही है, उनमें से एक के विरुद्ध २००५ में सरकार ने मुकदमा दर्ज करने की स्वीकृति नहीं दी थी। एक आई.ए.एस. अधिकारी, जिसने समय से पूर्व ही सरकारी सेवा से निवृत्ति प्राप्त कर ली थी, उसके जायदाद के कागज भी वहाँ मिले। एक अधिकारी इस समय एक मंत्रालय में अतिरिक्त सचिव के पद पर नियुक्त है। विडंबना यह है कि सी.बी.आई. अपने पाँच अधिकारियों के खिलाफ भी जाँच कर रही है। उनकी इस मामले में तथाकथित भूमिका पर शक है कि ये अधिकारी, जिनके विरुद्ध आपराधिक मामला है, उन्हें जाँच की सूचना दे रहे थे और अपने स्वार्थपूर्ति के लिए मामले को रफा-दफा करने की कोशिश कर रहे थे।

अनेक कठिनाइयों और कड़े विरोध के बीच सरदार पटेल ने बड़ी आशाओं के साथ अखिल भारतीय सेवाओं की योजना को संविधान सभा में स्वीकार कराया था। उनसे एक आदर्श आचरण की अपेक्षा की थी। यदि आई.ए.एस. और आई.पी.एस. अधिकारी ही अपने वांछनीय व्यवहार से विलग हो जाएँ, तो उनके मातहत कर्मचारियों का क्या हाल होगा। गंगाजी प्रदूषित हो जाती हैं तो फिर आगे स्वच्छ गंगा कहा से मिलेगी। न्यायालय के आदेश से सी.बी.आई. के अध्यक्ष रहे एक आई. पी.एस. अधिकारी जाँच के घेरे में हैं। एक अन्य अध्यक्ष रहे आई. पी.एस. अधिकारी, जो बाद को सूपीएसी के सदस्य हो गए, को इस्तीफा देना पड़ा कि उनके एक दागी उद्योगपति से कुछ व्यापारिक संबंध थे, और उनकी जाँच हो रही है। एक बाह्य खुफिया एजेंसी में रह चुके अध्यक्ष आई.पी.एस. अधिकारी के विरुद्ध संस्थान के गुप्त फंड के दुरुपयोग का और आय से अधिक जायदाद बनाने का शीर्ष न्यायालय में शिकायती मामला है, सच्चाई क्या है। यह न्यायालय तय करेगा, पर इन सबका जनमानस पर क्या असर होता है, यह विचारणीय है। अतएव यह प्रसंग दुखदायी है। इस प्रकार की सब संस्थाओं से देश की सुरक्षा और सुशासन की बहुत आशाएँ हैं। हर राज्य में इस तरह के मामले हैं। यह तो कुछ नए उदाहरण हैं। अपनी अनुमानित आय से अधिक खर्च करनेवालों के कई मामले न्यायालय में लटके हुए हैं। यही एक कारण है कि शासन की साख गिरती जा रही है। वह जनता का विश्वास खो रही है। इसी कारण जनता का सहयोग नहीं मिलता है। जनता का कहना है कि जब बड़े-बड़े अधिकारियों का यह हाल है तो छुटभैयों के बारे में क्या कहा जाए! आवश्यकता है कि ऐसे मामलों का निस्तारण न्यायिक तौर पर शीघ्रता से हो, तभी हम सुशासन की आशा कर सकते हैं।

स्वभाव से आशावादी हम नकारात्मक और निराशावाद से हम इस चर्चा को नहीं समाप्त करना चाहेंगे। संतोष की बात तो यह है कि इन सबके बावजूद ऐसे सैकड़ों अधिकारी और कर्मचारी हैं, जो चुपचाप ईमानदारी से अपने दायित्वों का निर्वाहन कर रहे हैं। अंग्रेजी भाषा के प्रथम कोष निर्माता और विद्वान् रचनाकार डॉ. जानसन से उनके शागिर्द, प्रशंसक और जीवनीकार बासवेल ने पूछा कि क्या नर्क में भी अच्छे लोग हैं। डॉ. जानसन ने बड़े आत्मविश्वास के साथ उत्तर दिया कि हाँ, वहाँ भी अच्छे लोग हैं। फिर विस्मित बासवेल ने प्रश्न किया कि किस आधार पर आप ऐसा कह रहे हैं। उनका तत्काल उत्तर था—तभी तो आज भी नर्क स्थित है। अस्तित्व में है।

□

इस समय केरल में बाढ़ के कारण प्रलय जैसी स्थिति है। केरलवासी, वहाँ की राज्य सरकार तथा केंद्रीय सरकार स्थिति का सामना करने की भरसक कोशिश कर रहे हैं। जल, थल, नभ सेनाओं के जवान राहत कार्य में लगे हैं। प्रकृति का ऐसा कोप केरल ने पिछले सौ वर्षों में नहीं देखा है। धन-जन की हानि से सभी दु:खी हैं। पूरे देश की सहानुभूमि केरल के भाई-बहनों के साथ है। प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि जो भी सहायता (वित्तीय अथवा अन्य तरह की, की जा सकती है, करने का प्रयास करें। केरल की इस त्रासदी, संकट में पूरा देश केरल के भाई-बहनों के साथ है।

त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी

**(त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी)**

# अपनी बात

अटलबिहारी वाजपेयी

कविता मुझे घुट्टी में मिली थी। मेरे पितामह संस्कृत भाषा तथा साहित्य के अच्छे विद्वान् थे। घर की एक बैठक पुरानी पोथियों से भरी हुई थी। वे जहाँ जाते, वहाँ से अच्छी-अच्छी पुस्तकें ले आते थे। ज्योतिषी का उनका गहरा अध्ययन था। दूर-दूर से लोग उन्हें जन्मपत्रियाँ दिखाने के लिए लाते थे।

एक बार गाँव का एक लड़का परिवार से रूठकर घर छोड़कर चला गया। कहाँ गया, किसी को पता नहीं था? उसके पिता बेटे की जन्मपत्री लेकर पितामह के पास आ गए। बाबा ने एक मंत्र कागज पर लिखकर दिया। यह हिदायत भी दी कि मंत्र उसके किसी कपड़े में बाँध दिया जाए। दो-तीन दिन बाद वह लड़का जब सचमुच वापस आ गया तो गाँव में बड़ी धूम मची। लेकिन पितामह का ध्यान ज्योतिष से अधिक साहित्य में था।

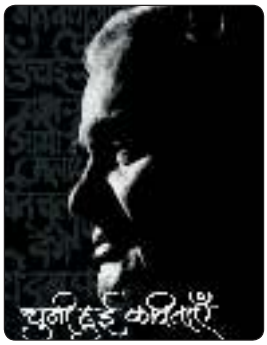


पिताजी श्री कृष्ण बिहारी वाजपेयी बटेश्वर से आकर ग्वालियर में बस गए थे। उन्होंने बदलते हुए वक्त को देखकर अंग्रेजी का पठन प्रारंभ किया। खड़ी बोली के साथ ब्रजभाषा और अवधी पर उनका अच्छा अधिकार था। ब्रजभाषा में लिखी उनकी कविताएँ और सवैये काफी पसंद किए जाते थे। बटेश्वर से ग्वालियर पहुँचकर साहित्य के लिए बड़ा क्षेत्र प्राप्त हुआ। रियासत के मुखपत्र 'जियाजी प्रताप' में उनकी कविताएँ नियमित रूप से छपती थीं।

जब यह तय हुआ कि ग्वालियर रियासत का अपना गीत होना चाहिए तो यह काम पिताजी को सौंपा गया। गीत ऐसा होना चाहिए था, जो सरलता से गाया जा सके। उसमें सिंधिया परिवार और ग्वालियर रियासत की कीर्ति का गान जरूरी था। पिताजी द्वारा लिखा गीत पूरी रियासत में प्रचलित था। उसका नियमित रूप से गायन होता था। उसकी दो पंक्तियाँ मुझे अभी तक याद हैं—

*हम देश, विदेश कहीं भी हों, पर होगा तेरा ध्यान सदा।*
*तेरा ही पुत्र कहाने में होगा हमको अभिमान सदा॥*

पिताजी ने और भी कविताएँ लिखी थीं, किंतु उनके प्रकाशन की ओर ध्यान नहीं दिया। वे इधर-उधर बिखर गईं।

पिताजी की हिंदी और अंग्रेजी के साथ उर्दू पर भी अच्छी पकड़ थी। उन दिनों बच्चों के लिए उर्दू अनिवार्य थी। रियासत में प्रतिवर्ष होनेवाले गणेशोत्सव में पिताजी के भाषण नियमित रूप से होते थे। पिताजी की विद्वत्ता का आकलन इसी से किया जा सकता है कि वे स्वयं मैट्रिक पास होते हुए भी दसवीं कक्षा को पढ़ाते थे। बाद में उन्होंने बी.ए. की परीक्षा पास की। एम.ए. का ज्ञान भी प्राप्त किया। स्कूलों के इंस्पेक्टर के रूप में रिटायर होने के बाद कानून का अध्ययन करने की ठानी।

२५ दिसंबर! पता नहीं कि उस दिन मेरा जन्म क्यों हुआ! बाद में, बड़ा होने पर, मुझे यह बताया गया कि २५ दिसंबर ईसामसीह का जन्मदिन है, इसलिए बड़े दिन के रूप में मनाया जाता है। मुझे यह भी बताया गया कि जब मैं पैदा हुआ, तब पड़ोस के गिरजाघर में ईसामसीह के जन्मदिन का त्योहार मनाया जा रहा था। कैरोल गाए जा रहे थे। उल्लास का वातावरण था। बच्चों में मिठाई बाँटी जा रही थी।

बाद में मुझे यह भी पता लगा कि बड़ा दिन हिंदू धर्म के उन्नायक पं. मदन मोहन मालवीय का भी जन्मदिन है। मुझे जीवन भर इस बात का अभिमान रहा कि मेरा जन्म ऐसे महापुरुषों के जन्म के दिन ही हुआ।

मुझे यह बात अभी तक अच्छी तरह से याद है कि मेरे पिता श्री कृष्ण बिहारी वाजपेयी मेरी अंगुली पकड़कर मुझे आर्य समाज के वार्षिकोत्सव में ले जाते थे। उपदेशकों के सस्वर भजन मुझे अच्छे लगते थे। आर्य विद्वानों के उपदेश मुझे प्रभावित करने लगे थे। भजनों और उपदेशों के साथ-साथ स्वतंत्रता-संग्राम की बातें भी सुनने को मिलती थीं।

क्या यह एक संयोग मात्र था? क्या इसके पीछे कोई विधान था?

घर में साहित्य-प्रेम का वातावरण था। मैंने भी तुकबंदी शुरू कर दी। मुझे याद है कि मेरी पहली कविता 'ताजमहल' कुछ इस तरह थी—

*ताजमहल, यह ताजमहल,*
*कैसा सुंदर अति सुंदरतर।*

किंतु ताजमहल पर लिखी गई यह कविता केवल उसके सौंदर्य तक ही सीमित नहीं थी। कविता उन कारीगरों की व्यथा तक पहुँच

गई थी, जिन्होंने पसीना बहाकर, जीवन खपाकर ताजमहल का निर्माण किया था। कविता की अंतिम पंक्तियाँ मुझे अभी तक याद हैं—

*जब रोया हिंदुस्तान सकल,*
*तब बन पाया यह ताजमहल।*

निश्चय ही उन दिनों मुझे आर्य विद्वानों के साथ-साथ कम्युनिस्ट क्रांति प्रभावित करने लगी थी। आज जब भी मैं उन दिनों की बात सोचता हूँ तो मेरे अधकचरे मन की तसवीर मेरे सामने खड़ी हो जाती है।

मुख्य रूप से मैंने देशभक्ति से परिपूर्ण कविताएँ लिखी थीं। कवि-सम्मेलनों में उनकी माँग थी। लोग उन्हें पसंद करते थे। वीर रस की कविताएँ पसंद की जाती थीं।

कविता के साथ उन दिनों नौजवानों में वक्तृत्व कला की प्रतियोगिताएँ हुआ करती थीं। ओजस्वी कवि श्रोताओं द्वारा पसंद किए जाते थे। आजादी के आंदोलन से ऐसे नौजवानों को प्रेरणा मिलती थी।

यह उन दिनों की बात है, जब मैं विक्टोरिया कॉलेज, ग्वालियर में पढ़ा करता था। पढ़ाई-लिखाई के साथ साहित्य में भी मेरी रुचि थी। मैं कॉलेज में छात्र संघ का पहले प्रधानमंत्री और फिर उपाध्यक्ष चुना गया था। अध्यक्ष उन दिनों कोई प्रोफेसर हुआ करते थे। छात्र संघ की जिम्मेदारी थी कि वह वार्षिकोत्सव का आयोजन करे।

मुझे याद है कि छात्र संघ ने एक साल कॉलेज में कवि-सम्मेलन करने का फैसला किया। ग्वालियर से बाहर के कवि भी आमंत्रित किए गए थे। यह तय हुआ कि कॉलेज के वार्षिक समारोह में महाकवि निरालाजी को आमंत्रित किया जाए। उन दिनों श्रीमती महादेवी वर्मा तथा श्री सुमित्रानंदन पंत की बड़ी धूम थी। निरालाजी को आमंत्रित करने का काम प्रो. शिवमंगल सिंह 'सुमन' को सौंपा गया। कॉलेज के लिए यह बड़े गौरव का दिन था।

जब हम निरालाजी को रेलवे स्टेशन से उनके ठहरने की जगह ले जा रहे थे, तब एक ऐसी घटना हुई, जो जीवन भर प्रभावित करती रही। हुआ यह कि जब ताँगा उस सड़क से निकला, जिसपर महारानी लक्ष्मीबाई स्मृति चिह्न बना हुआ था, तो निरालाजी ने उस वीरांगना को नमन करने के लिए ताँगा थोड़ी देर रुकवा लिया। उनकी नजर लक्ष्मीबाई के स्मारक के निकट बैठी एक निर्धन महिला पर गई, वह महिला सर्दी से स्वयं को बचाने के प्रयास में लगी थी। जैसे ही निरालाजी की नजर उस महिला के ऊपर गई, तो महाकवि ने अपना कंबल उतारकर उस महिला को ओढ़ा दिया। हम सब यह देखकर दंग रह गए।

निरालाजी के महान् व्यक्तित्व की एक छोटी सी झलक पाकर हम लोग भाव-विभोर हो गए। घर पहुँचने पर हमने निरालाजी के लिए अलग से एक कंबल का प्रबंध किया। लेकिन निरालाजी द्वारा सर्दी से ठिठुरती हुई महिला को कंबल देने की घटना हमारे मानस-पटल पर सदैव के लिए अंकित हो गई।

विक्टोरिया कॉलेज से संबंधित एक और घटना मुझे याद आ रही है। छात्र संघ की ओर से रात्रि में कवि-सम्मेलन का आयोजन था। प्रतिवर्ष की भाँति उस साल भी स्थानीय कवियों के साथ बाहर से कवियों को भी निमंत्रित किया गया था। विक्टोरिया कॉलेज के प्रिंसिपल प्रो. पियर्स सम्मेलन देखने के लिए स्वयं आए थे। हॉल खचाखच भरा था, लेकिन कुछ कवियों को मंच पर आने में विलंब हो रहा था। वे अवसर के अनुरूप सजने-धजने में लगे हुए थे।

जब ज्यादा देर होने लगी और छात्रों के धैर्य का बाँध टूटने लगा तो मैंने एक साहसपूर्ण निर्णय लिया। मैं मंच पर चला गया और घोषणा कर दी कि कुछ कवियों और शायरों के आने में देर हो रही है, श्रोता अधिक विलंब के लिए तैयार नहीं हैं, इसलिए कविता-पाठ स्थगित किया जाता है। श्रोता अपने घरों के लिए प्रस्थान करें। पूरे सभा-भवन में सन्नाटा छा गया। छात्र कविता के शौकीन थे और कवियों को सुनना चाहते थे। लेकिन कुछ कवियों द्वार मंच पर आने में अत्यधिक विलंब किए जाने के कारण छात्र बिगड़ गए। तब तक कुछ कवि मंच पर पहुँच चुके थे। वे नौजवानों से अपील कर रहे थे कि वे अब कविता सुनकर ही जाएँ, किंतु वे नहीं माने। मेरे यह कहते ही कि अब सम्मेलन भंग किया जाता है; सब छात्र सदन के बाहर चले गए। बाद में फिर जब कभी सम्मेलन होते थे तो कवि समय से आने का ध्यान रखने लगे थे।

मैंने विक्टोरिया कॉलेज, ग्वालियर से स्नातक की परीक्षा पास की थी। आगे पढ़ने का इरादा जरूर था, लेकिन साधनों का अभाव था। ग्वालियर की रियासत मेधावी छात्रों को छात्रवृत्ति दिया करती थी। इसमें दक्षिण से आए क्षत्रिय छात्र अधिक होते थे।

मैंने बी.ए. पास करते-करते अच्छा नाम कमा लिया था। मेरे भाषण शौक से सुने जाते तथा मेरी कविताएँ भी पसंद की जाती थीं। ग्वालियर रियासत में मेरा नाम हो गया था। जब उच्च शिक्षा के छात्रों का चयन होने लगा तो मुझे भी उसमें मौका मिल गया।

ग्वालियर के छात्र आगरा विश्वविद्यालय से संबद्ध होने के कारण कानपुर जाते थे। कानपुर में डी.ए.वी. कॉलेज और सनातन धर्म कॉलेज, दोनों का बड़ा नाम था। मैंने डी.ए.वी. कॉलेज में प्रवेश लिया। कॉलेज का भवन काफी विशाल था। छात्रावास में उसके छात्रों के रहने की व्यवस्था सरलता से हो जाती थी। मैंने छात्रावास में रहने का निश्चय किया।

पिताजी ने जब यह सुना तो उनके मन में उच्च शिक्षा प्राप्त करने की जो इच्छा थी, वह फिर जाग्रत् हो गई। उन्होंने ग्वालियर छोड़कर कानपुर के डी.ए.वी. कॉलेज में पढ़ने का फैसला किया। उनके लिए कॉलेज में भरती होना और कानून की पढ़ाई करना बड़ी चर्चा का विषय बना। 'पिता-पुत्र साथ-साथ' इस शीर्षक से अखबारों में खबरें छपीं।

डी.ए.वी. कॉलेज छात्रावास के वे दिन मुझे अभी भी अच्छी तरह याद हैं। पिता और पुत्र एक ही कमरे में रहते थे। पिताजी को हाथ अपने का खाना पसंद था। इससे हमें भी अच्छा खाना मिल जाता था। रोज रात को सोने से पहले दूध निश्चित रूप से मिला करता था। अन्य छात्र दूध के प्रति प्रेम देखकर उसकी चर्चा किया करते थे।

दुग्धपान के संबंध में एक घटना स्मरणीय है। एक रात पं. दीनदयाल उपाध्याय भ्रमण करते हुए मेरे घर ग्वालियर पहुँच गए। मैं घर में नहीं था। पिताजी ने उनका स्वागत-सत्कार किया। रात को जब सोने का वक्त हुआ तो उपाध्यायजी के लिए पिताजी दूध से भरा एक

गिलास लेकर पहुँचे। उपाध्यायजी आश्चर्य में पड़ गए। उनको रात में दूध पीने की आदत नहीं थी। पिताजी रात में बिना दूध पिए और पिलाए सो नहीं सकते थे। जिस प्रेम से पिताजी ने अतिथि को दुग्धपान कराया, उससे यह छाटी सी घटना दूर-दूर तक फैल गई। जो रात में दूध पीना नहीं चाहते थे, उन्होंने ग्वालियर में मेरे घर पर रुकना बंद कर दिया।

दूध से संबंधित एक और घटना है, जो श्री यज्ञदत्त शर्मा से जुड़ी हुई है। उन्हें दूध पीने का बड़ा शौक था। प्रवास में जहाँ जाते, दूध की फरमाइश किए बिना नहीं रह सकते थे। लेकिन सब जगह दूध का मिलना मुश्किल था। दक्षिण भारत में प्रवास के दौरान एक घर में रात को सोने से पहले एक छोटे से गिलास में दूध पेश किया गया। यज्ञदत्तजी को पूरे पंजाबी गिलास की आदत थी। संकोचवश कुछ बोले नहीं। सुबह पानी बड़े गिलास में आया तो कुछ आशा जगी, शायद रात में दूध भी बड़े गिलास में आएगा, लेकिन दूध फिर उसी छोटे गिलास में लाया गया। सुबह फिर पानी से भरे बड़े गिलास को देखते ही करबद्ध होकर उसको प्रणाम किया और पूछा—''भगवान्, आप रात में कहाँ रहते हो?'' सरा परिवार हँसने लगा। श्री यज्ञदत्त शर्मा का दुग्ध-प्रेम अखिल भारती स्वरूप धारण कर बैठा था। इस तरह के और भी विनोद व हास्य के प्रसंग चलते रहते थे।

आज बरसों बाद ऐसी गुदगुदानेवाली घटनाएँ स्मृति-पटल पर उभरकर खड़ी हो जाती हैं।

डी.ए.वी. कॉलेज, कानपुर से एम.ए. करने के पश्चात् मेरे सामने कई रास्ते खुले थे। मैं कानून की शिक्षा पूर्ण कर वकालत कर सकता था। ग्वालियर राज्य मुझे कॉलेज में प्राध्यापक का दायित्व देने के लिए तैयार था। तीसरा रास्ता यह था कि मैं पत्रकारिता के क्षेत्र को अपनाता और कलम के माध्यम से राष्ट्र की सेवा करता। ग्वालियर में प्राध्यापक का पद स्वीकार करने में एक कठिनाई थी। मेरी एम.ए. की पढ़ाई पर राज्य ने जो खर्च किया था, वह धन मुझे लौटाना पड़ता।

यहाँ भविष्य का एक चौथा रास्ता खुलता हुआ दिखाई दिया। मैं राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पत्रकारिता जगत् में प्रवेश करना चाहता था। एक नया साप्ताहिक पत्र निकालने की उनकी योजना थी। संघ ने मुझे अपने पत्र में काम करने के लिए बुलाया।

मुझे पत्रकारिता का कोई अनुभव नहीं था। लखनऊ जाकर संपादन का दायित्व सँभालने की पूरी तैयारी भी नहीं थी। लेकिन यह कठिनाई भी हल हो गई। श्री भाऊराव देवरस ने पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया। सहायता के लिए पं. दीनदयाल उपाध्याय तैयार थे। रीवा के श्री राजीव लोचन अग्निहोत्री साहित्य में रुचि रखते थे। उन्होंने बड़ी खुशी से लखनऊ आकर नए साप्ताहिक पत्र का भार सँभालने के लिए तैयार हो गए। हम दोनों में से किसी को पत्रकारिता का अनुभव नहीं था। किसी विषय पर लेख लिखना सरल है, किंतु किसी नए पत्र का संपादन का भार सँभालना एक चुनौती भरा दायित्व था। प्रूफ पढ़ने से लेकर संपादन तक की जिम्मेदारी उठानी थी।

'राष्ट्रधर्म' के प्रथम अंक का साहित्य जगत् में स्वागत हुआ। हम पत्र के अच्छे स्तर को कायम रखने के लिए सजग थे। 'राष्ट्रधर्म' ने शीघ्र ही एक अच्छे साप्ताहिक के रूप में स्थान ग्रहण कर लिया। पत्र की सफलता देखकर एवं एक और साप्ताहिक पत्र की आवश्यकता को देखकर राष्ट्रधर्म प्रकाशन मंडल ने साप्ताहिक। 'पाञ्चजन्य' ने भी पत्रकारिता जगत् में अपना स्थान बना लिया। 'राष्ट्रधर्म' विचार-प्रधान था। 'पाञ्चजन्य' ने प्रचार का मोरचा सँभाला। ऐसे पत्रों की आवश्यकता थी, जो राष्ट्रवाद के पोषक हों और जो समाज-जीवन के सभी क्षेत्रों में अपना स्थान बना लें।

'राष्ट्रधर्म', 'पाञ्चजन्य'—दोनों पत्रों को कड़ी आलोचना का सामना करना पड़ा था। जो वामपंथी थे, वे हमें सांप्रदायिकता की श्रेणी में बिठाने के लिए तुले हुए थे। सांप्रदायिकता क्या है? राष्ट्रीयता का सही मापदंड क्या हो? इन प्रश्नों पर विवाद छिड़ गया। दोनों पत्रों ने अपनी प्रतिष्ठा को बनाए रखा। दोनों पत्र प्रखर राष्ट्रवाद के संबल बन गए।

सरकार नियमों का एक ढंग से पालन कराती थी कि पत्रों का छपना ही संभव न रहे। जिन दिनों मैं इन पत्रों का संपादन कर राह था, उनमें प्रेस की स्वतंत्रता पर ऊपर से देखने में कोई अंकुश नहीं था, लेकिन जिन प्रेसों में वे छापे जाते थे, उन पर ही ताला जड़ दिया गया। नतीजा यह हुआ कि एक पत्र के बंद होने पर दूसरा पत्र निकालने की होड़ लगी और सरकार के साथ यह आँख-मिचौली का खेल चलता रहा। इस सबका परिणाम यह हुआ कि पत्रकारिता के प्रति प्रतिबद्ध लोग राजनीति में आने के लिए विवश हुए। इस तरह छलावे की नीति से सरकार क्या प्राप्त करने में सफल हुई, इसकी मुझे अभी तक जानकारी नहीं मिली है।

एक पत्रकार के नाते मेरा यह अनुभव है कि सरकार पत्रों का गला घोटने का मन बना ले तो उसके तरकस में ऐसे कई तीर आसानी से मिल जाएँगे, जो 'साँप मारे और लाठी भी न टूटे' की कहावत को चरितार्थ करे।

उस समय की परिस्थितियों में एक नया राष्ट्रवादी दल गठित करने का फैसला हुआ। यह एक लंबी कहानी है। नेहरू मंत्रिमंडल से त्याग-पत्र देने के बाद डॉ. श्यामा प्रसाद मुकर्जी किसी ऐसे मंच की तलाश में थे, जो कांग्रेस सरकार की बढ़ती हुई तानाशाही पर अंकुश लगाने के लिए तैयार हो और जिसके पीछे जनता सहज व स्वाभाविक रूप से खड़ी हो जाए।

डॉ. मुकर्जी ने सभी मंचों को एक साथ लाने का प्रयास किया। इसमें उन्हें सफलता भी मिली। उनके दलों को अपनी-अपनी सीमा-रेखाएँ कायम रखते हुए एक सामान्य कार्यक्रम के आधर पर काम करने में कठिनाई नहीं थी।

देश की राजनीति कितने भागों में बँटी हुई है, इसकी थोड़ी अनुभूति पहले से हो रही थी; किंतु यह देखकर आश्चर्य हुआ कि जो दल देश-निर्माण और सांस्कृतिक निष्ठा से परिचालित थे, उनके लिए भी एक मंच पर आना, बड़ा मुश्किल काम था। टुकड़ों में बँटी हुई राजनीति एक संगठित शक्ति की अनुभूमि कैसे देगी, यह सवाल सामने खड़ा था। डॉ. मुकर्जी के नेतृत्व में 'नेशनल डेमोक्रेटिक फ्रंट' का निर्माण इस दिशा में एक ठोस कदम था।

पाँच दशकों से अधिक की राजनीतिक-यात्रा के बाद भी देश की बँटी हुई राजनीति को जोड़ने की आवश्यकता स्पष्ट दिखाई देती है, जो केवल सत्ता के लिए नहीं, अपितु विधटनकारी शक्तियों से लोहा लेकर राष्ट्रीय हितों की रक्षा करने के काम में आगे बढ़ सके, उनके लिए ऐसे मंच की सार्थकता सदैव रहेगी।

## आओ फिर से दीया जलाएँ

भरी दुपहरी में अँधियारा,
सूरज परछाईं से हारा,
अंतरतम का नेह निचोड़ें, बुझी हुई बाती सुलगाएँ।
आओ फिर से दीया जलाएँ।

हम पड़ाव को समझे मंजिल,
लक्ष्य हुआ आँखों से ओझल,
वर्तमान के मोहजाल में आनेवाला कल न भुलाएँ।
आओ फिर से दीया जलाएँ।

आहुति बाकी, यज्ञ अधूरा,
अपनों के विघ्नों ने घेरा,
अंतिम जय का वज्र बनाने, नव दधीचि हड्डियाँ गलाएँ।
आओ फिर से दीया जलाएँ।

## अमर आग है

कोटि-कोटि आकुल हृदयों में
सुलग रही है जो चिनगारी,
अमर आग है, अमर आग है।

उत्तर दिशा में अजित दुर्ग-सा
जागरूक प्रहरी युग-युग का,
मूर्तिमंत स्थैर्य, धीरता की प्रतिभा-सा
अटल अडिग नगपति विशाल है।

नभ की छाती को छूता-सा
कीर्ति-पुंज सा,
दिव्य दीपकों के प्रकाश में—
झिलमिल-झिलमिल—
ज्योतित माँ का पूज्य भाल है।

कौन कह रहा उसे हिमालय?
वह तो हिमावृत्त ज्वालागिरि,
अणु-अणु, कण-कण, गह्वर कंदर
गुंजित-ध्वनित कर रहा अब तक
डिम-डिम डमरु का भैरव स्वर।
गौरीशंकर के गिरि-गह्वर
शैल-शिखर, निर्झर, वन-उपवन
तरु तृण-दीपित।

शंकर के तीसरे नयन की—
प्रलय-विह्नि जगमग ज्योतित।
जिसको छूकर
क्षणभर ही में
काम रह गया था मुट्ठी भर।

यही आग ले प्रतिदिन प्राची
अपना अरुण सुहाग सजाती,
और प्रखर दिनकर की
कंचन काया,
इसी आग में पलकर
निशि-निशि, दिन-दिन
जल-जल, प्रतिपल
सृष्टि-प्रलय-पर्यंत समावृत
जगती को रास्ता दिखाती।

यही आग ले हिंद महासागर की
छाती है धधकाती।
लहर-लहर प्रज्वाल लपट बन
पूर्व-पश्चिमी घाटों को छू,
सदियों की हतभाग्य निशा में
सोए शिलाखंड सुलगाती।

नयन-नयन में यही आग ले
कंठ-कंठ में प्रलय राग ले,
अब तक हिंदुस्तान जिया हे।

इसी आग की दिव्य विभा में,
सप्त-सिंधु के कल कछार पर,
सुर-सरिता की धवल धार पर
तीर-तटों पर,
पर्णकुटी में, पर्णासन पर
कोटि-कोटि ऋषि-मुनियों ने
दिव्य ज्ञान का सोम पिया था।

जिसका कुछ उच्छिष्ट मात्र
बर्बर पश्चिम ने,
दया दान-सा,
निज जीवन को सफल मानकर,
कर पसारकर,
सिर-आँखों पर धार लिया था।

वेद-वेद के मंत्र-मंत्र में
मंत्र-मंत्र की पंक्ति-पंक्ति में
पंक्ति-पंक्ति के शब्द-शब्द में,
शब्द-शब्द के अक्षर स्वर में,
दिव्य ज्ञान-आलोक प्रदीपित,
सत्यं शिवं सुंदरम् शोभित,
कपिल, कणाद और जैमिनि की
स्वानुभूति का अमर प्रकाशन,
विशद-विवेचन, प्रत्यालोचन,

ब्रह्म, जगत्, माया का दर्शन।
कोटि-कोटि कंठों में गूँजा
जो अतिमंगलमय स्वर्गिक स्वर,
अमर राग है, अमर आग है।
कोटि-कोटि आकुल हृदयों में
सुलग रही है जो चिनगारी
अमर आग है, अमर आग है।

यही आग सरयू के तट पर
दशरथजी के राजमहल में,
धन-समूह में चल चपला सा,
प्रगट हुई प्रज्वलित हुई थी।

दैत्य-दानवों के अधर्म से
पीड़ित पुण्यभूमि का जन-जन,
शंकित मन-मन,
त्रसित विप्र,

आकुल मुनिवर-गण,
बोल रही अधर्म की तूती
दुस्तर हुआ धर्म का पालन।

तब स्वदेश-रक्षार्थ देश का
सोया क्षत्रियत्व जागा था।
राम-रूप में प्रगट हुई यह ज्वाला,
जिसने
असुर जलाए

देश बचाया,
वाल्मीकि ने जिसको गाया।

चकाचौंध दुनिया ने देखी
सीता के सतीत्व की ज्वाला,
विश्व चकित रह गया देखकर
नारी की रक्षा-निमित्त जब
नर क्या वानर ने भी अपना
महाकाल की बलि-वेदी पर,
अगणित होकर
सस्मित हर्षित शीश चढ़ाया।

यही आग प्रज्वलित हुई थी—
यमुना की आकुल आहों से,
अत्याचार-प्रपीड़ित ब्रज के
अश्रु-सिंधु में बड़वानल बन—
कौन सह सका माँ का क्रंदन?

दीन देवकी ने कारा में
सुलगाई थी यही आग, जो
कृष्ण-रूप में फूट पड़ी थी।
जिसको छूकर
माँ के कर की कड़ियाँ,
पग की लड़ियाँ
चट-चट टूट पड़ी थीं।

'पाञ्चजन्य' का भैरव स्वर सुन
पड़प उठा आक्रुद्ध सुदर्शन,
अर्जुन का गांडीव,
भीम की गदा,
धर्म का धर्म डट गया,

अमर भूमि में,
समर भूमि में,
धर्म भूमि में,
कर्म भूमि में,
गूँज उठी गीता की वाणी,
मंगलमय जन-जन कल्याणी।

अपढ़, अजान विश्व ने पाई
शीश झुकाकर एक धरोहर।
कौन दार्शनिक दे पाया है।
अब तक ऐसा जीवन-दर्शन?

कालिंदी के कल कछार पर

कृष्ण-कंठ से गुँजा जो स्वर
अमर राग है, अमर राग है।

कोटि-कोटि आकुल हृदयों में
सुलग रही जो चिनगारी,
अमर आग है, अमर आग है।

## ऊँचाई

ऊँचे पहाड़ पर,
पेड़ नहीं, लगते,
पौधे नहीं उगते,
न घास ही जमती है।

जमती है सिर्फ बर्फ,
जो कफन की तरह सफेद और
मौत की तरह ठंडी होती है।
खेलती, खिलखिलाती नदी,
जिसका रूप धारण कर
अपने भाग्य पर बूँद-बूँद रोती है।

ऐसी ऊँचाई,
जिसका परस,
पानी को पत्थर कर दे,
ऐसी ऊँचाई,
जिसका दरस हीन भाव भर दे,
अभिनंदन की अधिकारी है,

आरोहियों के लिए आमंत्रण है,
उस पर झंडे जा सकते हैं,
किंतु कोई गौरैया,
वहाँ नीड़ नहीं बना सकती,
न कोई थका-माँदा बटोही,
उसकी छाँव में पलभर पलक ही झपका सकता है।

सच्चाई यह है कि
केवल ऊँचाई ही काफी नहीं होती,
सबसे अलग-थलग
परिवेश से पृथक्,
अपनों से कटा-बँटा,
शून्य में अकेला खड़ा होना,
पहाड़ की महानता नहीं,
मजबूरी है।
ऊँचाई और गहराई में
आकाश-पाताल की दूरी है।

जो जितना ऊँचा,
उतना ही एकाकी होता है,
हर भार को स्वयं ही ढोता है,
चेहरे पर मुसकानें चिपका,
मन-ही-मन रोता है।

जरूरी यह है कि
ऊँचाई के साथ विस्तार भी हो,
जिससे मनुष्य
ठूँठ-सा खड़ा न रहे,
औरों से घुले-मिले,
किसी को साथ ले,
किसी के संग चले।

भीड़ में खो जाना,
यादों में डूब जाना,
स्वयं को भूल जाना,

अस्तित्व को अर्थ,
जीवन को सुगंध देता है।

धरती को बौनों की नहीं,
ऊँचे कद के इनसानों की जरूरत है।
इतने ऊँचे कि आसमान को छू लें,
नए नक्षत्रों में प्रतिभा के बीज बो लें,

किंतु इतने ऊँचे भी नहीं,
कि पाँव तले दूब ही न जमे,

कोई काँटा न चुभे,
कोई कली न खिले।

न वसंत हो, न पतझड़,
हो सिर्फ ऊँचाई का अंधड़,
मात्र अकेलेपन का सन्नाटा।

मेरे प्रभु!
मुझे इतनी ऊँचाई कभी मत देना
गैरों को गले न लगा सकूँ
इतनी रूखाई कभी मत देना।

## न दैन्यं न पलायनम्

कर्तव्य के पुनीत पथ को
हमने स्वेद से सींचा है,
कभी-कभी अपने अश्रु और—
प्राणों का अर्घ्य भी दिया है।

किंतु, अपनी ध्येय-यात्रा में—
हम कभी रुके नहीं हैं,
किसी चुनौती के सम्मुख
कभी झुके नहीं हैं।

आज,
जबकि राष्ट्र-जीवन की
समस्त निधियाँ
दाँव पर लगी हैं,
और
एक घनीभूत अँधेरा—
हमारे जीवन के
सारे आलोक को
निगल लेना चाहता है;

हमें ध्येय के लिए
जीने, जूझने और
आवश्यकता पड़ने पर—
मरने के संकल्प को दोहराना है।

आग्नेय परीक्षा की
इस घड़ी में—
आइए, अर्जुन की तरह
उद्घोष करें—
'न दैन्यं न पलायनम्।'

## गीत नया गाता हूँ

टूटे हुए तारों से फूटे वासंती स्वर,
पत्थर की छाती में उग आया नव अंकुर,
झरे सब पीले पात,
कोयल की कुहुक रात,
प्राची में अरुणिमा की रेख देख पाता हूँ।
गीत नया गाता हूँ।

टूटे हुए सपने की सुने कौन सिसकी?
अंतर को चीर व्यथा पलकों पर ठिठकी।
हार नहीं मानूँगा,
रार नहीं ठानूँगा,
काल के कपाल पर लिखता-मिटाता हूँ।
गीत नया गाता हूँ।

## गगन में लहरता है भगवा हमारा

### : एक :

घिरे घोर घन दासता के भयंकर
गँवा बैठे सर्वस्व आपस में लड़कर
बुझे दीप घर-घर
हुआ शून्य अंबर
निराशा निशा ने जो डेरा जमाया
ये जयचंद के द्रोह का दुष्ट फल है
जो अब तक अँधेरा, सबेरा न आया।

मगर घोर तम में
पराजय के गम में
विजय की विभा ले
अँधेरे गगन में
उषा के वसन
दुश्मनों के नयन में
चमकता रहा पूज्य भगवा हमारा।
गगन में लहरता है भगवा हमारा।

### : दो :

भगवा है पद्मिनि के जौहर की ज्वाला,
मिटाती अमावस
लुटाती उजाला
नया एक इतिहास क्या रच न डाला
चिता एक, जलने
हजारों खड़ी थीं।
पुरुष तो मिटे,
नारियाँ सब हवन की
समिधि बन अनल के पगों पर चढ़ी थीं।
मगर जौहरों में,
घिरे कोहरों में
धुएँ के घनों में,
कि बलि के क्षणों में
धधकता रहा पूज्य भगवा हमारा।
गगन में लहरता है भगवा हमारा।
मिटे देवता,

मिट गए शुभ्र मंदिर
लुटी देवियाँ,
लुट गए सब नगर घर
स्वयं फूट की अग्नि में घर जलाकर
पुरस्कार हाथों में लोहे की कड़ियाँ
कपूतों की माता
खड़ी आज भी है
भरे अपनी आँखों में आँसू की लड़ियाँ।

मगर दासता के भयानक भँवर में
पराजय समर में
अंतिम क्षणों तक
शुभाशा बँधाता,
कि इच्छा जगाता
कि सबकुछ लुटाकर ही सबकुछ दिलाने
बुलाता रहा प्राण भगवा हमारा।
गगन में लहरता है भगवा हमारा।

### : तीन :

कभी थे अकेले हुए आज इतने,
नहीं तब डरे तो भला अब डरेंगे?
विरोधों के सागर में
चट्टान हैं हम,
जो टकराएँगे
मौत अपनी मरेंगे।
लिया हाथ में ध्वज कभी न झुकेगा,
कदम बढ़ रहा है कभी न रुकेगा।

न सूरज के सम्मुख अँधेरा टिकेगा,
निडर हैं सभी हम
अमर हैं सभी हम।
कि सर पर हमारे वरद हस्त करता,
गगन में लहरता है भगवा हमारा।

# श्री शिवपूजन सहाय

● **श्रीनारायण चतुर्वेदी**

बीसवीं शती के प्रथम चरण में जिन हिंदी साहित्य-प्रेमी महानुभावों का आविर्भाव हुआ, उनमें कवियों और उपन्यास लेखकों का विवरण तो हिंदी साहित्य के इतिहास ग्रंथों में मिलता है, किंतु उस समय के समर्पित पत्रकारों और हिंदी भाषा तथा साहित्य के विविध पक्षों से जुड़े लेखकों का वर्णन उपलब्ध नहीं है। यह आश्चर्य और खेद का विषय है कि आचार्य शिवपूजन सहाय जैसे कर्मठ पत्रकार, साहित्य-सेवी और राष्ट्रभाषा के उन्नायक के प्रदेय की कोई उपयुक्त चर्चा भी नहीं है।

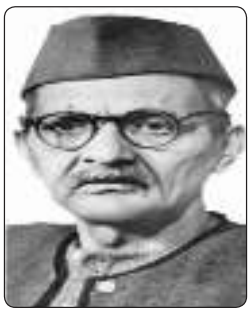

*स्व. श्री शिवपूजन सहाय जीवनकाल*
*(९-८-१८९३—२१-१-१९६३)*

सहायजी के जीवन-काल में ही उनकी रचनावली बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् पटना द्वारा उनके ही संपादकत्व में सन् १९५६-१९५९ में चार भागों में प्रकाशित हो गई थी। चार खंडों में प्रकाशित इस रचनावली को देखकर लेखक की प्रतिभा और कर्मठता का जैसा रूप उभरता है, वह चकित करनेवाला है। किंतु इस शती के तीसरे-चौथे चरण में साहित्य का इतिहास लिखनेवाले सपादकों का ध्यान श्री सहाय की साहित्य-सेवा की ओर नहीं गया। किमाश्चर्यं अत: परम्।

श्री शिवपूजन सहाय ने हिंदी भाषा और साहित्य के किसी एक विशेष क्षेत्र या एक विधा में काम नहीं किया। उनका कार्यक्षेत्र व्यापक था। वे समाज-सुधार, सांस्कृतिक पुनर्जागरण और राष्ट्रीय जागरण के तंत्रों से जुड़े हुए थे। उन्होंने साहित्य की विधाओं में भी किसी एक विधा तक अपने को सीमित नहीं किया। उपन्यास, कहानी, निबंध, जीवनी, संस्मरण, बाल साहित्य तथा व्यंग्य-विनोद आदि विविध विधाओं पर लेखनी चलाकर उन्होंने साहित्य-सेवा का प्रशंसनीय कार्य किया। उनका रचनात्मक साहित्य गुणवत्ता और परिमाण, दोनों दृष्टियों से बहुआयामी है। उनके दृष्टि प्रसार को देखकर आश्चर्य होता है कि सत्तर वर्ष की आयु तक उन्होंने साहित्य, संस्कृति, भाषा, समाज-सुधार, धर्म और राष्ट्रीय समस्याओं पर शताधिक लेख लिखे तथा पचास से अधिक भाषण दिए। उपन्यास के क्षेत्र में एक ही उपन्यास 'देहाती दुनिया' लिखकर अपना स्वतंत्र स्थान बनाया। भोजपुर जनपद के जनजीवन पर ऐसी मौलिक रचना न तो उनसे पहले किसी ने लिखी थी, और न ही उनके बाद कोई अन्य लेखक देहात का वैसा सजीव चित्र अंकित कर सका।

शिवपूजन बाबू ने अपने शैशव में क्या करने और क्या बनने की बात सोची होगी, यह तो कोई नहीं जानता; किंतु उनके कार्यकलापों को देखकर दो मुद्दे उभरकर सामने आते हैं : पहला मुददा जीविका से संबंध रखता है। मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण करते ही अध्यापक-वृत्ति स्वीकार करना उनकी प्रमुख स्वेच्छावृत्ति नहीं थी। युवावस्था और प्रौढ़ावस्था में उन्होंने अध्यापन का कार्य किया अवश्य। छपरा के राजेंद्र कॉलेज में दस वर्ष अध्यापक के रूप में कार्य करना भी शायद उन्होंने जीविका के ही कारण स्वीकार किया था। लेकिन इस अध्यापन को उन्होंने साहित्य से जोड़कर जीवंत बनाए रखा।

यदि बाबू शिवपूजन सहाय के जीवनक्रम को ध्यान में रखकर उनके कार्यकलाप पर दृष्टि निक्षेप किया जाए तो हम उन्हें प्रारंभिक जीवन में एक पत्रकार के रूप में देखते हैं। विद्यार्थी जीवन से ही उनकी लेखन में गहरी रुचि हो गई थी और बिहार की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में उनके लेख छपने लगे थे। मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरांत उन्होंने सन् १९१४ में आरा के टाउन स्कूल में अध्यापन-कार्य प्रारंभ किया। चूँकि यह स्कूल सरकारी था, अत: महात्मा गांधी के सन् १९२० के असहयोग आंदोलन के आह्वान से प्रभावित होकर उन्होंने इस स्कूल से त्याग-पत्र देकर आरा के 'राष्ट्रीय विद्यालय' में अध्यापन का कार्य स्वीकार कर लिया। एक वर्ष का उनका यह कार्यकाल जीविकोपार्जन में प्रवेश का काल था। इस काल में भी उनकी मूल प्रवृत्ति अंतर्मुखी होकर उन्हें पत्रकारिता के क्षेत्र में जाने के लिए प्रेरित करती रही। फलत: सन् १९२१ में आरा से प्रकाशित होनेवाले 'मारवाड़ी सुधार' नामक मासिक पत्र में संपादन का काम किया। इस पत्र में कार्य करते समय उनकी साहित्यिक अभिरुचि को पूर्ण संतोष नहीं मिला। अत: सन् १९२३ में कलकत्ता जाकर 'मतवाला मंडल' में शामिल हो गए।

इस मंडल को संचालित करनेवाले मिर्जापुर के महादेव प्रसाद सेठ ने 'मतवाला' का प्रकाशन कलकत्ता से प्रारंभ किया था। उस मंडल में नवजादिक लाल श्रीवास्तव, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' और सूर्यकांत त्रिपाठी सदस्य के रूप में परामर्शदाता थे। शिवपूजन सहाय के जुड़ जाने से यह पंच परमेश्वर का मतवाला हिंदी जगत् में प्रसिद्ध हो गया। खेद और आश्चर्य का विषय है कि श्री शिवपूजन सहाय का नाम भी उनकी सार्थक सेवाओं के बावजूद 'मतवाला' संदर्भ में पंचों के साथ उभरकर सामने नहीं आया। कलकत्ता प्रवास में उन्होंने 'मतवाला' के

अतिरिक्त 'आदर्श', 'मौजी', 'उपन्यास तरंग', 'समन्वय' आदि कई पत्रों के संपादन में योग दिया। इस प्रकार इनके मन में बसा हुआ पत्रकारिता प्रेम, स्फुलिंग से प्रकाश-पुंज बन गया। इस प्रकाश-पुंज ने ही इन्हें लखनऊ से प्रकाशित होनेवाली मासिक पत्रिका 'माधुरी' में प्रेमचंद के साथ कुछ समय तक काम करने का सुयोग प्राप्त कराया था। उन्होंने मासिक पत्रिका को विचार की स्वतंत्र अभिव्यक्ति का मंत्र मानकर सुल्तानगंज (भागलपुर) से 'गंगा' नामक मासिक पत्रिका के संपादन का कार्यभार सँभाला। यह पत्रिका साहित्य, संस्कृति, धर्म और अध्यात्म की उच्चस्तरीय पत्रिका थी।

श्री सहाय ने पत्रकारिता के साथ हिंदी साहित्य की पुस्तकों के मुद्रण, संपादन और प्रकाशन के कार्य में भी स्वस्थ परंपरा की नींव डाली। श्री रामलोचन शरण की प्रकाशन संस्था पुस्तक भंडार (लहेरिया सराय, दरभंगा) का कार्यभार सँभालकर वहाँ से 'बालक' नामक एक मासिक-पत्र किशोरवय के बालकों के निमित्त प्रकाशित किया। वैसा छात्रोपयोगी पत्र आज भी हिंदी में नहीं है। काशी में मुद्रण-कार्य के निमित्त अल्पकालीन प्रवास के दिनों में उनका परिचय सर्वश्री प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद और विनोद शंकर व्यास से हो गया था। उनके सहयोग से उन्होंने 'जागरण' पत्र का प्रकाशन प्रारंभ किया। किंतु उसकी मुद्रण आदि की व्यवस्था ठीक से न कर पाने के कारण उसका दायित्व विनोद शंकर व्यास को सौंपकर वे पटना चले गए। पत्रकारिता के क्षेत्र में श्री शिवपूजन सहाय का योगदान उनके द्वारा संपादित दो महत्त्वपूर्ण साहित्यिक एवं गवेषणात्मक पत्रों से स्पष्ट प्रकट होता है। पुस्तक भंडार, पटना से प्रकाशित 'हिमालय' नामक पत्र तथा बिहार हिंदी साहित्य सम्मेलन के तत्त्वावधान में प्रकाशित त्रैमासिक शोधपत्र 'साहित्य' के संपादक भी सहायजी ही थे। यदि उनके पत्रकारिता के क्षेत्र में किए गए महत्त्वपूर्ण कार्यों का अनुसंधानपरक दृष्टि से विश्लेषण किया जाए तो हिंदी का कोई दूसरा पत्रकार नहीं है, जिसने अपने जीवन में उच्च स्तरीय करीब एक दर्जन पत्र-पत्रिकाओं का संपादन किया हो। उनकी संपादन कला में जातीय अस्मिता एवं सुरुचिपूर्ण कलात्मकता की रक्षा का प्रमुख स्थान रहता था। ये दोनों तत्त्व आज की पत्रकारिता से विलुप्त हो गए हैं।

आचार्य शिवपूजन सहाय ने रचनाकार के रूप में भी हिंदी जगत् को प्रचुर मात्रा में पठनीय साहित्य प्रदान किया है। उनके मौलिक सर्जन के क्षेत्र में उपन्यास, कहानी, निबंध, संस्मरण, रेखाचित्र, जीवनी, इतिहास और पुराण को स्थान मिला है।

हिंदी जगत् में जिसे आंचलिक उपन्यास की संज्ञा दी जाती है, वह किसी अंचल विशेष की सभ्यता, संस्कृति, बोलचाल, भाषा और रहन-सहन पर निर्भर होती है। श्री सहाय का सन् १९२६ में प्रकाशित 'देहाती दुनिया' शीर्षक उपन्यास इस परिभाषा पर सौ फीसदी खरा उतरता है। इसका प्रकाशन प्रेमचंद के प्रसिद्ध उपन्यास 'रंगभूमि' से पहले हुआ था। अतः प्रेमचंद का प्रभाव खोजने का प्रयास करना व्यर्थ है। इस उपन्यास में ठेठ देहात का औपन्यासिक चित्र उकेरा गया है। उपन्यास के प्रथम संस्करण की भूमिका में लेखक ने 'देहात' शब्द को स्पष्ट करते हुए लिखा है, ''मैं ऐसे ठेठ देहात का रहनेवाला हूँ, जहाँ इस युग की नई सभ्यता का बहुत ही कम धुँधला प्रकाश पहुँचा है। वहाँ केवल दो ही चीजें प्रत्यक्ष देखने में आती हैं—अज्ञानता का घोर अंधकार और दरिद्रता का तांडव नृत्य। वहाँ पर मैंने स्वयं जो देखा-सुना है, उसे यथाशक्ति ज्यों-का-त्यों अंकित कर दिया है। इसका एक शब्द भी मेरे दिमाग की उपज या मेरी मौलिक कल्पना नहीं है। यहाँ तक कि भाषा का प्रवाह भी मैंने ठीक वैसा ही रखा है, जैसा ठेठ देहातियों के मुख से सुना है।''

**हिंदी जगत् में जिसे आंचलिक उपन्यास की संज्ञा दी जाती है, वह किसी अंचल विशेष की सभ्यता, संस्कृति, बोलचाल, भाषा और रहन-सहन पर निर्भर होती है। श्री सहाय का सन् १९२६ में प्रकाशित 'देहाती दुनिया' शीर्षक उपन्यास इस परिभाषा पर सौ फीसदी खरा उतरता है। इसका प्रकाशन प्रेमचंद के प्रसिद्ध उपन्यास 'रंगभूमि' से पहले हुआ था। अतः प्रेमचंद का प्रभाव खोजने का प्रयास करना व्यर्थ है। इस उपन्यास में ठेठ देहात का औपन्यासिक चित्र उकेरा गया है।**

इस उपन्यास के पाँच संस्करण प्रकाशित हुए। उस समय के उपन्यासकारों ने इसकी प्रशंसा में स्तुतिपरक लेख लिखे। किंतु आज यह आंचलिक उपन्यासों की शृंखला में प्रथम उपन्यास नहीं माना जाता।

कहानी के क्षेत्र में श्री सहाय ने सन् १९१८ में पदार्पण किया था। उस समय हिंदी कहानी अपना कलात्मक रूप पूरी तरह सँवार नहीं पाई थी। भारतेंदु युग के कहानी लेखक पुराण और इतिहास से चिपटे हुए थे। प्रेमचंद ने कहानी का क्षेत्र विस्तृत किया। श्री सहाय ने उसी धारा में कुछ मौलिक कहानियाँ लिखीं, जो उनकी रचनावली में 'विभूति' शीर्षक से संकलित हैं। इनकी संख्या सत्रह है। इनमें से कुछ कहानियाँ पहले पाठ्य-पुस्तकों में भी स्थान पाती रही हैं। 'मुंडमाल', 'वीणा' और 'शरणागत रक्षा' बहुचर्चित कहानियाँ हैं। इन कहानियों में लेखक ने बीच-बीच में कुछ पद्यात्मक पंक्तियों को भी स्थान दिया है।

श्री शिवपूजन सहाय को अपने जीवन में एक दर्जन पत्र-पत्रिकाओं के संपादन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस अवसर को उन्होंने अपने लेखन-कर्म से भलीभाँति जोड़ा, और विविध विषयों पर गंभीर निबंध, इतिवृत्तात्मक लेख, परिचयात्मक टिप्पणियाँ आदि लिखकर विपुल विचारात्मक, विवरणात्मक, समीक्षात्मक और इतिवृत्तात्मक सामग्री हिंदी जगत् को प्रदान की। उनके साहित्यिक कोटि के कुछ उथले, कुछ गहरे लेख रचनावली के तृतीय खंड में संकलित हैं। इनकी संख्या १४७ है। इनमें अधिकांशतः समीक्षात्मक निबंध ही हैं। कुछ निबंध भावात्मक और विचारात्मक भी हैं। राष्ट्रभाषा हिंदी के संबंध में बीस लेख हैं। संस्थाओं और पुस्तकों पर भी एक दर्जन लेख हैं। कुछ लेख राजनीति और समाज-सेवा से संबंध रखते हैं। एक सौ सैंतालीस लेखों की यह

तालिका चौंकानेवाली है।

जीवनियाँ और संस्मरण लिखने में शिवपूजन बाबू सिद्धहस्त थे। इनके लिखे संस्मरण चर्चित व्यक्ति को जीवंत रूप में पाठक के सम्मुख प्रस्तुत कर देते हैं। जीवनियाँ भी मनोरंजक और रोचक शैली में हैं। संस्मरण और जीवनियों को देखकर विस्मय होता है कि तीन सौ से अधिक व्यक्तियों के विषय में लिखना कैसे संभव हो पाया! ये जीवनियाँ पौराणिक, ऐतिहासिक और वर्तमान के विशिष्ट व्यक्तियों की हैं। सहायजी की तीन सौ पैंतीस संपादकीय टिप्पणियाँ हैं। ये रचनावली के चौथे खंड में संकलित हैं। उनके प्रदेय को यदि साहित्य और राष्ट्रभाषा सेवा के रूप मैं परखा जाए, तो इतनी समृद्ध साहित्यिक राशि बहुत कम लेखकों ने अर्जित की है।

साहित्य के अतिरिक्त समाज-सेवा और शिक्षा के क्षेत्र में आचार्य शिवपूजन सहाय ने जो कार्य किए, वे इतने व्यापक हैं कि वे बिहार प्रदेश में आगे आनेवाली पीढ़ी का मार्गदर्शन करने के लिए प्रकाश-स्तंभ का काम करेंगे। बिहार प्रदेश में आचार्य शिवपूजन सहाय ने कुछ ऐसे विशिष्ट कार्य किए, जो आज भी उनके यश का प्रकाश फैला रहे हैं। बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् की स्थापना करवाना, बिहार का साहित्यिक इतिहास प्रस्तुत कराने की महत्त्वपूर्ण योजना, बिहार के प्रमुख व्यक्तियों के अभिनंदन ग्रंथ तैयार करवाना, महावीरप्रसाद द्विवेदी अभिनंदन ग्रंथ, राजेंद्र बाबू अभिनंदन ग्रंथ, आत्मकथा, 'बिहार की महिलाएँ' आदि ऐसे ग्रंथ हैं, जिनका महत्त्व उत्तरोत्तर बढ़ता जाएगा।

श्री सहाय की साहित्य-सेवा के सम्मान में उन्हें भारत सरकार ने सन् १९६० में 'पद्मभूषण' से अलंकृत किया था। भागलपुर विश्वविद्यालय ने डी.लिट. की मानद उपाधि से सम्मानित किया और पटना नगर निगम ने उन्हें 'नागरिक सम्मान' का आदर देकर कृतज्ञतापूर्ण भाव व्यक्त किया था। राष्ट्रभाषा परिषद् ने 'वयोवृद्ध साहित्यिक सम्मान' दिया था। हिंदी साहित्य जगत् का यह नक्षत्र २१ जनवरी, १९६३ को पटना में अस्त हो गया और अपने पीछे कर्मठता तथा जातीय अस्मिता की अमिट छाप छोड़ गया। सहायजी के दिवंगत होने पर 'नई धारा', 'साहित्य', 'साप्ताहिक हिंदुस्तान', 'साहित्य संदेश', 'ज्योत्स्ना' आदि पत्र-पत्रिकाओं ने स्मृति में विशेषांक प्रकाशित किए थे।

सा
अ

# हर चेहरा अनजान सा क्यों है?

कविता

• अरुणिमा शर्मा

### वक्त के आईने में

वक्त के आईने में
हर चेहरा मुरझाया सा क्यों है?

मानव मानव से परेशान सा क्यों है?
जिंदगी जिंदगी से हैरान सी क्यों है?
वक्त के आईने में हर चेहरा
मुरझाया सा क्यों है?

वक्त के आईने में
हर फूल कुम्हलाया सा क्यों है?
भरी जमात में
इनसान तन्हा सा क्यों है?

हर इनसान परेशान सा क्यों है?
व्यक्ति व्यक्ति से अनजान सा क्यों है?
हर इनसान बौखलाया सा क्यों है?

वक्त के आईने में
हसीं चेहरों पर उदासी सी क्यों है?
भरी दोपहरी में कोहरा सा क्यों है?
हर चेहरा अनजान सा क्यों है?
इनसान के वेश में शैतान सा क्यों है?

वक्त के आईने में
हर चेहरा मुरझाया सा क्यों है?
सबकुछ है पर मन बेचैन सा क्यों है?
वक्त के आईने में
हर चेहरा मुरझाया सा क्यों है?

### आत्मचिंतन

पिता के लिए पुत्र की भक्ति का
उपदेश देने मैं चला पर
आत्मचिंतन न किया,
साधु बनने मैं चला पर खुद
का विश्लेषण न किया

पुलिस का दारोगा बन बैठा
पर खुद राहजनी और गैंग
रेप, लूटपाट की
और वर्दी का मान न किया।
मूँछ पर ताव दे दिया पर
मन में कायरता को जगह दे दी,
पुलिस बनकर भी सेवा-भाव तज दिया
आत्मविश्लेषण न किया, न आत्मचिंतन किया,
पुत्र में जन्म लिया पर
पुत्र का धर्म न निभाया,
जीते जी किसी की मौत का कारण बन बैठा,
सदियों की सँजोई प्रतिष्ठा दाँव पर लग गई
पर आत्मविश्लेषण न किया, न आत्मचिंतन किया,
सभ्यता-संस्कृति सूली चढ़ गई,
पर अपने अकड़पन का दंभ भरता रहा
एक दिन चिड़िया फुर्र से उड़ गई,
पर मूढ़ मन उसे मना न सका,
आत्मविश्लेषण न कर सका, न आत्मचिंतन कर सका,
मानव बनकर भी मानव का हक
अदा न कर सका, क्योंकि आत्मचिंतन न किया।

सा
अ

सह-प्राध्यापक
प्रसार शिक्षा, डॉ. रा.प्र.के.कृ.वि.वि.
पूसा, नई दिल्ली
दूरभाष : ९९३४९२०४२४

# घोष बाबू का स्कूल

● प्रकाश मनु

सुबह उठकर घंटा-दो घंटा पढ़ने के बाद थोड़ी देर बाहर लॉन में टहलना घोष बाबू का रोज का नियम है। और अकसर वे बाहर टहल रहे होते हैं, तभी मिल्दू आता है घरों का कूड़ा उठाने के लिए।

''कूड़ा···!'' उसकी रोज की आवाज एक साथ कई घरों में गूँजती है।

कुछ लोग उसी समय उठकर झटपट ताला खोलते हैं। जल्दी से दरवाजा खोल देते हैं, मगर कुछ मिल्दू के घंटी बजाने पर भी देर तक बेपरवाह सोए रहते हैं। कहीं-कहीं दो-दो, तीन-तीन बार घंटी बजानी पड़ती है। मिल्दू को हर घर का पता है। कौन सा घर सुबह जागा-जागा सा होता है, कौन सा आलस में पसरा, सोया-सोया सा। और कौन सा गहरी नींद की निस्तब्धता में डूबा।

पर घोष बाबू के यहाँ मिल्दू को कोई मुश्किल नहीं थी। क्योंकि ऐसा कभी नहीं हुआ कि वह आया हो और घोष बाबू का बाहर का दरवाजा बंद हो। बल्कि कभी-कभी तो ऐसा लगता, जैसे घोष बाबू टहलते हुए उसी का इंतजार कर रहे हैं।

और इधर कुछ दिनों से तो घोष बाबू और उनकी पत्नी मिताली दोनों ही मिल जाते हैं। अकसर वे बाहर वाले लॉन में आरामकुरसी पर बैठे चाय पी रहे होते हैं। साथ ही धीरे-धीरे पता नहीं कौन-कौन सी दुनिया-जहान की बातें कर रहे होते हैं।

मिल्दू के आते ही घोष बाबू बड़े प्यार से कहते, ''आओ बेटा···!''

एक-दो बार उन्होंने नाश्ता करते हुए मिल्दू से बात करने की भी कोशिश की। यही कि वह रहता कहाँ है? घर में और कौन-कौन हैं और कब से यह काम कर रहा है? उसे कोई परेशानी तो नहीं? किसी चीज की जरूरत तो नहीं!

पर मिल्दू संकेत में जवाब देता, फिर आगे अपने काम पर निकल जाता। जैसे उसकी इस तरह के सवालों में कोई दिलचस्पी न हो।

मिताली अपने पति से कहतीं, ''जब वह बात नहीं करना चाहता तो आप क्यों बार-बार छेड़ देते हैं?''

घोष बाबू कटकर रह जाते। फिर धीरे से, रुक-रुककर कहते, ''छोटा-सा बच्चा है। पता नहीं किस मजबूरी में उसे यह काम करना पड़ रहा है?''

पर मिताली घोष बाबू की बात को पूरी तरह अनसुना कर देती थीं। जैसे कहना चाहती हों, 'आखिर किसी-न-किसी को तो यह काम करना ही है न। तो यही इस काम को करके चार पैसे कमा ले, इसमें क्या बुरा है? कम-से-कम इसके सहारे घर तो चल रहा है न इसका!'

घोष बाबू भी आगे कुछ कहने के बजाय एकदम चुप्पी साध जाते।

पर अगले दिन मिल्दू आता तो फिर उनके मुँह से निकलता, ''आओ बेटा, ठीक तो हो न?''

पता नहीं क्या बात थी, मिल्दू उनके जेहन से निकलता ही न था।

एक बार घोष बाबू जब नाश्ता कर रहे थे तो उन्होंने मिल्दू को प्लेट में पड़े बिस्कुट उठाकर खाने को दिए। कहा, ''लो बेटा, खा लो।'' पर उसने मना कर दिया। बोला, ''रहने दीजिए बाबूजी, ऐसे ही ठीक हूँ।''

घोष बाबू को अचरज हुआ। वे फिर से मिल्दू के बारे में सोचने लगे। सोचते, 'देखो, कपड़े कितने मामूली हैं, फटे-पुराने। लेकिन बोलना-चालना इसका···! सबमें कुछ नफासत है। जैसे काफी समझदार हो। अपनी उम्र से ज्यादा समझदार। फिर इनकार भी किया तो किस तरह?···सचमुच यह लड़का कुछ अलग सा है। इसमें कुछ अलग बात है।'

एक बार की बात, इतवार का दिन था। घोष बाबू को आज दफ्तर नहीं जाना था। मिल्दू कूड़ा उठाने के लिए आया। कूड़ा उठाने के बाद वापस कूड़ेदान रखकर जाने लगा तो घोष बाबू ने उसे पुकार लिया। बोले, ''मिल्दू, कुछ काम है तुमसे। कब फ्री होगे?''

''कौन सा काम?'' मिल्दू एकाएक चौंका। जैसे बात का सिरा न पकड़ पा रहा हो।

''वह तो बाद में बताऊँगा। पर पहले बताओ, तुम्हारा यह काम

वरिष्ठ कवि-कथाकार। 'यह जो दिल्ली है', 'कथा सर्कस' और 'पापा के जाने के बाद' उपन्यास चर्चित हुए। 'एक और प्रार्थना', 'छूटता हुआ घर' कविता-संग्रह तथा 'अंकल को विश नहीं करोगे', 'अरुंधती उदास है' समेत ग्यारह कहानी-संग्रह। शिखर साहित्यकारों से मुलाकात, संस्मरणों और आलोचना की कई पुस्तकें। साहित्य अकादमी के पहले बाल-साहित्य पुरस्कार, उ.प्र. हिंदी संस्थान के 'बाल-साहित्य भारती' पुरस्कार तथा हिंदी अकादमी के 'साहित्यकार सम्मान' से सम्मानित।

कब तक खत्म हो जाएगा। फिर कोई और काम तो नहीं है।''

घोष बाबू की आँखें मिल्दू के चेहरे पर टँगी थीं।

पता चला, कोई बारह-साढ़े बारह बजे तक मिल्दू सब घरों का कूड़ा उठाता और उसे शहर के बाहरवाले बड़े कूड़ेदान में डालकर घर पहुँच जाता था। नहाता-धोता है, नाश्ता करता है और कोई एक बजे बिल्कुल फ्री हो जाता है। फिर यह भी पता चला कि शाम को पाँच-साढ़े पाँच बजे उसे कहीं और भी काम पर जाना होता है।

''तो ठीक है, साढ़े बारह या एक बजे सही। थोड़ा सा काम है, आ जाना।'' घोष बाबू ने कहा।

''ठीक है, बाबूजी!'' कहकर मिल्दू चला गया। कुछ-कुछ अपनी उधेड़-बुन में खोया सा।

घोष बाबू चुपचाप उसे जाते हुए देखते रहे।

दोपहर को मिल्दू आया तो सुबह से काफी कुछ अलग लग रहा था। नहाया-धोया हुआ, साफ-सुथरा। उसके चेहरे पर आत्मविश्वास की दीप्ति थी।

''हाँ, बाबूजी, बताइए?'' उसने गंभीरता से कहा।

घोष बाबू मुसकराए। बोले, ''बैठो, काम भी बताता हूँ। पर पहले दो-चार बातें तो कर लें।''

अब मिल्दू थोड़ा निश्चिंत सा, आराम से बैठ गया और बातें चल निकलीं।

पता चला कि मिल्दू के पिता नहीं हैं। कोई पाँच साल हुए वे गुजर गए। मिल्दू तब सात-आठ साल का रहा होगा। तभी से वह यह काम कर रहा है। घर में माँ है, एक छोटी बहन भी, और वे भी यही काम करती हैं।

''क्या हमेशा यही करोगे, यही करते रहोगे?'' घोष बाबू ने पूछा और गौर से मिल्दू की आँखों में देखने लगे।

मिल्दू ने हैरानी से घोष बाबू की ओर देखा कि वे कहना क्या चाहते हैं?

''इसलिए कह रहा हूँ मिल्दू, कि जिस फैक्टरी में मैं काम करता हूँ, उसमें भी तुम्हें काम मिल सकता है। क्या नहीं करना चाहोगे? मैं मैनेजर साहब से कह दूँगा, वे तुम्हें रख लेंगे। तनख्वाह अच्छी है, और काम भी कुछ अलग सा···!''

''पर···पर साहब, यह कैसे?'' मिल्दू कुछ हैरान हुआ। और यह हैरानी उसके चेहरे व आँखों में साफ पढ़ी जा रही है।

''कुछ खास नहीं। मैं मैनेजर साहब से कह दूँगा तो वे रख लेंगे। उन्हीं के हाथ में है सब कुछ। सारी नियुक्तियाँ वे ही करते हैं, पर मेरा कहना मान लेते हैं। इसलिए जरा भी मुश्किल नहीं है।···तुम यकीन मानो।'' घोष बाबू ने एक बार फिर दोहराया।

इस बार मिल्दू की आँखों में चमक दिखाई दी। ''सच··· ?'' उसने अंदर की खुशी छिपाते जैसे कहा।

''हाँ, सच···बिल्कुल सच।'' मिल्दू के चेहरे पर अचानक आई रौनक देखकर घोष बाबू इतने खुश हुए, मानो उन्हें कोई खजाना मिल गया हो।

''पर साहब, वह कैसे?'' थोड़ी देर बाद मिल्दू फिर पूछ रहा था। जैसे अंदर-ही-अंदर कुछ टटोल रहा हो।

''वही तो बता रहा हूँ।'' घोष बाबू हँसकर बोले, ''काम तुम्हें मिल सकता है। बल्कि निश्चित मिल जाएगा। और इससे बहुत अच्छा काम होगा। पर अभी नहीं, तुम्हें उसके लिए अभी पढ़ना होगा।''

सुनकर मिल्दू के चेहरे की खुशी कुछ-कुछ तिरोहित हो गई। वहाँ अब उलझन नजर आ रही थी। जैसे पास आई हुई चीज अचानक दूर चली गई हो।

''अच्छा मिल्दू, तुम कितनी जमात पढ़े हो?'' घोष बाबू ने पूछा।

''कक्षा चार, बाबू साहब। उसके बाद तो पढ़ाई छूट ही गई···!'' कहते हुए मिल्दू के चेहरे पर मलाल था। एक उदासी का तार अंदर-अंदर काटता हुआ।

''तो क्या हुआ, मैं पढ़ाऊँगा।'' घोष बाबू ने कहा, ''एक साल बाद तुम पाँचवीं का इम्तिहान दे देना। फिर आगे हाईस्कूल तक तो तुम्हें पढ़ना ही चाहिए। प्राइवेट भी हाईस्कूल का इम्तिहान दे सकते हो। काम करते रहो और पढ़ते भी रहो।···पर तुम चिंता न करो, पढ़ाऊँगा मैं और किताबें भी दूँगा। यह जिम्मा मेरा।''

''अच्छा, बाबूजी··· ?'' मिल्दू को यकीन नहीं हो रहा था।

''हाँ-हाँ, तुम क्या सोच रहे हो? मैं क्या खाली कहने के लिए कह रहा हूँ?'' घोष बाबू के चेहरे पर कोई अलग ही बात थी, जिसने मिल्दू को रिझा लिया।

हालाँकि मिल्दू अब भी अपनी कशमकश से बाहर नहीं आ पाया था। वह सोच रहा था, 'यह कैसे होगा, होगा भी कि नहीं? यह सच है कि सपना··· ? क्या मैं सच ही पढ़-लिख पाऊँगा?'

पर चाहे सपना ही हो, इससे उसे इतनी खुशी हुई जैसे अभी उठकर नाचना शुरू कर दे।

''पर यह काम··· ?'' उसने घोष बाबू ने पूछा। फिर खुद ही कहा, ''यह तो जरूरी है, वरना तो साहब, हमारा घर नहीं चल सकता।''

''हाँ-हाँ, तो इसे छोड़ने के लिए मैं कब कहता हूँ?···तुम इसे करते रहो, बस मेरे पास शाम के समय आ जाया करो। रोजाना कोई दो-ढाई घंटे पढ़ा दिया करूँगा और इतवार को जब मेरी छुट्टी रहती है, दोपहर को भी आ सकते हो।···उस दिन थोड़ी ज्यादा पढ़ाई हो जाएगी।'' घोष बाबू ने समझाया।

''पर साहब, किताबें··· ?'' मिल्दू ने कुछ परेशान होकर कहा।

इस पर घोष बाबू अंदर गए और बच्चों की एक सुंदर सी किताब लेकर आए। उसे मिल्दू के हाथ में पकड़ाते हुए कहा, ''लो, पढ़ो।''

उस सुंदर रंग-बिरंगी किताब में बच्चों के लिए छोटी-छोटी कविताएँ और कहानियाँ थीं। घोष बाबू बोले, ''मिल्दू, यह रही तुम्हारी किताब। मैं बोल-बोलकर पढ़ दूँगा, तुम सुनते जाओ। चित्र भी हैं इनमें। बाद में खुद पढ़ना, अच्छे से समझ में आएगा।''

फिर घोष बाबू ने एक-एक करके दो-तीन कविताएँ पढ़कर सुनाईं तो मिल्दू का चेहरा खिल गया। इनमें एक कविता थी, कुक्कू और

उसकी नानी की। एक कविता थी, कुक्कू और उसका घोड़ा। एक और कविता में कुक्कू और बादलपुर का किस्सा था। सुनते हुए मिल्दू को लगा, जैसे वह भी कुक्कू के साथ दुनिया भर की सैर करके आ गया है। यहाँ तक कि एक छोटे से बादल के साथ उड़ते-उड़ते आसमान में बादलपुर तक जा पहुँचा है। इसी तरह दिल्ली की सैरवाली कविता भी मिल्दू को बहुत अच्छी लगी। मिल्दू ने कभी दिल्ली देखी न थी। उसे लगा, कविता पढ़कर उसने भी दिल्ली का लाल किला देख लिया, कुतुब मीनार देख ली। कनाट सर्कस का भी चक्कर लगा लिया।···

घोष बाबू ने देखा कि मिल्दू का मन किताब में रमने लगा है, तो उनके आनंद का ठिकाना न था। वह आनंद उनकी आवाज में भी छलकने लगा था। इससे मिल्दू को और भी मजा आया।

फिर कहानियों का नंबर आया। सबसे मजेदार कहानी थी, शरारती चुहिया और दर्जी की। उस शरारती चुहिया ने अपनी टोपी बनवाने के लिए दर्जी नफासत अली को क्या खूब छकाया? कैसी-कैसी बढ़िया तरकीबें लगाईं। वाह-वाह···! पहले उसका पर्स छिपा दिया। फिर अपनी अटपटी बातों से उसे खूब हँसाया। हँसते-हँसते दर्जी नफासत अली के पेट में दर्द होने लगा। हारकर बोला, 'ओ री ओ शरारती चुहिया, अभी सीता हूँ तेरे लिए सुंदर सी रंग-बिरंगी टोपी!' और फिर वह नन्ही सी, सुंदर सी टोपी तैयार हुई तो उसे पहनकर नन्ही चुहिया खूब नाची, खूब···!

कहानी सुनकर मिल्दू खूब जोरों से खिलखिलाकर हँसा। देर तक हँसता ही रहा। मिल्दू की वह हँसी घोष बाबू के मन में गड़ी रह गई। सोचने लगे, 'यह इसके भीतर का छिपा हुआ बचपन है। यकीनन इसके भीतर जो बच्चा है, वह सही माहौल मिले तो अच्छे संस्कारित रूप में सामने आ सकता है। आगे चलकर कुछ बन सकता है, कुछ कर सकता है। अब तो जो जिम्मेदारी का बोझ इसके सिर पर है, उसने इसके बचपन को पूरी तरह कुचलकर रख दिया है, पूरी तरह···!'

पर अच्छी बात यह थी कि पहले दिन ही मिल्दू पर घोष बाबू की बातों का जादू जैसा असर हो गया था।

पहली बार उसने अपने आपको अंदर-बाहर से बदला हुआ महसूस किया था। उसे लग रहा था, कुछ हो सकता है। जरूर हो सकता है। वह चाहे तो अपनी जिंदगी को सिरे से बदल सकता है।

इसके बाद मिल्दू रोजाना घोष बाबू के घर आने लगा। खूब ध्यान से पढ़ने-लिखने लगा। घोष बाबू जो कुछ पढ़ाते, उसे वह बहुत जल्दी समझ लेता। याद भी कर लेता। घोष बाबू समझ गए कि उनके सामने एक अनगढ़ पत्थर है, पर वे उसे तराशेंगे, तो उसकी चमक दूर तक दिखाई पड़ेगी। वे उसे खेल-खेल में ही पढ़ाते। बीच-बीच में खूब हँसाते। मिल्दू कभी इतना नहीं हँसा था। पर घोष बाबू का तरीका ही खूब हँसा-हँसाकर पढ़ाने का था। कहानी-किस्सों और मजेदार कविताओं के जरिए ही वे जीवन की बड़ी-बड़ी गूढ़ बातें समझा देते। ज्ञान-विज्ञान की बातें भी कहानियों की शक्ल में पेश करते तो मिल्दू झट से उन्हें याद कर लेता। खुद भी आगे सोचता। पहली बार उसके दिमाग के जंग लगे ताले खुले थे।

मिल्दू सोचता, 'पढ़ाई-लिखाई इतनी मुश्किल चीज तो नहीं है। मैं तो बेकार ही डर रहा था।'

और घोष बाबू सोचते, 'मिल्दू बहुत जल्दी पढ़ाई-लिखाई की दुनिया में चल निकला है। ऐसे ही यह सरपट दौड़ता रहा तो एक दिन···!'

फिर एक बार घोष बाबू ने मिल्दू से कहा, ''मिल्दू, इस इतवार को मैं तुम्हारे घर आऊँगा।''

मिल्दू को यकीन नहीं आया। बोला, ''सच्ची, मास्टरजी?''

''हाँ सच्ची, एकदम सच्ची।'' घोष बाबू बोले, ''मैं तुम्हारे घर आऊँगा। वहीं तुम्हें पढ़ाऊँगा। साथ ही तुम्हारा घर भी देख लूँगा।''

मिल्दू को यकीन नहीं हो रहा था कि इतनी बड़ी कोठी में रहने वाले घोष बाबू कभी उसके घर आएँगे। वह उन्हें कहाँ बैठाएगा, यही उसकी समझ में नहीं आ रहा था।

पर इतवार आया तो सचमुच घोष बाबू मिल्दू के घर जा पहुँचे। मिल्दू बड़े संकोच में था कि उन्हें कहाँ बैठाए? कैसे उनका सत्कार करे?

पर घोष बाबू तो अपने आनंद में थे। वे मिल्दू के घर के सामने बिछी चारपाई पर ही बड़े ठाट से बैठे। बीच में अंदर जाकर उसका घर भी देखा। मिल्दू की माँ से बड़े आदर से मिले। उसकी छोटी बहन रेखा ने चाय बनाई तो वहाँ बैठकर चाय भी पी। और रेखा बिटिया के हाथ की बनी चाय की प्रशंसा करना भी न भूले।

फिर घोष बाबू ने मिल्दू को उसके घर के आगे एक पेड़ के नीचे बैठकर पढ़ाया, तो देखकर आसपास के और बच्चे भी आ गए। उनमें से ज्यादातर स्कूल नहीं जाते थे। सबकी हालत मिल्दू जैसी ही थी। मिल्दू ने सबको बता रखा था घोष बाबू के बारे में। घोष बाबू को देखा तो वे बच्चे पहले तो शरमाए, फिर हिम्मत करके पास आकर खड़े हो गए। बोले, ''मास्टरजी, हम भी आ जाएँ?''

''अरे, आओ-आओ, यह तो खुला स्कूल है। यहाँ कोई हाजिरी नहीं, कोई फीस नहीं। हर किसी का स्वागत है!''

घोष बाबू जोर से हँसे तो सबकी हिचक दूर हो गई। फिर तो देखते-ही-देखते वहाँ पंद्रह-बीस बच्चे इकट्ठा हो गए। उनकी खुशी, उनकी उमंग और उत्साह का ठिकाना न था। अब तक स्कूल उन्हें कोई

डराने वाली खौफनाक चीज लगता था। पहली बार उन्होंने ऐसा स्कूल देखा, जो हँसने वाला स्कूल था। जहाँ हँसते-हँसते पढ़ाई होती थी और जीवन के अनमोल पाठ सीखे जाते थे।

इतने बच्चों को देखकर घोष बाबू भी उत्साहित थे। बच्चों के उत्साह ने उनका उत्साह और बढ़ा दिया था। वे अपने पूरे रंग में आ गए। मिल्दू के साथ-साथ वहाँ आए सारे बच्चों को उन्होंने एक से एक मजेदार कविता और कहानियाँ सुनाईं। उनसे खूब हँस-हँसकर बातें कीं और पढ़ाया भी। उन्हें खेल-खेल में इस दुनिया की बहुत सी मजेदार बातें बताईं। फिर विज्ञान के नए-नए आविष्कारों और करिश्मों के बारे में बताया। दुनिया के साहसी यात्रियों के बारे में बताया, जिन्होंने हर खतरा उठाकर दुनिया के अनजाने प्रदेशों की सैर की, और बड़ी-से-बड़ी बाधाओं और विपदाओं की परवाह नहीं की। देश-दुनिया के महापुरुषों के बारे में बताया। उन्होंने बचपन में बहुत गरीबी देखी, बड़ी से बड़ी मुश्किलें झेलीं, लेकिन बड़े होकर बड़े-बड़े काम किए। दुनिया में नाम कमाया।

हर किसी के लिए ये बातें नई थीं। बच्चों को लगा, ऐसी बातें तो कोई नहीं बताता। और इतनी मजेदार कविताएँ और कहानियाँ भी कोई नहीं सुनाता। जबकि घोष बाबू तो कहानियाँ सुनाते ही नहीं थे, खुद बच्चों से सुनते भी थे। इससे बच्चों का हौसला और बढ़ता था, आनंद भी। कोई दो-सवा दो घंटे तक घोष बाबू की क्लास चली। इस बीच न घोष बाबू को समय का कुछ खयाल रहा और न बच्चों को। बल्कि आस-पास बस्ती के बहुत सारे बड़े लोग भी इकट्ठे हो गए थे। वे भी हैरान होकर घोष बाबू के इस नए स्कूल को देख रहे थे और आनंद उठा रहे थे। साथ ही सोच रहे थे, कि उनके बचपन में भी ऐसा ही स्कूल होता तो वे भी क्यों न पढ़ने जाते और पढ़-लिखकर कुछ बन भी सकते थे।

क्लास के बाद घोष बाबू ने बच्चों से खुलकर बात की। पूछा, ''हाँ भई, साफ-साफ बताओ, कैसा लगा हमारा स्कूल··· ?''

सुनकर सारे बच्चों का समवेत स्वर, ''बहुत अच्छा मास्टरजी, बहुत ही अच्छा।''

''तो क्या हर इतवार को मैं पढ़ाने आऊँ तो तुम लोग भी आओगे ?''

''हाँ मास्टरजी, आएँगे, जरूर आएँगे।'' बच्चों का उत्साहित स्वर। इनमें मिल्दू की बहन रेखा भी थी। बल्कि रेखा की कई और सहेलियाँ भी। लड़कियों को यहाँ कोई स्कूल भेजता ही नहीं था। पर मिल्दू ने अपनी बहन रेखा को बताया, तो उसके मन में भी पढ़ने की ललक पैदा हो गई। फिर उसने अपनी सहेलियों रेशमी, आरती और संध्या को बताया। उस बस्ती की और लड़कियों को भी पता चला। अब तो वे सभी घोष बाबू के स्कूल में पढ़ने के लिए उत्साहित हो गईं।

घोष बाबू को लगा, वे तो एक मिल्दू की तलाश में आए थे, पर यहाँ तो एक नहीं कई मिल्दू हैं। तो अब तय हुआ कि घोष बाबू हर इतवार को यहाँ आकर पढ़ाया करेंगे, ताकि मिल्दू के साथ-साथ बस्ती के और बच्चे भी पढ़-लिख लें। बाकी दिनों में मिल्दू शाम के वक्त घोष बाबू के घर जाकर पढ़ आया करेगा। जो कुछ सीखेगा, वह बस्ती के दूसरे बच्चों को भी सिखाएगा।

मिल्दू खूब उत्साहित था। बस्ती के और बच्चे भी। लड़के, लड़कियाँ दोनों ही। उन्होंने तय किया कि वे अपने घर के सामनेवाले मैदान को साफ करके बच्चों के बैठने का इंतजाम कर देंगे। बस्ती के बड़े-बुजुर्गों ने भी मदद करने का फैसला किया। घोष बाबू का स्कूल चल पड़ा।

इतवार आया तो शाम के समय घोष बाबू के आने से पहले ही सब बच्चों ने मिल-जुलकर मैदान की खूब अच्छी तरह सफाई की। फिर दौड़कर अपने-अपने घरों से बोरे ले आए और उन्हें बिछाकर बैठ गए। सब अपने घरों से अच्छी तरह हाथ-मुँह भी धोकर आए थे।

सबको घोष बाबू का इंतजार था। पिछली बार घोष बाबू की सुनाई हुई कविताएँ और कहानियाँ उन्हें याद आ रही थीं और सोचते थे, 'देखें, भला आज घोष बाबू क्या सुनाते हैं ?'

थोड़ी देर में घोष बाबू और उनकी पत्नी मिताली दोनों आ पहुँचे। पर इस बार घोष बाबू के पास लाल रंग का एक बहुत बड़ा थैला था। उसमें कहानी और कविताओं की सुंदर-सुंदर रंग-बिरंगी किताबें थीं। कॉपियाँ थीं, पेंसिल और रंग थे। और भी बहुत कुछ। साथ ही चेहरे पर बड़ी रहस्यपूर्ण मुसकान।

बच्चों की उत्सुक आँखें उन थैलों को टटोल रही थीं। उन्हें लगा, घोष बाबू इस बार अपने साथ सांताक्लॉज की तरह कोई जादू का पिटारा भी ले आए हैं, जो अभी खुलने ही वाला है। और सचमुच वह जादू का पिटारा थोड़ी देर बाद खुला। मिताली मैडम ने उस थैले में से सुंदर-सुंदर किताबें निकालीं और एक-एक करके सब बच्चों में बाँटनी शुरू कीं। यह क्या··· ? बच्चों की उत्सुक आँखों में सवाल। उन्हें यकीन ही नहीं हो रहा था कि ये सुंदर किताबें मिताली मैडम उन्हीं के लिए लाई हैं और अब ये हमेशा-हमेशा के लिए उन्हीं के पास रहेंगी।

वे बड़ी उत्सुकता से उन किताबों को छू रहे थे, धीरे-धीरे बड़ी सावधानी से उलट-पलट रहे थे और उनमें बने सुंदर-सुंदर रंग-बिरंगे चित्रों का आनंद ले रहे थे। किसी में किताब पढ़ता हुआ भालू था, किसी में माइक के आगे गाना गाती हुई चिड़िया, किसी में फुटबॉल खेलता हुआ हाथी, किसी में कंधे पर बस्ता टाँगे स्कूल जाता हुआ शेर। सबसे मजेदार थी बिन्नो बछिया, जो एक पार्क में बच्चों की फिसलन पट्टी पर झूल रही थी और पास खड़े बच्चे हँस-हँसकर पागल हुए जा रहे थे। ऐसे प्यारे चित्र बच्चों ने पहले कभी देखे नहीं थे। वे चित्रों को देख-देखकर रोमांचित थे। सोच रहे थे, 'काश, हम इन सुंदर किताबों को पढ़ पाते!'

फिर घोष बाबू ने कुछ बच्चों के हाथों से किताबें लेकर उनमें से खूब मजेदार कविता-कहानियाँ सुनाईं। थोड़ी गिनती और क, ख, ग सिखाया। बोलना और पढ़ना भी सिखाया। इसके बाद सबको कॉपियाँ, पेंसिलें और कलर देकर अपने मन से कोई-न-कोई चित्र बनाने के लिए कहा। इस पर सबसे ज्यादा उत्सुकता और गहमागहमी नजर आई। हर बच्चे के भीतर कोई-न-कोई अनगढ़ कलाकार छिपा बैठा था, जो निकलकर आया। एक से एक सुंदर और मनोरंजक चित्रों को देखकर

घोष बाबू और मिताली रोमांचित थे। सोच रहे थे, इन मैले बच्चों के दिल कैसे हीरे जैसे हैं!

चलते-चलते घोष बाबू ने कुछ आस-पास की दुनिया-जहान की दिलचस्प बातें बताईं। और फिर अँधेरा छाने लगा तो सब बच्चों से विदा लेकर अगले इतवार को आने का वादा करके वे दोनों चल पड़े।

अगले इतवार को मिताली और घोष बाबू आए, तो पहले से कहीं ज्यादा बच्चे उस मैदान में जमा थे। सब पढ़ना चाहते थे, कविता-कहानी सुनना चाहते थे और खुद भी बहुत कुछ सुनाना चाहते थे।

इस बार घोष बाबू और मिताली ने बच्चों को एक नाटक की तैयारी कराई। नाटक का नाम था, 'पढ़ोगे-लिखोगे तो बनोगे अच्छे'। इसमें एक स्कूल के मास्टरजी थे, भोलानाथ मास्टरजी, और उनकी क्लास के बच्चे। इन बच्चों में एक पैसेवाले पिता का शरारती बच्चा भी था, बीरू। बड़ा मोटा और ऊधमी। खाने-पीने का शौकीन। न वह खुद पढ़ता था और न किसी को पढ़ने देता था। उल्टे मास्टर भोलानाथजी को तरह-तरह से तंग करता था। पर मास्टर भोलानाथजी इतने अच्छे थे और सब बच्चों को इतना प्यार करते थे कि आखिर तक आते-आते बीरू एकदम बदल गया।

घोष बाबू घर से ही पूरा नाटक लिखकर लाए थे। नाटक के संवाद बड़े चुस्त और मजेदार थे। बीच-बीच में हँसी की फुहारें भी थीं। बच्चों ने उसमें और भी जान डाल दी। उन्होंने इतनी अच्छी तरह से अपना-अपना पार्ट किया कि घोष बाबू को बहुत अच्छा लगा। कहा, ''थोड़ी और प्रैक्टिस करो तो इसका बढ़िया सा प्रदर्शन होगा। यहीं तुम्हारी बस्ती में।...क्यों, ठीक है न!''

''जी, मास्टरजी...!'' एक साथ कई आवाजें।

और उस बार तो नहीं, पर दो-तीन इतवार छोड़कर नाटक के प्रदर्शन की भी तैयारी हुई। उसी मैदान में बल्लियाँ गाड़कर शामियाना लगाया गया। रंग-बिरंगी झंडियाँ लगीं। सुंदर सा मंच बना और फिर 'डम-डम-डम...डम डमाडम' संगीत के साथ नाटक शुरू हुआ तो उस बस्ती के सारे लोग वहाँ इकट्ठे हो गए। बच्चों ने अपना-अपना पार्ट बड़े लाजवाब ढंग से निभाया। बीच-बीच में चुटीली हँसी वाले संवाद थे। कहीं-कहीं तो बीरू की अटपटी शरारतों वाले प्रसंग में इतनी मजेदार सिचुएशन थी कि नाटक देखने वाले दर्शक हँस-हँसकर लोट-पोट हो गए। भोलानाथ मास्टरजी का पार्ट खुद घोष बाबू ने किया, और सच ही नाटक में जान डाल दी। बस्ती के बच्चों का जोश अब बढ़ गया था। उन्हें लगा, हम चाहें तो क्या नहीं कर सकते? पर हमें बड़े सपने देखने चाहिए। फिर उन्हें पूरा करने के लिए जी-जान से जुट जाना चाहिए।

और मिल्दू तो जैसे उन सबका नेता बन गया हो। वह सभी को समझाता, ''हम इसी हालत में क्यों रहें? क्या हमें ईश्वर ने कूड़ा उठाने के लिए पैदा किया है? क्या हम बड़े-बड़े काम नहीं कर सकते? क्यों नहीं कर सकते?''

मिल्दू की बातें सुनकर बस्ती के सारे बच्चों में पढ़ने-लिखने की खासी ललक पैदा हो गई। अब तो घोष बाबू और मिताली पढ़ाने आते तो पूरा मैदान बच्चों से भरा होता। आस-पास उनके मम्मी-पापा और बड़े लोग भी आकर बैठ जाते। कभी-कभी तो इतने ज्यादा लोग हो जाते कि पढ़ाने-लिखाने में भी दिक्कत होने लगी।

घोष बाबू को एक तरीका सूझा। उन्होंने सोचा, 'मिल्दू को जल्दी से पढ़ा-लिखा दिया जाए, तो वह बड़ा काम कर सकता है। वह दूसरों को तो पढ़ाएगा ही, पूरी बस्ती में भी जागृति की लहर पैदा हो सकती है।'

घोष बाबू ने मिल्दू को बुलाकर कहा, ''देखो मिल्दू, मेरा रिटायरमेंट अब नजदीक आ गया। दो-तीन महीने की छुट्टियाँ बची हुई हैं। सोचता हूँ, ले लूँ। तो अब मेरे पास ज्यादा समय होगा। तुम चाहो तो ज्यादा देर तक पढ़ लो, ताकि हाईस्कूल तक का कोर्स तुम्हारा जल्दी से खत्म हो जाए। फिर इम्तिहान जब होगा, दे देना।''

मिल्दू के लिए यह दुगनी खुशी की बात थी। एक तो उसे नई जिम्मेदारी मिल रही थी। दूसरे, तेजी से पढ़-लिखकर आगे निकलने का अवसर भी। उसे भला इसमें क्या आपत्ति होती? उसने खुशी-खुशी हाँ में सिर हिला दिया। मिल्दू दो-तीन महीने में ही खासा पढ़-लिख गया। तो अब वह खुद भी बस्ती के बच्चों को थोड़ा-बहुत पढ़ा दिया करता। इतवार को घोष बाबू और मिताली पढ़ाने आते और बोलते-बोलते थक जाते तो बीच में मिल्दू खड़ा हो जाता। वह सब बच्चों को पढ़ाता, उनकी कॉपियाँ चेक करता और उन्हें नए जीवन की सीख देनेवाली बातें भी बताता।

धीरे-धीरे समय बीता। मिल्दू ने हाईस्कूल की परीक्षा पास कर ली। अच्छे नंबर आए तो घोष बाबू के कहने पर इंटरमीडिएट में दाखिला ले लिया। इंटरमीडिएट में वह और ज्यादा उत्साह से पढ़ा। घोष बाबू ने भी उसकी तैयारी कराने में कोई कसर नहीं छोड़ी। मिल्दू इस बार फर्स्ट डिवीजन में पास हुआ।

जिस दिन रिजल्ट आया, मिल्दू की हालत अजीब थी। वह सीधा घोष बाबू के घर गया। बोला, ''गुरुजी आपने मुझे मंत्र दिया था, शिक्षा का मंत्र! इम्तिहान में तो पास हो गया। पर...आप देख लीजिए, मैं आपकी कसौटी पर खरा उतरा हूँ या नहीं?''

सुनकर घोष बाबू ने उसे छाती से लगा लिया। फिर कहा, ''मुझे खुशी है, मैंने तुम्हारी आँखों में जो प्रकाश देखा, तो वह आज तुम्हारे पूरे जीवन में फैल गया है। पर यह प्रकाश केवल तुम्हारे जीवन में न रहे, बल्कि बस्ती के सब बच्चों तक पहुँचना चाहिए।...मेरी इच्छा है कि बस्ती के बस बच्चों को पढ़ाओ। हम एक स्कूल खोलते हैं। वहाँ कोई फीस नहीं ली जाएगी। हर बच्चा एडमिशन ले सकता है। वहाँ मुफ्त

किताबें मिलेंगी, मुफ्त पढ़ाई। और अध्यापक का जिम्मा तुम्हें लेना पड़ेगा। तुम्हारा वेतन मैं दूँगा और स्कूल चलाने का खर्च भी।...और हाँ, साथ ही साथ आगे की पढ़ाई भी करते रहो। तुम्हें पढ़ाने का जिम्मा मेरा।''

''जी...!'' मिल्दू के भीतर अजब सी आँधी चल रही थी। एक थरथराहट भरी शुरुआत। एक नया मिल्दू बहुत जल्दी सामने आनेवाला था। और घोष बाबू और मिल्दू की कोशिशों से बड़ी जल्दी वह स्कूल खुल गया, जिसका नाम था—'नवप्रभात स्कूल'।

घोष बाबू कहते, ''मिल्दू, अब बस्ती का अँधेरा छट जाएगा। यह नवप्रभात स्कूल बस्ती के लोगों को शिक्षा का एक नया मंत्र देगा। बस, तुम इससे दूर मत जाना। तुम्हीं इस नवप्रभात स्कूल की आत्मा हो।''

मिल्दू ने कुछ कहा नहीं। धीरे से झुका और घोष बाबू के पैर छू लिये। उसकी आँखों में आँसू थे। और सचमुच दो-तीन महीनों में ही नवप्रभात स्कूल खूब चल निकला। उसमें घोष बाबू, मिताली, मिल्दू तो पढ़ाते ही हैं। धीरे-धीरे एक-दो और उत्साही अध्यापक आ गए। पढ़ाने के अलावा डिबेट होती, नाटक होते, कला और संगीत की शिक्षा दी जाती और खेल-कूद भी।

यह केवल क्लासरूम की पढ़ाई न थी। मिल्दू बच्चों को जीवन की सीख देने के लिए जगह-जगह अपने साथ लेकर जाता। नए-नए स्थल दिखाता। कभी उन्हें लाल किला और कुतुब मीनार जैसे ऐतिहासिक स्थलों पर ले जाकर गुजरे हुए समय के इतिहास से रूबरू कराया जाता तो कभी बाग-बगीचों में जाकर रोचक ढंग से फूलों और वनस्पतियों की जानकारी दी जाती। नदियों और पहाड़ों की सैर कराई जाती। रोचक किस्से-कहानियों की तरह इतिहास, भूगोल और विज्ञान पढ़ाया जाता। अब केवल स्कूल स्कूल न था, पूरी जिंदगी ही एक स्कूल थी।

यह हँस-हँसकर पढ़ाने-लिखाने का नया प्रयोग था। बच्चों ने इसे नाम दे दिया, 'हँसनेवाला स्कूल।'

अब मिल्दू की तो हालत यह थी कि जैसे उसे पंख लग गए हैं। जब से यह स्कूल खुला था, रात-दिन वह इसी के बारे में सोचता। और रहता भी यहीं था। वही इस स्कूल का प्रिंसिपल भी था, कर्ता-धर्ता भी। और घोष बाबू और मिताली तो दौड़-दौड़कर इस स्कूल में आते और कहते, ''इन साधारण बच्चों को पढ़ाते हुए इतना सुख मिलता है कि हम नहीं जानते, स्वर्ग का सुख क्या होता है?''

कोई घोष बाबू से उनके बच्चों के बारे में पूछता तो हँसकर कहते हैं, ''भाई, हमारे तो यही बच्चे हैं। सबसे प्यारा बच्चा है मिल्दू, और फिर ये सारे बच्चे।''

मालूम पड़ा, घोष बाबू का एक ही बेटा है, मुक्तेश, जो इंजीनियरिंग पढ़ने अमेरिका पढ़ने गया और फिर वहीं बस गया। वहीं उसने अंजिका नाम की लड़की से विवाह कर लिया। एक छोटा सा बच्चा भी है, कीर्तिसंभव। विवाह के बाद बेटे से बस इतना संबंध रह गया है कि वह साल में एक बार आ जाता है मिलने अंजिका और संभव के साथ।

घोष बाबू अपने बेटे-बहू और पोते संभव से कम प्यार करते हों, ऐसा नहीं। पर उनके जीवन में बहुत कुछ खाली-खाली सा छूट गया था। वहाँ कोई धड़कन नहीं थी, भावनाओं की कोई हलचल नहीं। सबकुछ रीता-रीता सा। उस खालीपन को भरा मिल्दू और लिखने-पढ़ने के लिए उत्सुक गरीब बच्चों की टोली ने। और सच्ची बात तो यह कि उनका मन गरीब बस्ती के इन गरीब बच्चों को देखकर ही खिलता है। और वे सबसे कहते हैं, ''अब तो यही हैं मेरी आशा के केंद्र। इन्हीं में मेरा मन रमता है।''

उन्होंने खुद अपने हाथों से वसीयत लिखकर रख ली है, ''मेरे बेटे मुक्तेश को किसी चीज की कमी नहीं है। जबकि मिल्दू और उसके स्कूल के गरीब बच्चे छोटी-छोटी चीजों के लिए तरसकर रह जाते हैं। यह देखकर मेरा मन तड़पता है।...तो मैंने तय कर लिया है कि मेरे और मिताली के बाद मिल्दू ही हमारी संपत्ति और विरासत का उत्तराधिकारी होगा। स्कूल का पूरा प्रबंध तो वह देखेगा ही, हमारी कोठी का मालिक भी वही होगा। वह किसी अच्छे काम के लिए इसका इस्तेमाल करेगा तो हमें खुशी होगी।...''

ऐसे ही वर्षों बरस गुजर गए। मिल्दू का स्कूल चलता रहा और तरक्की करता रहा। घोष बाबू और मिताली का आशीर्वाद भी बना रहा। इस स्कूल की रौनक दिनोदिन बढ़ती ही जा रही थी, कम नहीं हुई। इन बच्चों में पढ़कर कुछ तो दूर-दूर चले गए, पर वहाँ से घोष बाबू और मिताली के लिए उनकी चिट्ठियाँ आतीं।

शिष्यों की चिट्ठियाँ आतीं, तो घोष बाबू के चेहरे पर बड़ी प्यारी मुसकान आ जाती। खुश होकर कहते हैं, ''रोशनी दूर-दूर तक फैल रही है।''

मिल्दू अब नवप्रभात स्कूल का अध्यापक ही नहीं, ज्ञान का हरकारा भी है, जो दूर-दूर तक नई रोशनी का संदेश फैलाता नजर आता है। कहीं भी कोई बच्चा अनपढ़ हो, तो मिल्दू उसके घर पहुँचकर टेर लगाता है। बस्ती में अब स्कूल खुल गया है तो कोई भी बच्चा भला अनपढ़ क्यों रहे? जल्दी से स्कूल भेजिए उसे, पढ़ाने-लिखाने की सारी चिंता हमारी। आप तो उसे बस स्कूल भेजना शुरू कीजिए।

घोष बाबू कभी-कभी आह्लादित होकर कहते हैं, ''मिल्दू, हमने एक बहुत बड़ा दीया जलाया है, ज्ञान का दीया। वह तुम हो। तुम्हारे जैसे उत्साही लोग हों धरती पर, तो अँधेरा नहीं रहेगा। कभी नहीं।''

श्रीमती मिताली घोष कहतीं, ''हमने एक दीया जलाया था और मिल्दू ने एक से एक करते हुए हजारों दीये जला दिए। मिल्दू का काम हमसे ज्यादा बड़ा है।''

और मिल्दू रात-दिन अपने नवप्रभात स्कूल को सँवारते हुए यही सोचता है कि घोष बाबू का सपना जल्दी से जल्दी पूरा हो, उसे पूरा होना ही चाहिए। क्योंकि तब कोई बच्चा सिर्फ कूड़ा बीनने के लिए अपनी पूरी जिंदगी बरबाद नहीं करेगा।

५४५ सेक्टर-२९, फरीदाबाद-१२१००८ (हरियाणा)
दूरभाष : ९८१०६०२३२७

# देवनागरी लिपि से ही होगी भारतीय अस्मिता और भाषाओं की रक्षा

● मालती शर्मा

हिंदी भाषा के विश्व मंच पर मैं भारतीय अस्मिता और भारत की विकट भाषा समस्या के बारे में महान् देशभक्त नेता सुभाषचंद्र बोस की पावन स्मृति को प्रणाम करती हूँ। श्रद्धा-सम्मान व्यक्त कर एक सूत्र में देश भर में गुँजाती अपनी बात कहूँगी—'तुम मुझे देवनागरी लिपि दो, मैं तुम्हें देश की एकता दूँगी।'

सुनने-पढ़ने में यह छोटा मुँह बड़ी बात या बड़बोलापन लग सकता है, पर व्यावहारिक रूप देने पर ऐसा नहीं रहेगा। यह कठिन भी नहीं है। अब भाषा वैज्ञानिकों और संगणक तत्त्वों ने यह स्थापित किया है कि कुछ अतिरिक्त ध्वनि-चिह्नों के समावेश से सारी भारतीय जनभाषाएँ देवनागरी लिपि में लिखी-पढ़ी जा सकती हैं। दूसरी बात, भाषाई समस्या हिंदी भाषा और भारतीय भाषा-बोलियों की नहीं, लिपियों की है। भारत की सारी भाषाओं का जन्म (कुछ एक को छोड़) संस्कृत से हुआ है और उनमें एक किस्म का संरचनात्मक बहनापा है। उर्दू-हिंदी तो सगी बहनें हैं, इनके अलगाव का कारण लिपि है। लिपि के कारण ही उर्दू के नाजुक खयाल पर असर पड़ा है और उर्दू साहित्य से हम कितने वंचित रहे हैं, यह किसी से छुपा नहीं है। उर्दू में अरबी व फारसी के शब्द प्रयोग कर अलगाव बढ़ाने के प्रयास कम नहीं हुए, पर यह नुस्खा भाषाओं के बीच लिपियों के अंतर से बने अलगाव और दूरी को खत्म करेगा।

मेरी सखी व जानी-मानी लेखिका डॉ. विद्या केशव चिटको ने अपने अमरीका प्रवास में अंकगणित के अंकों की सहायता से देवनागरी लिपि की सारणी बनाई और हिंदी सीखने के इच्छुक व्यक्तियों को उस सारणी की सहायता से १ से २ सप्ताह की अवधि में देवनागरी लिपि में हिंदी लिखना-पढ़ना सिखा दिया। बोलने के लिए कैसेटों की सहायता ली गई। इस अनुभूत प्रयोग के आधार पर उक्त बड़बोली बात को सहज करने के लिए सभी भारतीय जनभाषा व बोलियों के आधार मूलभूत तत्त्वों से देवनागरी लिपि में ऐसा ही ढाँचा बनाया जाना चाहिए। ऐसा होने पर देवनागरी लिपि के माध्यम से देवनागरी हिंदी भारतीय जनभाषाओं तक पहुँचेगी और भारतीय जनभाषाएँ व बोलियाँ इस तरह राष्ट्रभाषा या शीर्षस्थ भारतीय जनभाषा हिंदी तक पहुँचेंगी। लिपियों की अड़चन छोड़ देवनागरी सीखना-जानना सुगम होगा।

भारतीय जनभाषा बोलियों के मूलभूत ढाँचे का देवनागरी लिपि में निर्माण होने में आनेवाली कठिनाई के संदर्भ में इनके संस्कृत से उद्‌भव की बात कही गई। दक्षिण की भाषाओं के अध्ययन का भी यह तथ्य है कि कन्नड़ और मलयालम में ४० से ६० प्रतिशत संस्कृत के शब्द हैं। चेन्नई में रहने का मेरा अनुभव है कि देवनागरी लिपि के माध्यम से तमिल सीखना अधिक कठिन नहीं है। देवनागरी लिपि में भारतीय भाषा व बोलियों के इन ढाँचों का सबसे बड़ा सदुपयोग देश भर के सभी प्रांतों में वहाँ के शहर, कस्बों, गाँवों, स्थानों एवं सड़कों के नाम लिखने में होगा और ये हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार का भी बड़ा माध्यम बनेंगे। देश में ही नहीं, विदेशों में भी सड़क व स्थानों के नाम पढ़ने हेतु विदेशी पर्यटक भी कामचलाऊ देवनागरी हिंदी सीखकर आएँगे।

अभी कुछ प्रांतों में सड़क व स्थानों के नाम स्थानीय भाषा के साथ रोमन लिपि में लिखे होते हैं, जिन्हें सामान्य व्यक्ति पढ़ नहीं पाता और विदेशी पर्यटक देवनागरी हिंदी सीखकर आने की जरूरत नहीं समझते, क्योंकि उनका काम चल जाता है। अत: रोमन लिपि में लिखकर यह घाटा हम क्यों उठा रहे हैं, क्या कोई बताएगा?

सभी प्रांतों में शहर, गाँव, सड़कों व स्थानों के नाम देवनागरी लिपि में स्थानीय जनभाषा के साथ लिखे होने पर क्या पूरा देश एकता के सूत्र में नहीं बँध जाएगा?

हम पश्चिम बंगाल गए तो वाहन चालक और हम सड़कों व स्थानों के नाम बँगला लिपि में लिखे होने से पढ़ न सके और इस कारण शांतिनिकेतन नहीं जा सके। ये नाम देवनागरी लिपि में लिखे होने पर ऐसे अनुभव की पुनरावृत्ति नहीं होगी और हिंदी भाषा का देशभर में प्रचार-प्रसार भी होगा।

देवनागरी लिपि हमारी संविधान-मान्य राष्ट्रीय लिपि है, जो हमारे संविधान निर्माताओं की सूझबूझ, खोज और भारतीय अस्मिता की रक्षा की दूरदर्शिता का फल है।

सुप्रसिद्ध वरिष्ठ लेखिका। कविता, लोकवार्त्ता, लोक-संस्कृति, समीक्षा, बाल साहित्य तथा अद्यतन सामाजिक-राजनीतिक विषयों पर विगत अड़तालीस वर्षों से अनवरत लेखन। प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में लगभग नौ सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित, विविध संग्रहों तथा शोधग्रंथों में शामिल। छोटे-बड़े कई दर्जन पुरस्कार-सम्मानों से अलंकृत। संप्रति लेखन में रत।

देवनागरी लिपि हमारी भारतीय अस्मिता का भंडार, हर क्षेत्र के सहस्त्रों वर्षों के ज्ञान-विज्ञान के भंडार अमूल्य धरोहर की कुंजी, भारतीय अस्मिता की श्वास, हृदय की धड़कन व जीवन है, क्योंकि यह विश्व के पहले लिखित ज्ञान-भंडार की भाषा संस्कृत की लिपि है। जैन व बौद्ध धर्म-ग्रंथों की भाषा पाली एवं प्राकृत की लिपि है। हिंदी भाषा मराठी, पाली व प्राकृत की लिपि है। हिंदी भाषा मराठी एवं इसकी साहित्यिक बोलियों ब्रज, अवधी, बुंदेली, भोजपुरी और अनेक बोलियों, जो शब्दों का अक्षय भंडर है, की लिपि है। अफ्रीका की कुछ भाषाओं, जिनकी अपनी लिपि नहीं है, उन्हें देवनागरी में लिखने के प्रयास चल रहे हैं, पर स्वतंत्रता के बाद ही अंग्रेजीपरस्त सत्ताधीशों के प्रयास हिंदी और देवनागरी लिपि को उसके पद से खदेड़ने के रहे तथा रोमन, लिपि को स्थान देने के लिए तर्क-कुतर्कों का लंबा सिलसिला चला। हिंदी राष्ट्रभाषा, राजभाषा व संपर्क भाषा कही गई, तथापि यह डाकतार विभाग, रेलवे और बैंकों में भी नहीं रही। देवनागरी लिपि में आई हिंदी भी खत्म हो गई है। धनादेश (मनीऑर्डर) आवेदन, पत्र गणक पर लिखी रोमन में आता है।

**और भी बड़ा विचारणीय पक्ष है कि क्या पिछले डेढ़ सौ वर्षों के हिंदी साहित्य में देश के प्रत्येक प्रांत, अंचल, जनपद की भाषाई संस्कृति जो प्रेमचंद, फणीश्वर नाथ रेणु, शिवप्रसाद सिंह, गोविंद मिश्र, राजेंद्र अवस्थी, कृष्णा सोबती, मैत्रेयी पुष्पा—नाम और भी बहुत से यहाँ जुड़ सकते हैं, के साहित्य ने जन-जन तक, देश-विदेश तक हिंदी के माध्यम से पहुँचाई है, क्या यह जबरिया लेखन उस सांस्कृतिक अस्मिता को साहित्य के पटल पर रखने का, जन-जन से जोड़ने का, विश्वव्यापी बनाने का अगला कदम है?**

भारतीय जनभाषाओं की समस्या भाषाओं की है ही नहीं, यह समस्या लिपियों की है और यह कुछ ऐसी है, जैसे किसी भोज्य पदार्थ से लगाव के साथ उसके बरतन से भी लगाव हो जाए।

मैं चिंतित हूँ कॉन्वेंट और अंग्रेजी माध्यम की अपनी नई पीढ़ी के लिए, जो देवनागरी लिपि की हिंदी नहीं पढ़ती। यह पीढ़ी क्या अपनी भारतीय अस्मिता के समूचे संस्कृत भाषा के साहित्य से कटकर शून्य नहीं रह जाएगी?

रोमन लिपि का भूत थककर भी नहीं थका। संवाद माध्यमों में उठ बैठता है। प्रांतीय भाषाओं पर तो उसने कब्जा जमा ही रखा है, मगर उनके कार्यक्रमों के नाम-उद्धरण यदि देवनागरी में आएँ तो देश की सांस्कृतिक एकता बढ़ेगी और भारतीय जनभाषाओं का भी विस्तार होगा। हमारे सत्ताधीश देवनागरी हिंदी को शासकीय क्षेत्रों में चाहे जितना खदेड़ें, पर देवनागरी हिंदी आज भी चलचित्र, दूरदर्शन व रेडियो पर देश-विदेश में अपनी संजीवनी शक्ति से जिंदा है और जिंदा रहेगी।

## क्या होगा हिंदी की भाषाई संस्कृति का

पिछले तीन-चार दशक से शैक्षणिक सुविधाओं के कारण पूर्व का ऑक्सफोर्ड बने और देश के कोने-कोने से आईटीज में काम करने, पढ़ने आए विविध भाषाभाषी समुदायों के सभी प्रकार के समारोह-आयोजनों में शामिल होने का, देखने का मौका मिला है। इस समय सभी भाषाई संस्कृतियों के दृश्य मेरी आँखों में झूल रहे हैं। भविष्य के एक भयावह परिदृश्य की रचना करते देश के कोने-कोने से उठ रहे इस प्रश्न के दंश उत्तर माँगते हैं, उपचार चाहते हैं कि तमिल, तेलुगु, मराठी, बँगला, गुजराती आदि भारतीय भाषाओं की ही नहीं, हिंदी की अपनी उपभाषाओं—ब्रज, अवधी, भोजपुरी, बुंदेली, मगही, मैथिली, छत्तीसगढ़ी की जैसी भाषाई संस्कृतियाँ हैं, उर्दू-अंग्रेजी की जैसी भाषाई संस्कृति हैं, क्या हिंदी की वैसी अपनी भाषा-संस्कृति है?

उत्तर एक ही था और है, ये सब भाषाई संस्कृतियाँ ही हिंदी की भाषाई संस्कृति हैं। हिंदी साहित्य की अस्मिता हैं। हिंदी की इनसे अलग अपनी कोई भाषाई संस्कृति नहीं है। हिंदी की भाषाई संस्कृति इन्हीं उपभाषाओं, भारतीय भाषाओं की भाषाई संस्कृति का समुच्चय है।

तब फिर पिछले दो-तीन दशक से हिंदी की क्षेत्रीय भाषा और बोलियों में जबरिया लेखन-प्रकाशन का जो दौर और उफान उन्हें संविधान की ८वीं अनुसूची में शामिल कराने के साथ आया है, 'गली का राजा' बनने की हमारी जो कोशिशें हैं, वे क्या हिंदी पर कुठाराघात और भाषा-बोलियों के लिए आत्मघाती नहीं हैं?

इस जबरिया लेखन-प्रकाशन के पीछे सबल तर्क है, क्षेत्रीय भाषा और बोलियों के विकास का। आंचलिक और जनपदीय लोक-सांस्कृतिक मूल्यों को आधुनिक विधाओं में प्रस्तुत कर नई पीढ़ियों से जोड़ने का।

पर इस पक्ष पर हम जरा सा सोचें, ब्रजभाषा का गद्य जब 'प्रेम सागर', 'सुख सागर' से आगे नहीं बढ़ सका तो आज ब्रज, बुंदेली, मगही, मैथिली में लिखा गद्य क्या 'कितने पाकिस्तान' की रचना कर सकेगा? यह लेखन कितनों तक पहुँचेगा और कैसे यह जनपदीय संस्कृति और जीवन-मूल्यों को प्रस्तुत कर उन्हें अखिल भारतीय स्तर दे सकेगा?

और भी बड़ा विचारणीय पक्ष है कि क्या पिछले डेढ़ सौ वर्षों के हिंदी साहित्य में देश के प्रत्येक प्रांत, अंचल, जनपद की भाषाई संस्कृति जो प्रेमचंद, फणीश्वर नाथ रेणु, शिवप्रसाद सिंह, गोविंद मिश्र, राजेंद्र अवस्थी, कृष्णा सोबती, मैत्रेयी पुष्पा—नाम और भी बहुत से यहाँ जुड़ सकते हैं, के साहित्य ने जन-जन तक, देश-विदेश तक हिंदी के माध्यम से पहुँचाई है, क्या यह जबरिया लेखन उस सांस्कृतिक अस्मिता को साहित्य के पटल पर रखने का, जन-जन से जोड़ने का, विश्वव्यापी बनाने का अगला कदम है?

हम भावोन्माद में न बहें, ठंडे दिमाग से सोचें कि भाषा और बोलियाँ उन्हें बोलने और पढ़नेवालों में जीवित रहती हैं। उनमें लिखना और उसका छप जाना उन्हें जीवित नहीं रखता। अवधी में लिखा तुलसीदासजी का 'रामचरितमानस' आज विश्व में उसे पढ़नेवालों से ही जीवित है, जबकि अवधी का ही जायसी का 'पद्मावत' जैसा महाकाव्य अब कहीं-कहीं पाठ्यक्रमों में हो तो हो।

भाषा और बोलियाँ भाषाई संस्कृति के लोक-सांस्कृतिक जीवन मूल्यों के प्रस्तुतीकरण का माध्यम भर हैं, ये स्वयं में संस्कृति नहीं। वक्त के साथ यदि माध्यम तदनुरूप न बदले तो संप्रेषण बाधित होता है। ब्रजभाषा के पहले उपन्यास 'पूँछरी कौ लौठा' में अब ब्रज और ब्रजभाषा नाम के लिए हैं। आज शायद उसका कोई नाम भी न जानता हो, किंतु गोविंद मिश्र के उपन्यास 'धीर समीरे' में ब्रज की पूरी भाषाई संस्कृति और सांस्कृतिक अस्मिता बोलती है। असंख्य हिंदी जाननेवाले-पढ़नेवालों तक पहुँचती है और जब तक हिंदी-अंग्रेजी से पूरी तरह अपदस्थ नहीं होती, पहुँचती रहेगी।

अस्तु, क्षेत्रीय बोली-भाषाओं में यह लेखन उन्हें समृद्ध तो बना सकता है, पर उन्हें जीवित नहीं रख सकता। यह लेखन हिंदी के भाषाई विकास का हिस्सा बन उसे अपने में सुदृढ कर सकता है।

जीवित रहने का प्रश्न पहले उठता है। हमारे देश का युवा वर्ग, जिसे इस लिखे को लिखनेवाली पीढ़ी के बाद पढ़ना है। इस धरोहर का जो उत्तराधिकारी है, वह तो हिंग्लिश बोलता है। अंग्रेजी पढ़ता-लिखता है, इस युवा वर्ग के साथ आज देश भर में बोली समझी जाती—पिछले सौ साल में कहें उसके जन्म के साथ की भाषा खड़ी बोली हिंदी के ही टिक पाने का प्रश्न है तो यह क्षेत्रीय भाषाओं का लेखन इन बोलियों को बोलने-लिखने, पढ़नेवाली ४० से ऊपर की पीढ़ी के साथ अलमारियों की सज्जा बन समाप्त हो जाएगा।

कहाँ बचेंगी ये क्षेत्रीय भाषा-बोलियाँ? कृषि सभ्यता और सामंती व्यवस्था की बहुत सी शब्दावली तो चलन से बाहर हो मूल स्थानों में ही मर चुकी है।

बात एकदम साफ है कि जनपदीय बोलियों, क्षेत्रीय-प्रांतीय भाषाओं से हिंदी का और इनकी सांस्कृतिक अस्मिता का जो रिश्ता हिंदी के स्वतंत्रता पूर्व एवं स्वतंत्रता के बाद के साहित्य में रहा, वही रिश्ता क्षेत्रीय भाषा और बोलियों व हिंदी के लिए जीवन-संजीवनी है।

हिंदी बुंदेली नौनी, ब्रजभाषा सुघर मलूक, उर्दू 'कमसिन', मराठी 'देखणी', गुजराती दर्शनीय और पंजाबी सोणी के साथ ही इन्हीं से सुंदर है। यदि हम अपनी करतूतों से बाज न आए तो हिंदी की भाषाई संस्कृति और अस्मिता 'ब्यूटीफुल' में बँधकर सीमित रह जाएगी, परायी हो जाएगी।

१०३४/१ मॉडल कॉलोनी, कैनाल रोड,
पुणे-४११०१६
दूरभाष : ०२०-२५६६३३१६

# बेहाल व्यवस्था

लघुकथा

• सत्य शुचि

तबादलों से विद्यालय आधा खाली हो चुका था। चूँकि पहले से ही रिक्त पद चल रहे थे। अब उस विद्यालय की चहल-पहल कम नजर आने लगी और परीक्षाएँ सिर-माथे थीं।

परीक्षा प्रभारी बसंत कुमार जोशी बोले, ''सर! हर हाल में परीक्षाएँ तो हमें संपन्न करवानी ही हैं!''

''बेशक, करवानी हैं···'' प्रिंसिपल उसे निहारने लगे।

''तब सर, पाँच कमरों का एडजस्टमेंट कैसे करना है?'' उसने समस्या का समाधान चाहा।

''करना तो है ही।'' प्रिंसिपल ने सुझाया, ''स्टाफ के अलावा इन पाँचों कमरों के लिए दो में स्कूल के बाबू और दो में चपरासी···''

''ठीक है, साब!'' सहमति में उसने गरदन हिलाई, ''सर, एक कमरे की समस्या अभी भी रहेगी।''

''स्वीपर है स्कूल का···'' बेलाग अंदाज में प्रिंसिपल कह गए।

''ना सर,···जरा विद्यालय की शाख-नाक···!'' दबी जबान से उसने प्रतिरोध जताया।

''तो फिर मुझे लगा दो कमरे में, क्या हर्ज है?'' प्रिंसिपल ने विकल्प सुझाया, ''नौकरी है···यहाँ नहीं बैठा, वहाँ पर बैठ जाऊँगा। अंत-पंत, व्यवस्था तो हमें ही मिल-जुलकर···''

''नहीं सर···! ऐसे में स्वीपर को ही घर से बुलवा लेते हैं। पास ही मकान है, आ जाएगा।'' परीक्षा प्रभारी ने अपनी दृढ़ता दरशाई।

''देख लो, जो तुम उचित समझो।'' और बेमन से प्रिंसिपल गेलरी में आकर टहलने लगे।

साकेत नगर, ब्यावर-३०५९०१
(राजस्थान)
दूरभाष : ०९४१३६८५८२०

# कहाँ रहोगे तुम

● गिरिराजशरण अग्रवाल

उग रहे हैं कंक्रीट के जंगल
बढ़ रहे हैं आदमी
घट रहे हैं पेड़
साँस लेने की भी
कोई जगह नहीं
घुट रहा है दम।

आदमी का मलमूत्र
फैक्टरियों का कचरा
अनावश्यक जहरीले पदार्थ
इकट्ठे हो गए हैं
नदियों-तालाबों में
धुआँ ही धुआँ है
अलावों में
विषैला और घना
सब ओर तना।

मैंने मिला दिए हैं
इतने कीटनाशक
और रासायनिक पदार्थ
मिट्टी में
अपने लालच में।
उसकी एक-एक नस से
खींच ली है उर्वराशक्ति
बना दिया है बंजर
और खंजर पैदा कर दिए हैं
मेरे ज्ञान ने।

अब कोई फसल नहीं उगेगी
उगेगा तो सिर्फ शहर उगेगा
क्योंकि मैंने
वे बीज तैयार कर दिए हैं
जो केवल
शहर उगलेंगे
और फिर
मेरी खुद की साँसों को निगलेंगे।

मैंने अपने ज्ञान का विस्तार
उस विज्ञान के लिए किया है
अपनी सारी शक्ति
परमाणु हथियारों के निर्माण
में लगाई है,
जो फैला रहे हैं
धरती से आकाश तक
धुएँ का सैलाब।

अब वर्षा तो होगी
लेकिन बरसेगी धूल
गैसीय कण और अम्ल
जो धरती को
ले लेंगे अपने आगोश में
फिर धरती से आकाश तक
एक ही मंजर होगा—
खाँसते लोग
काँपते लोग
एक-एक साँस को तरसते लोग
मरते लोग।

सुप्रसिद्ध वरिष्ठ लेखक। गीत, गजल, कहानी, एकांकी, निबंध, हास्य-व्यंग्य, बालसाहित्य एवं समालोचना विधाओं में विपुल साहित्य सृजन। ढेरों पुरस्कार एवं सम्मानों से सम्मानित। इनके साहित्य पर देश के विविध विश्वविद्यालयों में १५ से अधिक शोध-कार्य संपन्न हो चुके हैं।

यह सब-कुछ मैंने
नशे में नहीं किया
पूरे होशो-हवास में किया है
वास्तव में मैंने
विज्ञान को जिया है।
बढ़ती आबादी
घटते जंगल
घोर प्रदूषण का मंगल
बढ़ेगा इतना ताप सूर्य का
असहनीय हो जाएगा
क्षीण हो जाएगी
ओजोन परत
जो रोकती है सूर्य के ताप को
सहन नहीं कर पाएँगे हम
पशु और पक्षी
उस ताप को
और तोड़ देंगे दम तड़पते हुए
साँस की प्रप्तयाशा में
हरी-भरी क्यारियाँ
राख का ढेर हो जाएँगी
पेड़ों की डालें
झुलस जाएँगी।

अस्तित्व खो देंगे वृक्ष
क्योंकि जहरीली गैसें
उनपर हावी हो जाएँगी
डस लेंगे आवोहवा को
जहरीली किरणों के साँप
तब आप
कहाँ से पाएँगे
फल-फूल और वनस्पतियाँ?

और नदियाँ भी
तोड़ देंगी दम
अपने विषैल कचरे में
या चली जाएँगी दूर
मनुष्य की छाँव से
जो अपने लालच में
पल-पल प्रकृति को
रौंद रहा है
बिना विचारे
नहीं-नहीं, सोच-समझकर
जान-बूझकर
पूरी चेतना से।

जब मैंने हथियार बनाए हैं
तो कहीं तो
उनका प्रयोग करूँगा
मारूँगा या मरूँगा।

बी-२०३, पार्वफव्यू सिटी-२
सोहना रोड, गुरुग्राम-१२२०१८
दूरभाष : ०७८३८०९०७३२

# और वह रो पड़ा

• तुलसी देवी तिवारी

रोना कौन कहे, आज तक उसे उदास भी किसी ने नहीं देखा। जब उसकी माँ का देहांत हुआ था, तब वह मात्र ग्यारह वर्ष का था। मोहल्ले की औरतें उसे छाती से चिपका-चिपकाकर रो रही थीं, किंतु उसकी आँख से एक बूँद भी न टपकी। होंठ फैले रहे, जैसे आँसू रोकने के लिए हँस रहा हो।

'अभी लइकाई बा का जानसू जे का भ गईल।' औरतें उसके भोलेपन पर तरस खाती रो रहीं थीं, वह फैले होंठों से माँ का दाह कर्म कर आया था। उसने कभी किसी की बात नहीं काटी। बाप के बारे में वह कुछ नहीं जानता। माँ ने कभी बताया नहीं। कुछ लोग कहते हैं कि वह किसी साधु की औलाद है, जिसने लोकापवाद के भय से कभी अपना नाम नहीं दिया उसे। चूँकि उसकी माँ इस गाँव की बेटी थी, इसलिए सारे लोग उसके नाना-नानी, मामा-मामी या मौसी, दीदी-भइया लगते थे। जहाँ चार काम करता, वहीं खाकर सो जाता। उसे आया देखकर मामियों की गगरी खाली हो जाती, आटा खतम हो जाता या नाली जाम हो जाती। 'जा त बबुआ दूगो लकड़ी फारि द! हम तहरा के चाह बना दीं।' बहुत दिनों से पड़ी पेड़ की जड़ फाड़ते-फाड़ते कब बेरा उतर जाता, पता ही न चलता। सबके खाने के बाद कुछ ताजा, कुछ बासी करके मिल ही जाता पेट भरने लायक। भइया लोगों को स्कूल पहुँचाने जाना उसे बहुत अच्छा लगता।

'कोई मारे तो भइया को बचाना रघुबर! यह तुम्हारा छोटा भाई है। गुरुजी मारें तो अपना हाथ रोक देना। रात में तुम को कढ़ी-भात खिलाऊँगी।' लड़के कूट-कूटकर मारते, गालियों की तो कोई बात ही न थी। वह अपनी देह के लाल-नीले दाग हँसते हुए दिखाता। जैसे प्रसाद पाया हो। पूरे समय स्कूल में बैठता, उसे सबकुछ अपने आप याद हो जाता। भाइयों से पूछे गए प्रश्नों के उत्तर वह दरवाजे के बाहर से तुरंत दे देता। गुरुजी कई डंडे लगाते।

'क्यों बे, भाड़े के टट्टू, तुझसे पूछा क्या किसी ने?' वह दाँत निकाले मार खाता। मास्टर लोगों की मार के डर से बच्चे पढ़ने आने से डरते थे, यहाँ तक कि घर छोड़कर भाग जाते थे। उस समय स्कूल में दर्ज संख्या इतनी कम हो गई थी कि तीन मास्टर अन्यत्र भेजे जाने की बात चल रही थी। उसके हँसते-हँसते ना-ना करते-करते भी बहिनजी ने उसका नाम न जाने क्या गुनताड़ा करके कक्षा चार में लिख लिया।

'न कपड़ा न लत्ता, न किताब न कॉपी, न कलम न दवात, का पढ़ूँगा और पढ़कर कौन सा लिखनी करूँगा?' वह शरमा-शरमाकर

सुपरिचित कथाकार। अब तक सात कहानी-संग्रह, दो यात्रा-संस्मरण, एक वृहद उपन्यास, दस बालोपयोगी पुस्तकें, 'पुकार जगन्नाथ की' (यात्रा-संस्मरण) प्रकाशित।छत्तीसगढ़ी राजभाषा सम्मान, न्यू कबीर सम्मान, राज्यपाल शिक्षक सम्मान, छत्तीसगढ़ रत्न, राष्ट्रपति पुरस्कार एवं साहित्य मंडल, नाथद्वारा से मानद उपाधि।

अपने में सिमटा जा रहा था। उसके गुलाबी चेहरे पर हँसी लगातार नृत्य कर रही थी।

'अपने बेटे का कपड़ा-किताब-कॉपी सब हम तुमको देंगे, और हाँ, पढ़ना भी जरूरी नहीं है, नाम चलने दो! रहो तो हाजिरी बोल दिया करो बस! हमको अपने गाँव में रखना चाहते हो तो।' वह जी भरकर हँसा था—आप मिया मँगते द्वार खड़े दरवेश, वह कैसे बहिनजी को गाँव में रख सकता है? हाँ, गुरुजी की जितनी ताकत मारने की है, उतनी मार अवश्य खा सकता है। दो-चार दिन गाँव में बड़ी हँसाई हुई। मामियाँ उसे बुलाकर बार-बार पूछतीं, 'कइसे बोलीं बहिनजी रघुबर?' वह हू-ब-हू नकल उतारता। न जाने क्या हुआ कि गुरुजी ने रघुबर को मारना-पीटना बंद कर दिया। अपने घर का काम कराते और खाना दे दिया करते, उन्हीं के ओसारे के एक कोने में वह बिजली की रोशनी में पढ़ भी लेता। आठवीं में जब बोर्ड परीक्षा का परिणाम निकला तो पूरे स्कूल में वही एक पास हुआ।

'आरे रघुबरवा ने नाक रख ली, वरना यही होता कि मास्टर लोग मुफ्त की तनख्वाह लेते हैं।' बड़े गुरुजी ने आँखों में स्नेह भरकर देखा था उसे। वह मंद-मंद मुसकराता रहा।

'ई रघुबरवा के देखीं जा मजाल की हमनी के लइकन के फेल करवा के अपने पास हो गइल। बड़ा नू सुरतवल्ला है, अइसा निमकहरामी किया कि पूछो मत, मास्टर के···धो-धो के बड़ा हुसियार बन गया है जुठखोर कुत्ता, एकर माटी लागो, एकर खटिया कटाउ।' वह हँसता ही रहा। रात में सब फेलवरों ने मिलकर बहुत मारा। वह सब सह गया। उसी रात कलकत्ता जानेवाले जमुना अहीर के पैर पर गिर गया था जाकर, 'ए मामा! हमको भी लेते चलो अपने साथ। आपकी सेवा करूँगा! अब यहाँ रहा नहीं जाता। देखो न, बिना मतलब सब लोग परेशान हो रहे हैं, जो पूछा था सो लिख दिए, उतने में समय खत्म हो गया, अब आप ही बताइए, हर एक से कॉपी कैसे बदल सकता था? न हमको पढ़ने

की चाहत है, न पास होने की। ये लोग ही अपने बच्चों को बचाने के लिए मुझे स्कूल भेजते थे। वहाँ बहिनजी ने नाम लिख लिया।' उसने मुसकराते हुए विनय की थी। उस रात वह गंगा किनारेवाली अपनी छोटी सी कुटिया छोड़कर निकल गया था। आज वह लॉन में कुरसी डाले अपनी पत्नी के साथ बैठा गंगाजी की ओर से आने वाली ठंडी-ठंडी हवा खा रहा, अतीत उसके दिमाग में किसी चलचित्र की भाँति कई जीवंत चित्र दिखा रहा था।

''वे दोनो कौन हैं ? लगता है, उसी से मिलने आ रहे हैं । कोट का ऐसा बिरला ही कोई होगा, जो उससे मिलकर न गया हो। होंगे कोई संगी-साथी बचपन के।'' वह उसी ओर देख रहा था।

''लोग कह रहे थे कि रघुबरवा है। अब तो रघुनाथ राय हो गया है। हमारे ही साथ तो पढ़ता था, बाहर निकलकर देखो, कैसे ठाट-बाट बन गए हैं इसके। यहाँ तो आँख पर घुंनघुटी झूमती रहती थी। अच्छा रामजी भइया, चलो मिल लेते हैं, कुछ भी हो, आखिर में हमारा संगी है!'' वे आपस में धीमे स्वर में बातें कर रहे थे, जिसे वह सुन नहीं पाया।

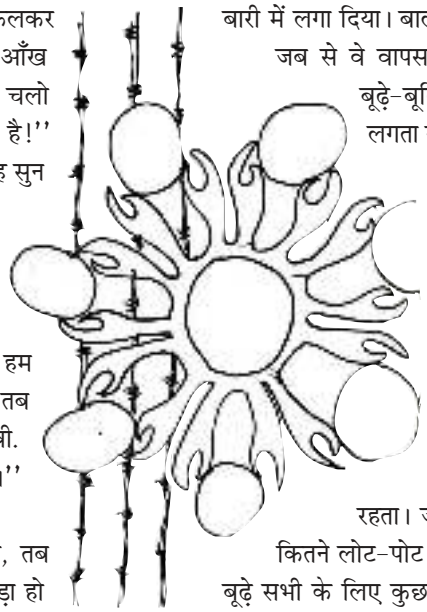

''अरे भइया, आज तक समझ में नहीं आ रहा था कि इतना सुंदर घर कौन बनवा रहा है, बाहरे-बाहर यही बनवा रहा था, एक बड़ी गाड़ी में सामान आया है, कल से ही लोग जा रहे हैं मिलने, हम तो सोचते ही रह गए, गोरुआरी से फुरसत मिले तब तो, बेटा-बहू को दूध चाहिए, अपना तो उन्हें टी.वी. मोबाइल से फुरसत नहीं है, हम ही जवान हुए हैं।'' रामजी के मुँह से अंतर की पीड़ा बोल उठी।

जब ये उसके नए बने घर के सामने पहुँचे, तब अँधेरा हो चुका था। वह उन्हें देखते ही उठकर खड़ा हो गया। उसकी आँखों में अपरिचय के भाव देख ये स्वयं बोल पड़े, ''नहीं पहचाने न रघुबर भाई ? हम तहार रामजी आ ऽ ई तहार लालजी!'' उनकी आँखें खुशी से छलक आई थीं।

''तहरा लोग के कइसे नहीं पहचानूँगा। तहरा लोग के बस्ता ढोवत-ढोवत आठ पास हो गए थे हम।'' वह गर्मजोशी से मिला उनसे।

''इतने दिन कहाँ रहे भाई, कभी गाँव की याद भी नहीं आई क्या?''

रामजी की बात सुनकर वह अपनी विशिष्ट हँसी हँस पड़ा। ''भाई! न गाँव कभी भूला, न तुम लोग ध्यान से उतरे। मैं तो गंगा मइया का बच्चा हूँ। अपने माँ-बाप नहीं थे तो क्या हुआ, गाँव भर के प्यार-दुलार से जी गया। अब जा के संसार के प्रपंच से छुटकारा मिला है। दोनों लड़के अपने पैर पर खड़े हो गए हैं, शादी-बियाह करिये दिया। बस अब गंगाजी के कोरा में अराम करेंगे। तोहरा भउजी एही गाँव के बेटी हैं। आप को याद होगा, हम जमुना यादव के संग यहाँ से गए थे, तब ये छोटी थीं। हम यादवजी के साथ काम करते-करते अपना व्यापार बढ़ाते गए। पहिले कपड़े की फेरी लगाई, फिर छोटा सा होटल खोल लिया। गंगा बराबर साथ देती रही। कारोबार साझे में ही था। समय आने पर यादवजी ने हमारी शादी कर दी। उनके स्वर्गवास के बाद गंगा हिस्सेदार बनी। भगवान् ने हमारी मदद की भइया, दोनों बेटे पढ़-लिखकर कमाने दुबई चले गए। तब हम लोग अपने गाँव लौट आए।'' वह मुसकराता जा रहा था और बोलता जा रहा था। अभी बातें चल ही रही थीं कि गंगा गरम-गरम पकौड़ियाँ ले आई।

''गंगा बहिन तोहार नांव त लछिमी होना चाहिए। हमरा भइया के कहाँ-से-कहाँ पहुँचाई दिए।'' वे दोनों बेहद प्रसन्न थे। थाली भर पकौड़ियाँ पलक झपकते पार कर दीं। उनके पास बताने को क्या था, तीन साल आठ फेल जो हुए तो बस माई बाबू ने बियाह करके खेती-बारी में लगा दिया। बाल-बच्चे पल-पला गए, चल रही है जिंदगी।

जब से वे वापस आए थे गाँव में नई रौनक सी आ गई थी। बूढ़े-बूढ़ियों की तो जैसे बन ही आई थी। बड़ा जमघट लगता सुबह-शाम, न जाने कितना रुपया कमाकर लाया था रघुबर? रोज सुबह-शाम बेटे-बहू का फोन आता—''पैसे की चिंता मत करना पापा। हम और भेज देंगे। जैसे आप लोगों को अच्छा लगे, वैसे ही रहिए।'' वाह रे तकदीर रघुबरवा की। लोग सिहाते।

''कवन सुख ये भइया? जाँगर न चले तो बैठे रहो बिना खाए-पिए। पइसा पेट भरेगा क्या? ये समय तो बेटा बहू के साथ चाहिए।'' लोग जोड़-घटाना करते रहते। वह हमेशा हँसता रहता। जब बोलता, हँसी की ही बात बोलता, न जाने कितने लोट-पोट करनेवाले किस्से, संस्मरण याद थे उसे। बच्चे-बूढ़े सभी के लिए कुछ-न-कुछ था उसके अनुभव के पिटारे में। गंगा पढ़नेवाली लड़कियों को खाना बनाना सिखाती, होटलवाली होने के कारण उसे पता था कि कौन से व्यंजन को और स्वादिष्ट कैसे बनाया जा सकता है। नई बहुए आतीं उससे कलकत्ते के जनजीवन के बारे में पूछने, खास करके बंगाल के काला जादू के बारे में उनके बहुत से प्रश्न होते। गाँववालों की संगति में जाड़े में रामायण होता तो बरसात में महाभारत। आराम से दिन गुजर रहे थे उनके। लोग जब पूछते कि भउजी आपके बेटे बहू कब आएँगे गंगा उदास हो जाती। रघुबर ठठाकर हँसने लगता।

''आएँगे जब खूब रुपया कमा लेंगे, चिंता क्या है? तुम भी तो हमारे बेटे-बहू ही हो! हम दूसरा नहीं मानते, तुम हमें अपना न मानते हो तो बताना।'' पूछनेवाला लजाकर चुप हो जाता।

तीन साल तो बीत ही गए होंगे उन्हें वापस आए। गाँव में होनेवाला जुआ बंद हो गया था। लोग काम-धंधे में लगे रहने लगे थे। गाँव से शराब की दुकान उठवाने के लिए उसने गाँववालों को तैयार किया था। धरना-प्रदर्शन, शोर-शराबे के बाद बस्ती के बीच से दुकान उठकर गाँव के बाहर चली गई थी। अब रघुबर की सीख थी कि कोई भी शराब न

खरीदे, ताकि दुकान खुद ही बंद हो जाए। इसके लिए दुकान पर कुछ लोग नजर रखे रहते थे। गंगा ने शायद कुछ देखा था, वह तेजी से घर की ओर आ रही थी कि ईंट से भरे ट्रक ने उसे ठोकर मार दी। कोई कुछ कहता या करता, उसके पहले ही वह ट्रक नजरों से ओझल हो गया। गाँव में कोहराम मच गया। औरतें छाती पीट-पीटकर रोने लगीं। रघुबर ने देखा, एक पल को लगा जैसे उसकी आँखों की ज्योति बुझ गई हो, उसने दाँतों पर दाँत चढ़ाकर सारा आत्मविश्वास समेटा और थोड़ी ही देर में सामान्य जैसा दिखने लगा। बच्चों को फोन लगाने लगा तो लगा ही नहीं। इस समय शायद वे अपने काम पर होंगे। काम के समय मोबाइल बंद रखना पड़ता है, उन्होंने ही बताया था, अत: उनके आने की उम्मीद करना व्यर्थ था। रामजी और लालजी के बेटों ने सारा इंतजाम किया। बहुएँ काका को घेरकर बैठी आठ-आठ आँसू बहाती रहीं। गंगा के शव को पोस्टमार्टम के बाद जब पुलिसवालों ने दिया तब तक रात हो चुकी थी। रात में तो दाह-संस्कार होता नहीं, इसलिए बर्फ की सिल्ली पर सुलाकर शव को रखा गया।

''हमारी सीता जैसी भउजी हमें छोड़ गई। गंगामाई उस पापी का नाश करें, जिसने देवी समान भउजी को कुचला।'' रामजी रह-रहकर रो पड़ता। रघुबर जैसे काठ हो गया हो। न एक शब्द मुँह से बोल रहा था न उसकी आँखों में जरा भी नमी आई थी।

''ई मरदा पागल-वागल ह का ए दादा? पूरा गाँव गंगा खातिर छछनि-छछनि के रोवता ऽ···आ एकरा आँखि ले पसेइवो नइखे फूटत।'' कई महिलाएँ उसे कोस रही थीं।

''अरे, तुम लोग बड़े नीक हो, जरा सा कुछ हुआ कि फें···फें करने लगते हो। रघुबर भइया मर्द हैं मर्द! कितनी भी विपत्ति आए, धीर-गंभीर बने रहते हैं। आखिर कार ओह जमाने के आठ पास हैं, जब पाँच-दस गाँव में सब लिख लोढ़ा पढ़ पथरा हुआ करते थे। देश-विदेश घूम आए ह, रोएँगे तब भी तुम्हीं लोग हँसोगे कि देखो, मेहरारू खातिर कइसे रो रहा है, एकरा लाजो नहीं है।'' लालजी ने फटकारकर महिलाओं को चुप कराया।

''ए भइया आँसू मत रोको, बह जाने दो, इतना कड़ाई से का हासिल होगा?'' रात के अँधेरे में जब अधिकांश लोग सो गए, तब रामजी ने उसके दु:ख को पिघलाने की कोशिश की।

''का बोलें भइया? रामजी ने दु:ख सहने के लिए ही संसार में भेजा है। अब जब लगा कि सारे दु:ख कट गए, तब देह में से जान ही निकाल लिए, उनके बिना अब क्या रह गया रोने-हँसने के लिए?'' उसके होंठ ऐसे फैले थे जैसे उसकी तकदीर पर हँस रहे हों।

दूसरे दिन सुबह सात बजे नियमानुसार उसने अपने बेटों से फोन पर बातें कीं। उसने गंगा के साथ घटी दुर्घटना की बात छिपा ली, बस इतना कहा, ''तुम्हारी माँ बहुत बीमार है, अस्पताल में भरती है, जल्दी से जल्दी आने की पूरी कोशिश करना, बेटा।'' उसकी आवाज में जरा भी कंपन नहीं था।

''क्या करूँगा बता के? इतनी जल्दी वे कैसे पहुँच पाएँगे?'' घबराहट में कहीं और कोई अनवाद न हो जाए, इसलिए वह सच्चाई छिपा ले गया।

दूसरे दिन वह गाँववालों के साथ गंगा को गंगाजी में तिरोहित कर आया। रामजी ने सारे कर्मकांड संपन्न कराने का जिम्मा ले लिया। लालजी ने तेरही की जिम्मेदारी ली। गंगा की लगाई नीम के नीचे कुश गाड़कर गाँव भरके नर-नारी उसकी आत्म-शांति के लिए तर्पण करते। पंडित जैसा-जैसा कहते, रघुबर यंत्र की भाँति करता जाता। तेरही बीत गई, बेटे नहीं पहुँचे। सब लोग पीठ पीछे अपने मन की भड़ास निकालने लगे थे।

''भगवान् की करनी भी जानी नहीं जाती, गंगा दीदी की कोख से ऐसी औलाद ने जन्म लिया, सोचकर मन कसेला हो जाता है। बीमारी का समाचार सुनकर एक लाख रुपया भेज दिए, जैसे सबकुछ पैसा ही है। आज अगर होते तो बाप को सँभालते, उन्हें देखकर रघुबर भइया को भी थोड़ा अच्छा लगता, मैं तो ऐसी औलाद का कभी मुँह न देखूँ, उनके रहने न रहने से क्या घाटा-नफा है?''

समय के साथ-साथ रघुबर के घर की भीड़ कम होने लगी। वह तो अब भी हर मिलनेवाले से हँसकर ही मिलता, परंतु मिलनेवाले उसकी हँसी में से न जाने कैसे गम के रेशे तलाश लेते।

रामलाल और लालजी ज्यादातर रघुबर के साथ छाया की तरह लगे रहते। अपने घर से खाना बनवाकर लाते और एक साथ तीनों बैठकर खाते। इधर दो-चार दिन से बच्चों के फोन नहीं आ रहे थे। वह चिंतित था। एक दिन सुबह-सबेरे नहा-धोकर तुलसी में जल ढाल रहा था कि उसकी नजर अपने घर की ओर आती दो कारों पर पड़ी, गाड़ी रोककर कार पर सवार व्यक्ति कुछ पूछ रहा था, शायद किसी का पता! या कहीं का रास्ता! उसका दिल जोर-जोर से धड़कने लगा। कहीं मेरे मोहन-मिलन तो नहीं आ गए? उसने आँखों पर हथेली लगाकर ध्यान से देखा, चरवाहा उसकी ओर उँगली से संकेत कर रहा था।

''अरे, यह तो मेरी ओर ही उँगली दिखा रहा है। देखता हूँ, क्या पता मेरा मन सच कह रहा हो, मेरे बेटे आ रहे हों।''

''आएँगे भी तो क्या कर लेंगे, चार दिन मोह-ममता बढ़ा कर फिर चले जाएँगे।''

परंतु इसमें बच्चों का क्या दोष है भला? रोजी-रोटी के लिए वह भी गया था इतने दिनों तक! वही तो चाहता था कि बच्चे कभी गरीबी से दो-चार न हों। उसके जैसा बचपन भगवान् करे किसी को न मिले।

वह तो पेट भर खाने के लिए दिनभर गोबर ढोता रह जाता था। जब तक गाँव में रहा, सबके तलवे चाटता रहा। वह तो भला हो जमुना यादव का, जिन्होंने उसे कुत्ते से इनसान बना दिया। अपनी हीरा जैसी बेटी ब्याह दी। नहीं तो वह कुँआरा मर जाता, अरे जिसके न रहने का ठिकाना न खाने का, यहाँ तक कि जिसके बाप का भी पता नहीं, कौन उससे अपनी बेटी का ब्याह करता? देनेवाले ने तो भरपूर दिया, उसी की झोली छोटी पड़ गई तो कोई क्या करे? गंगा की दिव्य छवि उसकी आँखों में डोल गई। 'चाहे सबकुछ चला जाता गंगा न जाती।' उसने एक नि:श्वास छोड़ी। और बच्चों की ओर से अपना मन साफ कर लिया।

आज इतना है तो सब आछो-आछो करते हैं, जब नहीं था, तब का अनुभव भी है उसके पास।

दोनों गाड़ियाँ आकर उसी के दरवाजे पर रुकीं। ड्राइवर ने दरवाजा खोला। आगेवाली गाड़ी से मोहन निकला, साथ ही बहू और दोनों बच्चे भी। दूसरी गाड़ी से मिलन उतरा, साथ में बहू भी। रघुबर अपने सूटेड-बूटेड बच्चों को देख रहा था टुकुर-टुकुर। उसके दरवाजे पर गाड़ी रुकती देखकर जिसने देखा, स्वयं तो दौड़ा ही दूसरे को भी खबर देता आया—

''अरे! रघुबर के लड़के आ गए। अब आ रहे हैं पद जियाने। वह तो शायद इन लोगों से बात भी नहीं करेगा। चलो, देखते हैं क्या कहता है? कुछ तो लाए होंगे। अपन ऽ···ऽ को किसी के घरेलू मामले में दखल देने की क्या जरूरत, खाए-पिए खिसके, बबलू भाई किसके?''

''अब आ रहे हैं? महतारी का मुँह देखने भी नहीं आ सके?''

भीड़ में से किसी ने बात उछाली।

''तो क्या माँ··· ?''

''ऊ···ऽ तो कब्बे··· !''

''माँ···ऽ···ऽ···ऽ··· !''

''नहीं भइया, माँ है, ऐसा किसने कहा कि हमारी माँ नहीं है?''

भीड़ में चुप्पी छा गई। बहुएँ रोने-पीटने लगीं। बच्चे हक्के-बक्के से इधर-उधर देख रहे थे। रघुबर कठुआया सा खड़ा था, ''ये किसने आते ही बच्चों को रुला दिया?''

''मोहन-मिलन, सुनो तो पहले बैठो! पानी-वानी पीओ! फिर बातें करेंगे।'' उसने बच्चों को सँभालना चाहा। दोनों बेटे उससे लिपट गए।

''पापा! हम सदा के लिए आप के पास आ गए हैं, अब हम अपने देश में ही मेहनत कर लेंगे। आप को छोड़कर अब कहीं नहीं जाएँगे, आपके आशीर्वाद से इतने लाचार नहीं रह गए कि परदेश में कमाना मजबूरी हो, आपने बड़ी पीड़ा झेली है पापा! अब हम आपके साथ हैं।'' मोहन किसी बच्चे की तरह उसे सँभाले था। उसके कंधे पर सिर रखे रघुबर अपने आप को नियंत्रित करने का प्रयास करता रहा। कुछ पल बाद न जाने कैसे धैर्य का बाँध टूट गया और वह फफक-फफककर रो पड़ा।

बी-२८ हरसिंगार, राजकिशोर नगर
बिलासपुर (छ.ग.)
दूरभाष : ०९९०७१७६३६१

## लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

# अंग्रेजी मानसिकता से मुक्त हों

● आचार्य बलवंत

मनुष्य अपने विचारों की अभिव्यक्ति किसी-न-किसी भाषा के माध्यम से ही करता है। भाषा के अभाव में किसी सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय प्रगति की कल्पना नहीं की जा सकती। साहित्य, संगीत, कला, विज्ञान और इतिहास का आधार भाषा ही है। भाषा केवल विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम ही नहीं, वह नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की संवाहिका भी होती है। प्रत्येक भाषा की अपनी प्रकृति होती है। उसके शब्द परिवेश की आशाओं, आकांक्षाओं एवं आवश्यकताओं से संपृक्त होते हैं। भाषा की प्रकृति को पहचानकर ही उसके प्रवाह को अक्षुण्ण रखा जा सकता है।

लार्ड मैकाले भाषा की प्रकृति एवं व्यक्तित्व निर्माण में उसकी भूमिका को भलीभाँति समझता था। इस तथ्य की पुष्टि २ फरवरी, १८३५ को ब्रिटिश संसद् में दिए गए उसके व्याख्यान से हो जाती है, जिसमें उसने कहा था, 'मैंने भारत के ओर-छोर का भ्रमण किया है और मैंने एक भी आदमी नहीं पाया, जो चोर हो। इस देश में मैंने ऐसी समृद्धि, ऐसे सक्षम व्यक्ति तथा ऐसी प्रतिभा देखी है कि मैं नहीं समझता कि इस देश को विजित कर लेंगे, जब तक कि हम इसके सांस्कृतिक एवं नैतिक मेरूदंड को तोड़ न दें। इसलिए मैं यह प्रस्तावित करता हूँ कि हम भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति एवं संस्कृति को बदल दें। क्योंकि यदि भारतवासी यह सोचने लगें कि जो विदेशी और अंग्रेजी में है, वह उनके आचार-विचार से अच्छा एवं बेहतर है, तो वे अपना आत्मसम्मान एवं संस्कृति खो देंगे तथा वे एक पराधीन कौम बन जाएँगे, जो हमारी चाहत है।' मैकाले की शिक्षानीति भारतीयों को उनकी भाषा से पृथक् कर वैचारिक रूप से उन्हें पंगु बनाने की थी, उनके आत्मविश्वास को कमजोर करना था, जिसे हम नहीं समझ सके।

देश के गणतंत्र बनने के बाद भाषा की अहमीयत हमें समझाने की कोशिश सोवियत रूस ने भी की थी। अंतरराष्ट्रीय संबंधों को दृढ़ करने के उद्देश्य से एक भारतीय राजनयिक को सोवियत रूस में भारत का राजदूत बनाकर भेजा गया, जहाँ उसने अपना कार्यभार ग्रहण पत्र अंग्रेजी में सौंपा। भारतीय भाषा में न होने के कारण वहाँ की सरकार ने उस पत्र को स्वीकार करने से मना कर दिया और याद दिलाया कि अंग्रेजी गुलाम भारत की भाषा थी, अंग्रेजी में पत्र प्रस्तुत करना उसी गुलामी का प्रतीक है। फिर किसी गुलाम देश के साथ अंतरराष्ट्रीय संबंध स्थापित करने का कोई औचित्य ही नहीं बनता। भाषा के सवाल पर सोवियत रूस की यह फटकार भाषा के प्रति हमारी उदासीनता पर करारा प्रहार है।

भाषा के प्रति उसके निवासियों के गहरे लगाव को फ्रांस की एक

सुपरिचित लेखक। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। कमला कॉलेज ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज कॉटनपेट, बेंगलुरु में हिंदी विभागाध्यक्ष।

घटना के माध्यम से भी समझा जा सकता है—प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान फ्रांस का कुछ भू-भाग जर्मनी के अधीन हो गया था। जर्मनी की महारानी उस क्षेत्र के एक स्कूल का दौरा करने गईं। उन्होंने विद्यार्थियों से जर्मनी का राष्ट्रगान सुनाने को कहा। केवल एक बच्ची ही राष्ट्रगान सुना सकी। यह देखकर महारानी प्रसन्न हो गईं और उस बच्ची से कुछ माँगने के लिए बोलीं। बच्ची के मुँह से अचानक ही ये शब्द निकल पड़े, 'हमारी शिक्षा का माध्यम हमारी भाषा फ्रेंच बना दीजिए।' इसे कहते हैं अपनी भाषा के प्रति अनुराग।

भाषा की अस्मिता का प्रश्न आज भी अनुत्तरित है। अंग्रेजी शिक्षानीति के चलते न केवल हिंदी, अपितु अन्य सभी भारतीय भाषाएँ हाशिए पर आ गई हैं। इन दिनों भारतीय जीवन में व्याप्त पाश्चात्य प्रभाव को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है, जो अंग्रेजी की देन है। खान-पान, रहन-सहन, पठन-पाठन एवं विचार-विमर्श ही नहीं, आज संबोधन एवं अभिवादन की भाषा भी अंग्रेजी हो गई है। बाजारवादी शक्तियाँ विज्ञापन के माध्यम से हमारे संस्कार को बिगाड़ने पर तुली हैं। किसी समाज के संस्कार को बिगाड़ने के तमाम कारणों में व्यक्ति की बोलचाल व व्यवहार की भाषा को बिगाड़ देना भी मुख्य है। आजकल के विद्यार्थियों के मन में अपनी भाषा के प्रति जो अनुराग होना चाहिए, उसका अभाव है। प्राय: देखने में यही आता है कि अध्यापक और अभिभावक भी हिंदी भाषा पर ध्यान कम ही देते हैं। आज के युवा कॅरियर बिल्डिंग के नाम पर अपनी भाषा से विमुख होकर संस्कृति और सभ्यता से भी दूर होते जा रहे हैं।

हिंदी के प्रति नवयुवकों के मन में जो उदासीनता है, उसका एक कारण हिंदी को रोजगार की भाषा न बनाया जाना भी है। हिंदी को रोजगार से जोड़े बिना वर्तमान युवा पीढ़ी के मन में हिंदी के प्रति वह भाव नहीं जाग्रत् किया जा सकता, जिसकी हम आशा करते हैं।

भाषा के प्रश्न को गंभीरता से लेते हुए उच्चतम न्यायालय के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश एम.एन. वेंकटचलैया और न्यायमूर्ति एस. मोहन की खंडपीठ ने यह निर्णय दिया था कि प्रारंभिक स्तर पर बच्चों

को शिक्षा केवल मातृभाषा में ही दी जानी चाहिए। इसलिए कि मातृभाषा में दी गई शिक्षा ही संस्कृति एवं परंपराओं पर गर्व करना सिखाती है। संविधान के अनुच्छेद ३५०(ए) के अनुसार प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा के लिए पर्याप्त सुविधाएँ जुटाने का उत्तरदायित्व राज्यों तथा स्थानीय निकायों का है। कर्नाटक सरकार ने उच्चतम न्यायालय के आदेश को स्वीकार कर एक साहसिक व सराहनीय कार्य किया, हालाँकि इसके क्रियान्वयन का अंग्रेजी मानसिकता के अभिभावकों ने जोरदार विरोध किया था, पर सरकार की दृढ़ इच्छाशक्ति के सामने उनकी चल न सकी।

**नेताओं की व्यक्तिगत स्वार्थपरता के चलते भाषा-प्रेमियों की हिंदी को राष्ट्रभाषा के आसन पर बिठाने की चाहत भेदभाव की भेंट चढ़ गई। मतों के गुणा-गणित के आधार पर अपनी महत्त्वाकांक्षाओं को साधने के लिए देश के तथाकथित कर्णधारों ने जातिवाद, धर्मवाद, संप्रदायवाद एवं क्षेत्रवाद की भाँति भाषा को भी वाद-विवाद का विषय बना दिया, जिसमें उलझकर हिंदी को उसका गौरव दिलाने का चिर प्रतीक्षित स्वप्न स्वप्न बनकर ही रह गया। स्वतंत्रता-प्राप्ति के उनहत्तर वर्ष बाद भी देश की एक राष्ट्रभाषा का न होना देश की अस्मिता एवं उसके आत्मगौरव के साथ खिलवाड़ नहीं तो और क्या है?**

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत यह महसूस किया गया था कि एक संविधान, एक राष्ट्रध्वज एवं एक राष्ट्रगान की ही भाँति देश की एक राष्ट्रभाषा का होना भी आवश्यक है, क्योंकि राष्ट्रभाषा के अभाव में राष्ट्र गूँगा होता है। हिंदी को राष्ट्रभाषा का स्थान दिलाने के लिए जिन राष्ट्रीय नेताओं ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, उनमें महात्मा गांधी प्रमुख हैं। हिंदी को संपूर्ण भारत की व्यावहारिक भाषा बनाने के अभियान में गांधीजी का योगदान अद्वितीय है। राष्ट्रीय एकता के परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रभाषा के प्रति अपने निश्चय को उन्होंने इन शब्दों में प्रकट किया है—'मैं हमेशा यह मानता रहा हूँ कि हम किसी भी हालत में प्रांतीय भाषाओं को नुकसान पहुँचाना या मिटाना नहीं चाहते। हमारा मतलब सिर्फ यह है कि विभिन्न प्रांतों से पारस्परिक संबंधों के लिए हम हिंदी सीखें। ऐसा करने से हिंदी के प्रति हमारा कोई पक्षपात प्रकट नहीं होता। हिंदी को हम राष्ट्रभाषा मानते हैं। वह राष्ट्रीय होने लायक है। वही भाषा राष्ट्रीय बन सकती है, जिसे अधिक संख्या में लोग जानते-बोलते हों और जो सीखने में सुगम हो।' सन् १९१० में गांधीजी ने कहा था, 'हिंदुस्तान को अगर सचमुच राष्ट्र बनाना है तो राष्ट्रभाषा हिंदी ही हो सकती है।'

सन् १९१६ में कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन में गांधीजी ने हिंदी में भाषण देते हुए स्पष्ट घोषणा कर दी थी—'हिंदी का प्रश्न मेरे लिए स्वराज्य के प्रश्न से कम महत्त्वपूर्ण नहीं है।' एक भाषा-एक लिपि विषयक इसी अधिवेशन में सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव पारित हुआ था कि हिंदी भाषा और देवनागरी का प्रचार-प्रसार देश हित एवं राष्ट्रीय एकता की स्थापना हेतु होना चाहिए। इस प्रस्ताव का समर्थन तमिल भाषा के मूर्धन्य साहित्यकार रामास्वामी अय्यर ने किया था। राष्ट्रीय एकता एवं सांस्कृतिक समरसता को बनाए रखने में राष्ट्रभाषा की महत्ता को गांधीजी ने अच्छी तरह से निरूपित किया है—हिंदी को राष्ट्रभाषा घोषित करने में एक दिन भी खोना देश को भारी सांस्कृतिक नुकसान पहुँचाना है। जिस प्रकार हमारी आजादी को जबरदस्ती छीननेवाले अंग्रेजों की सियासी हुकूमत को हमने सफलतापूर्वक इस देश से निकाल दिया, उसी तरह हमारी संस्कृति को दबानेवाली अंग्रेजी भाषा को भी यहाँ से निकाल बाहर करना चाहिए। देवनागरी के समान सरल, जल्दी सीखने योग्य और तैयार लिपि दूसरी कोई है ही नहीं। उर्दू और रोमन में भी वैसी संपूर्णता और ध्वन्यात्मकता नहीं है, जैसी देवनागरी लिपि में।

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन राष्ट्रभाषा को राष्ट्रीयता का स्रोत मानते थे। उनका कहना था—'कोई विदेशी भाषा हमारे देश की रक्षा नहीं कर सकती। राष्ट्र के विकास के लिए स्वभाषा अनिवार्य है।' उनके स्वभाषा का आशय हिंदी से ही था। टंडनजी न केवल हिंदी, अपितु अन्य सभी भारतीय भाषाओं के व्यावहारिक बनाए जाने के प्रबल पक्षधर थे। भाषा के साथ-साथ उसके सांस्कृतिक विकास पर भी उनका बल था। क्योंकि भाषा की संस्कृति ही उसे अपनी परंपराओं पर गर्व करना सिखाती है। भाषा का उसकी संस्कृति से गहरा संबंध है, संस्कृति शरीर है तो भाषा उसका प्राणतत्त्व।

इस बात को पुनः दोहराना चाहूँगा कि राष्ट्रीय एकता के लिए राष्ट्रभाषा की आवश्यकता का अनुभव स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद से ही किया जाने लगा था। कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी के प्रयासों से सितंबर १९४९ में संविधान सभा में राजभाषा के विषय पर विचार-विमर्श हुआ। १२, १३ एवं १४ सितंबर, १९४९ में संपन्न इस तीन दिवसीय सम्मेलन में उपस्थित ७१ सदस्यों ने हिंदी को राजभाषा बनाए जाने के प्रस्ताव को सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया एवं शासकीय प्रयोग हेतु भारतीय अंकों के अंतरराष्ट्रीय रूप को अपनाने की बात तय हो गई। हिंदी को राजभाषा बनाने का प्रस्ताव श्री गोपाल स्वामी आयंगर ने रखा और उसका समर्थन श्री शंकर राव ने किया, जो अहिंदी भाषी थे।

२६ जनवरी, १९५० को भारत का संविधान लागू हुआ। संवैधानिक प्रावधानों के अनुसार संविधान लागू होने के दिन से १५ वर्षों तक हिंदी के साथ अंग्रेजी को भी संघ की सह राजभाषा के रूप में जारी रखने और उसके बाद हिंदी को पूरी तरह से राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने की योजना थी। पर ऐसा हो नहीं सका। नेताओं की व्यक्तिगत स्वार्थपरता के चलते भाषा-प्रेमियों की हिंदी को राष्ट्रभाषा के आसन पर बिठाने की चाहत भेदभाव की भेंट चढ़ गई। मतों के गुणा-गणित के आधार पर अपनी महत्त्वाकांक्षाओं को साधने के लिए देश के तथाकथित कर्णधारों ने जातिवाद, धर्मवाद, संप्रदायवाद एवं क्षेत्रवाद की भाँति भाषा को भी वाद-विवाद का विषय बना दिया, जिसमें उलझकर हिंदी को

उसका गौरव दिलाने का चिर प्रतीक्षित स्वप्न स्वप्न बनकर ही रह गया। स्वतंत्रता-प्राप्ति के उनहत्तर वर्ष बाद भी देश की एक राष्ट्रभाषा का न होना देश की अस्मिता एवं उसके आत्मगौरव के साथ खिलवाड़ नहीं तो और क्या है?

वह भाषा जो 'वंदेमातरम्' एवं 'भारतमाता की जय' के उद्घोष की उत्प्रेरिका रही हो, जिस भाषा ने भारतवासियों की सुप्त चेतना को झंकृत कर उनकी विलक्षणता का उन्हें बोध कराया हो, वह भाषा जो स्वतंत्रता सेनानियों के अधरों का क्रांति-गीत बनकर व्यवस्था के आमूलचूल परिवर्तन का आह्वान करती रही हो, वह भाषा जो देश के विभिन्न भाषा-भाषियों के बीच समन्वयात्मक समझ विकसित कर उन्हें आपस में जोड़कर रखने में समर्थ हो। जो भाषा देशवासियों के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक उन्नति का मूलाधार हो, जो भारत में ही नहीं, बल्कि विश्व के अनेक देशों में लिखी-पढ़ी, समझी एवं सराही जा रही हो, जो निकट भविष्य में विश्व की संपर्क भाषा बनने की ओर अग्रसर हो, उस हिंदी का अपनी ही भूमि पर अंग्रेजी के अनुवाद की भाषा बनकर निर्वासन की जिंदगी जीना दुखद ही नहीं, चिंताजनक भी है। राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में उपन्यास सम्राट् मुंशी प्रेमचंद का उद्गार पठनीय है—'राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र का बोध हो ही नहीं सकता। जहाँ राष्ट्र है, वहाँ राष्ट्रभाषा का होना लाजमी है। अगर संपूर्ण भारत को एक राष्ट्र बनाना है तो उसे एक भाषा का आधार लेना पड़ेगा।'

अंग्रेजों ने भारत को कई स्तरों पर कमजोर करने की साजिश रची थी। हिंदी और उर्दू के सवाल को हवा देकर सांप्रदायिक वातावरण को बिगाड़ने की उनकी कूटनीतिक चाल सफल भी हुई। सन् १९४८-४९ में भारत की १४ भाषाओं में 'हिंदुस्तानी' का प्रवेश उनकी कुटिल मंशा का ही प्रतिफल था। वह हिंदुस्तानी समझौते की भाषा बनकर रह गई, जो बोलचाल के लिए उपयुक्त तो थी, पर उसमें साहित्यिक सामर्थ्य का अभाव था।

भारतीय संविधान लागू होने पर हिंदी को राजभाषा के रूप में मात्र घोषित कर १५ वर्षों की अवधि तक अंग्रेजी को राजभाषा का मान देते रहना और आशा रखना कि एक-न-एक दिन हिंदी राजभाषा का गौरव प्राप्त कर लेगी, कितना हास्यास्पद है। केंद्रीय गृह मंत्रालय द्वारा बनाए गए राजभाषा अधिनियम की धारा ३/१ के अंतर्गत शासकीय प्रयोजनों में हिंदी के साथ-साथ अंग्रेजी को सहभाषा के रूप में आगे भी जारी रखने का निर्णय लिया गया, फिर राजभाषा अधिनियम की धारा ३/२ के अंतर्गत यह व्यवस्था दे दी गई कि जब तक भारत के एक भी राज्य की सरकार हिंदी को अपने राज्य की राजभाषा के रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होगी, तब तक हिंदी संघ की राजभाषा के रूप में क्रियान्वित नहीं हो सकती। राजभाषा अधिनियम के इस सशर्त समझौते ने हिंदी को संघ की सशक्त राजभाषा बनने के सारे रास्ते ही अवरुद्ध कर दिए। इसलिए कि दक्षिण भारत का एक राज्य तमिलनाडु हिंदी का प्रबल विरोधी है ही और पूर्वोत्तर स्थित नागालैंड अंग्रेजी को ही अपनी राजभाषा के रूप में अपना चुका है।

मैकाले द्वारा अपने होम सेक्रेटरी को लिखे गए पत्र की कुछ पंक्तियों को यहाँ उद्धृत करना प्रासंगिक होगा, जिसमें उसने कहा था—'मैं नहीं कह सकता कि भारत राजनीतिक रूप से आपके अधीन रह पाएगा, लेकिन इतना मैं अवश्य करके जा रहा हूँ कि यह देश राजनीतिक स्वतंत्रता पा लेने के बाद भी अंग्रेजी मानसिकता, अंग्रेजी सभ्यता और अंग्रेजी भाषा के प्रभाव से मुक्त नहीं हो सकेगा।' उसका कथन अक्षरशः सत्य सिद्ध हुआ। आजादी के इतने वर्षों बाद भी हम अंग्रेजी मानसिकता से मुक्त नहीं हो सके।

दुर्भाग्य की बात है कि हिंदी को राजभाषा बनाए जाने के प्रश्न पर देश की अन्य प्रांतीय भाषाओं को इसके समानांतर खड़ा करने की धृष्टता बार-बार की जाती रही है। बार-बार यह झूठी दलील दी जाती रही है कि हिंदी के राजभाषा बनने से देश की अन्य भाषाओं की अस्मिता खतरे में पड़ जाएगी, जबकि अस्मिता के संकट का खतरा देश की अन्य प्रांतीय भाषाओं को हिंदी से नहीं, बल्कि हिंदी और अन्य प्रांतीय भाषाओं व उनकी बोलियों को अंग्रेजी से है।

हिंदी राष्ट्रीय स्वाभिमान की भाषा है। समय की माँग है कि हम अंग्रेजी की मानसिकता का परित्याग कर भारतीयता के आदर्शों को अपनाएँ तथा हिंदी को भारतीय संस्कृति के विकास का संसाधन बनाएँ। भारत को उसका खोया हुआ गौरव तभी प्राप्त हो सकेगा, जब यहाँ का हर पढ़ा-लिखा व्यक्ति अपने कार्य, चिंतन-मनन व आपसी संवाद अपने ही देश की भाषा हिंदी या अन्य भारतीय भाषाओं में करे। अपना हस्ताक्षर तो वह अपनी भाषा में ही करे एवं हिंदी को अपनी पहचान की भाषा बनाए। हिंदी के प्रति हीन भावना से मुक्ति का मार्ग हिंदी से निकलेगा। हिंदी हमारे राष्ट्र के सर्वांगीण विकास के लिए वरदान सिद्ध होगी, ऐसा मेरा विश्वास है। हिंदी के माहात्म्य से संबंधित कविता की कुछ पंक्तियाँ यहाँ प्रस्तुत हैं—

*जन सामान्य की भाषा हिंदी*
*जन-मन की जिज्ञासा हिंदी,*
*जन-जीवन में रची बसी*
*बन जीवन की अभिलाषा हिंदी।*
*सेवा भाव सिखाती हिंदी*
*सबके मन को भाती हिंदी,*
*सबके दिल की बातें करती*
*सबका दिल बहलाती हिंदी।*
*स्नेह, शील, सद्भाव, समन्वय*
*संयम की परिभाषा हिंदी।*
*जय हिंदी!*

साअ

ग्राम : जूड़ी, पोस्ट : तेंदू
राबर्टसगंज, सोनभद्र-२३१२१६ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९८४४५५८०६४

# विकास की ओर...

• इंदु शुक्ला

वे सात-आठ युवक थे—२० से ३० वर्ष की उम्र के, अपने काम को अंजाम देते हुए, ईमानदार और आत्मनिर्भर। पहले एक बार कुछ फर्नीचर बनवाया था—उसका नाम ठीक से याद नहीं, यही कोई विश्वकर्मा अटक थी उसकी। ऐसे तो वह पुश्तैनी कारीगरों का परिवार था, लेकिन इस विश्वकर्मा ने इधर-उधर छोटे-मोटे कोर्स करके बढ़ईगिरी और फर्नीचर डिजाइनिंग का अच्छा बिजनेस खड़ा कर लिया था। कंप्यूटर पर देखते-देखते इंटीरियर डेकोरेशन की फैंटेसी खड़ी कर देना उसके बाएँ हाथ का खेल था। पिता अच्छा बढ़ई-कारीगर था, लेकिन दिल के दौरे ने उसे रोते-कलपते परिवार से अलग कर दिया, तब इस छोटे विश्वकर्मा ने न केवल पिता के काम को कुशलतापूर्वक सँभालकर अपने परिवार के लिए जीविका कमाई, बल्कि दिन-रात अथक परिश्रम करके एक बड़ी फर्म खड़ी कर ली। कहना चाहिए, एक सेल्फमेड व्यक्ति, व्यक्ति ही नहीं एक संस्था, उसके साथ कम-से-कम ५०-६० लोग काम करते थे। वे किसी सरकारी आरक्षण के मोहताज नहीं थे, वोटों की राजनीति के लिए तैयार की गई किसी रोजगार योजना के अंतर्गत मुफ्त की रोटी नहीं तोड़ रहे थे, उनकी योजना स्वरोजगार की थी। मेहनत और अपनी कार्यक्षमता को विकसित करते हुए वे अपना विकास कर रहे थे। उन्हीं में एक मंडली अमरजीत, छोटेलाल, उमाशंकर आदि की थी। यही अमरजीत हमारे घर विश्वकर्मा द्वारा बनवाए गए फर्नीचर की पॉलिश करने आया था। सीधा-सादा, दुबला-पतला अपने काम को दक्षतापूर्वक करता था। जाते-जाते बड़े संकोच से अपना मोबाइल नंबर दे गया था।

इस बार जब हमें अपने घर की पुताई, रंग-रोगन आदि करवाना था तो हमें इसी अमरजीत की याद आई। फोन किया तो पता नहीं किसी और ने उठाया, ''हलो! केकरा क काम बा?''

''अमरजीत पेंटर बोल रहे हैं?''

''नाहीं, ऊ अबहीं बाहर गइले हँइ, कउन काम बा?''

''अरे हाँ, हम सिन्हा साहब चाणक्यपुरी से बोल रहे हैं, अमरजीत आएँ तो उन्हें बता देना और कहना कि हमें फोन कर लें।''

''ठीक बा।''

थोड़ी देर बाद हमारा मोबाइल बजा तो पता चला कि वही अमरजीत है। बोलने, बात करने में तो कोई खास अंतर नहीं आया था, लेकिन अपना काम चलाने भर की खड़ी बोली बोलकर अपनी बात अपने ग्राहक तक पहुँचा देता था। जैसे-तैसे हमारा पता पूछकर वह हमारे घर आ पहुँचा।

सुपरिचित लेखिका। भगवतीचरण वर्मा के कथा-साहित्य पर पाँच पुस्तकें, 'दरवाजे ही दरवाजे' (कहानी-संग्रह), 'रीति-साहित्य : समीक्षा और शोध' ग्रंथ (सहलेखन) प्रकाशित। 'अरुणोदय' पत्रिका का संपादन किया। आकाशवाणी बड़ोदा एवं रेडियो पर वार्त्ताएँ प्रसारित। हिंदी अधिकारी रहने के बाद म.स. विश्वविद्यालय, बड़ोदा में प्रवक्ता एवं रीडर रहीं। सेवा-मुक्ति के बाद अब स्वतंत्र लेखन।

अमरजीत के साथ एक और आदमी था, उन दोनों ने पूरे घर को घूमकर देखा और थोड़ी देर में मन-ही-मन हिसाब करके बता दिया कि लगभग डेढ़ लाख का खर्चा आएगा। हमने भी ज्यादा हुज्जत नहीं की और उन्हें काम शुरू करने के लिए कह दिया। सबेरे साढ़े आठ तक उनकी टोली आ जाती। कुछ ठीक-ठाक पैंट-शर्ट पहने और कैप लगाकर वे आते, जैसे लोग बन-ठनकर ऑफिस जाते हैं, ताकि पहली दृष्टि पड़ने पर ऐसा न लगे कि कहाँ के जंगली आ गए; लेकिन आने के तुरंत बाद पीछे के गलियारे की अलगनी पर अपनी शर्ट-पैंट टाँग देते और पुरानी पैंट-बनियान पहन लेते। कोई कील या खूँटी देखकर अपनी कैप लटका देते और अपना काम शुरू कर देते। कोई लोहे की पत्ती लेकर चूना खुरच रहा है तो कोई दीवार बराबर करने के लिए रेगमार्क से घिसाई कर रहा है और कोई लाफी लगा रहा है। कोई पहले की कील आदि निकालकर छोटे-मोटे गड्ढों को बराबर कर रहा है। तीन-चार दिन तक यही काम चलता रहा। घर बड़ा था तो वे लोग एक-एक कमरा पकड़ते और उसी में घुसे रहते। अगर सामने होते तो नाक पर कपड़ा बाँधकर चुपचाप काम करते रहते, लेकिन अगर किसी कमरे में होते तो कुछ हँसी-मजाक भी कर लेते और अपना काम पूरी लगन से करते रहते।

मैंने अपने गाँव में इसी उम्र के तमाम लड़कों को देखा था, जो सुबह से शाम तक अपनी हैसियत के अनुसार साइकिल या मोटर साइकिल पर इधर-उधर चक्कर लगाते रहते थे। कभी एक गुट बनाकर ताश या जुआ खेलते, गुटखा खाते और सरकार को गाली देते कि सरकार हम बेरोजगार युवकों के लिए कुछ कर नहीं रही है। नौकरी न मिलने के कारण हम दर-दर भटक रहे हैं। दूसरी ओर, अमरजीत जैसे युवक हैं, जो अपना घर-बार, परिवार, प्रदेश छोड़कर देश के सुदूर क्षेत्रों में पहुँच गए हैं और अपना छोटा-मोटा व्यवसाय शुरू कर दिया है। खुद तो अपनी रोजी-रोटी कमा ही रहे हैं, अपने साथ अन्य युवकों को भी

जोड़ लेते हैं, और सब मिलकर अपने रहने, भोजन आदि की व्यवस्था भी कर लेते हैं।

मेरे मन में जिज्ञासा बनी थी कि ये इतने सारे लड़के कैसे जुट गए हैं, कहाँ रहते होंगे। जवान लड़के हैं, इनकी भी कुछ जरूरतें होंगी, कैसे सब जुगाड़ करते होंगे?

एक दिन मैंने पूछ ही लिया, ''तुम लोग कहाँ रहते हो?''

अमरजीत बोला, ''शिवाजी नगर में।''

''कितना बड़ा घर है?''

''अरे, घर काहे का, एक खोली है—१०×१२ की, दिन भर तो बाहर रहते हैं, शाम को खाना खाकर जमीन पर गोदड़ी बिछाकर लुढ़क जाते हैं, दिन भर की मेहनत के बाद गहरी नींद आती है।''

''और खाना कौन बनाता है?''

''बारी-बारी से बना लेते हैं, जिसकी बारी होती है, वह काम से एक घंटा पहले निकल जाता है और सब्जी-रोटी या दाल-चावल कुछ भी बना लेता है। जब सब कमरा पर पहुँचते हैं तो मिल-बैठकर खा लेते हैं, घर-देश की बातें करते हैं। कुछ गाना-बजाना करते हैं और सो जाते हैं।''

''तुम लोग अच्छा-खासा कमा लेते हो तो बड़ा घर ले लो, उसमें आराम से रहो।''

''काहे को आंटी! दिन भर तो हम लोग बाहर रहते हैं, हम लोगन का मेहरारू साथ में नहीं रहता, वह गाँव में ही है। कमरा तो सारे दिन खाली ही पड़ा रहता है, उस पर पैसा भेस्ट करने का कौन जरूरत है। फिर साथ में घुस-मुसकर लेटने में ज्यादा अपनापन लगता है।''

मैंने देखा, वह बोल तो गया, लेकिन कुछ झेंप भी गया और मुसकराकर सिर झुका लिया।

एक दिन ये लड़के ऊपर के एक कमरे में काम कर रहे थे, उसके पास ही हमारा पूजागृह था तो मैं वहाँ पूजा करने गई थी। देखा, कमरा बंद है तथा वे सब भोजपुरी का कोई चलताऊ-सा गाना गा रहे थे और मुँह दबा-दबाकर हँस रहे थे। शायद युवावस्था में परिवार से दूर रहने की विवशता को हँसी में उड़ा देने का यह एक जरिया था।

पेंटिंग में कोई कमी न रह जाए तो हम कई बार उन्हें टोक देते थे, वे सिर झुकाकर सुन लेते, लेकिन एक दिन अमरजीत बोल ही पड़ा, ''आंटी! आपको चिंता करने की जरूरत नहीं, हम लोगों ने एशियन पेंट्स की ट्रेनिंग लिये कारीगरों से काम सीखा है, उनसे पूछकर पेंट और सामान खरीदते हैं तथा उन्हीं की तरह गारंटी देकर काम करते हैं; फिर भी रेट उनसे कम लगाते हैं, इसलिए हमें काम की कमी नहीं पड़ती।''

शाम को जब इनका काम समाप्त होता तो पीछे अहाते में बनी चौकड़ी में खूब रगड़कर अपने हाथ-पैर धोते और अपनी सुबहवाली शर्ट या टी-शर्ट पहनकर बिल्कुल रंगरूट बन जाते। एक दिन हमने देखा कि जब वे तैयार होकर बाहर निकले तो उनसे मिलने एक नवदंपती आ गए, पता चला कि उनका मित्र गोपीनाथ एक ड्राइवर है, जिसने पड़ोस में एजेंसी से आई एक उड़िया लड़की से शादी कर ली है। संगीता काफी गौर वर्ण और तेज-तर्रार लड़की है। अमरजीत का काम काफी जोर-शोर से चल रहा था, लेकिन धूल-मिट्टी, रंग-रोगन का काम करके भी वह शाम को काम खत्म होने पर काफी प्रसन्नवदन और बिंदास दिखलाई देता था। अब गोपीनाथ भी शाम को संगीता के साथ आ जाता, फिर वे सात-आठ लोग हँसते-गपियाते साथ में चले जाते। एक दिन हमसे रहा नहीं गया और मैंने संगीता से पूछा, ''अरे संगीता! तुम तो उड़ीसा की हो और गोपीनाथ पश्चिमी उत्तर प्रदेश का। तुम दोनों के घरवालों ने तुम्हारी शादी का विरोध नहीं किया?''

संगीता चहकते हुए बोली, ''आंटी! जब रोजी-रोटी और पैसे के लिए घर से इतनी दूर भेज दिया तो वे क्या कहेंगे। मैं जिंदगी भर उनके सहारे तो नहीं बैठूँगी। उनको महीने-के-महीने घर चलाने के लिए रोकड़ा मिल जाता है, और उनको क्या लेना-देना। जब साल में एक बार छुट्टी मिलती है तो ससुराल और मायके दोनों जगह जाते हैं। तब हमारा रहन-सहन देखकर सब खुश हो जाते हैं। घर जाने पर सास भी तरह-तरह के तोहफे देखकर खुशामद करती रहती हैं। पहले कुछ दिन हमारी लव-मैरिज होने और दहेज न मिलने के कारण बहुत हाथ-पैर पटकती थीं, लेकिन अब रुपया एवं उपहार पाकर रास्ते पर आ गई हैं।''

''जाति-पाँति को लेकर ताने नहीं मिलते?''

''काहे की जाति-पाँति! जब जीवन चलाने के लिए दहेज का सहारा लिया जाता था, तब तक सारी परेशानी थी, अब तो इसे पकड़कर बैठेंगे तो कुछ भी हाथ नहीं लगेगा। अरे आंटी! यह तो नेता लोग अपने स्वार्थ के लिए लोगों को भड़काते रहते हैं, वरना अब तो सब अपने लिए कुछ ऐसा धंधा तलाशते हैं, जिससे रोजी-रोटी चले, चार पैसे के लिए किसी के सामने हाथ न फैलाना पड़े, किसी की घुड़की न खानी पड़े।''

मैं सोच रही थी कि गाँव-घर के वे नौजवान किसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं, क्यों उनमें स्वाभिमान नहीं है कि बेरोजगारी भत्ते के रूप में मिली भीख या प्रमादी और नकारा बनाए जानेवाले स्लो पॉइजन के लिए सरकारी अफसरों की जी-हुजूरी करते हैं या ब्लॉक प्रमुख की दुम सहलाते रहते हैं!

एक बार हम लोग कश्मीर घूमने गए थे, वहाँ पहलगाम में श्वेत धवल बर्फानी नदी के किनारे बिल्कुल सुनसान इलाके में प्राकृतिक दृश्य का आनंद ले रहे थे। सेना की एक टुकड़ी पहाड़ी पत्थरों से अँटी नदी में ऊपर-नीचे हिचकोले खाती राफ्टिंग कर रही थी। हम उस दृश्य को देखकर बहुत आनंदित थे। बहुत सबेरे होटल से नाश्ता करके निकले थे तो भूख लग आई थी, लेकिन उस निर्जन इलाके से दूर होटल तक पहुँचते काफी समय लगनेवाला था। तभी पास के झुरमुट से एक आदमी बगल में बेंत से बना एक स्टैंड दबाए और सिर पर एक फैले टोकरे में चना जोर गरम लेकर अचानक अवतरित हो गया। वह 'चना जोर गरम बाबू मैं लाया मसालेदार, चना जोर गरम' बड़े तेज सुर में गाता हुआ बोला, ''साहब! ऐसा चना आप लोगों ने कभी नहीं खाया होगा, बच्चों

की तबीयत खुश हो जाएगी।'' हम सब भुखाए तो थे ही, खूब प्रेम से प्याज, नीबू और मसालों से मिश्रित चना खाया और उस चनेवाले से बात करने लगे, उसका नाम पूछा, गाँव पूछा और इस निर्जन इलाके में ऐसा छोटा सा खोंचा लगाने का कारण पूछा।

वह सीताराम दुबे था और बिहार के छोटे से गाँव से यहाँ आ गया था, वह थोड़े दिन किसी शहर में रहता तथा फिर कहीं और निकल पड़ता था, इस तरह करते-करते उसने पूरा उत्तरांचल नाप लिया था। उसने बताया कि उसे घूमने-फिरने और यात्रा करने का बहुत शौक था, जैसे-तैसे बी.ए. भी कर लिया था, लेकिन कोई कायदे की नौकरी न मिलने के कारण उसने यह काम शुरू कर दिया। वह ज्यादातर ऐसे पर्यटन स्थलों पर ही खोंचा लगाता है और उसकी अच्छी-खासी आमदनी हो जाती है।

हमने पूछा कि इस दुर्गम इलाके में आने में उसे डर नहीं लगता! वहाँ चप्पे-चप्पे पर आर्मी के जवान तो तैनात रहते हैं, लेकिन कब, कहाँ से किसी आतंकवादी की गोली किसी को निशाना बना लेगी, इसका कोई ठिकाना नहीं होता तो उसने बड़ी बेफिक्री से उत्तर दिया, ''रोज-रोज की भूख और लाचारी की मार से गोली की मार ज्यादा अच्छी है, एक बार में ही मुक्ति मिल जाती है।''

आज तेजी से बढ़ते नव-धनाढ्यों में बाहर खाने-पीने, देश-विदेश की यात्रा करने, तरह-तरह के फैशनेबल कपड़ों और उनसे जुड़ी प्रसाधन सामग्रियों के निर्माण से अनेक प्रकार के उत्पादों की बाढ़-सी बाजार में आती जा रही है। विशालकाय मॉल शहरों में बन रहे हैं, जहाँ सिक्योरिटी गार्ड, सेल्स गर्ल और स्टाफ की जरूरत होती है। वहाँ कस्बों से आए युवक-युवतियाँ काम करते हैं। उनसे कौन जाति-पाँति पूछता है। कस्बों से आई लड़कियाँ पैंट-शर्ट पहनकर काम करती हैं। मेरे मन में जिज्ञासा थी कि वे कैसे यहाँ पहुँच जाती हैं। उनके पुरातन-पंथी माँ-बाप कैसे उन्हें कई बार सुनसान मॉलों में पुरुषों के बीच १०-१२ घंटे तक काम करने भेज देते हैं और कैसे वे एकदम अटपटी यूनीफॉर्म पहनना शुरू कर देती हैं।

बिग बाजार में मैंने कुछ बच्चों के कपड़े लिये थे और वे ट्रायल रूम में कपड़े पहनकर देख रहे थे। मैंने वहाँ तैनात युवती को देखा तो मुझे लगा कि इसकी अभी-अभी शादी हुई है, क्योंकि उसने माँग में सिंदूर लगाया था और हाथ में लाल-लाल चूड़ा पहना हुआ था। उसे खाली पाकर मैंने अपनी जिज्ञासा उसके सामने रखी। उनसे बताया, ''मैं झाँसी की रहनेवाली हूँ, अभी गरमियों में शादी हुई है। मुझे पता चला कि यहाँ वेकैंसी है। थोड़ी-बहुत अंग्रेजी भी बोल लेती हूँ तो मेरा सिलेक्शन यहाँ हो गया। अब ट्रेनिंग के बाद संकोच जाता रहा तो अच्छे से अपना काम कर पाती हूँ।''

''और यहाँ की यूनिफॉर्म अटपटी नहीं लगती! घर के लोग मना नहीं करते?''

''यह पैसा सबकुछ करवा लेता है। घर से सलवार-कुरता या साड़ी पहनकर निकलती हूँ और यहाँ आकर यहाँ की ड्रेस पहन लेती हूँ। मेरे पति भी यहीं काम करते हैं तो उन्होंने घर में सबको समझा दिया है। अब धीरे-धीरे आदत पड़ गई है।''

कितना कुछ धीरे-धीरे बदल रहा है! ऐसे ही एक दिन मॉल में शॉपिंग करते हुए अमरजीत और गोपीनाथ दिखलाई दे गए। अमरजीत ने पूरे परिवार से परिचय करवाया। उसकी पत्नी को देखकर ऐसा नहीं लग रहा था कि यह उसी पेंटर अमरजीत की पत्नी है, जो धूल-गर्द और पेंट से सना अदर्शनीय लगता था। बढ़िया साड़ी, शैंपू किए बालों में चमकीला बकल, पार्लर में तराशी आई-ब्रो और कायदे से लगी लिपस्टिक, इन सबने उसे सुशोभनीय बना दिया था। बच्चे भी साफ-सुथरे, अच्छे कपड़े और जूते पहने थे। देखकर मन खुश हो गया। उसने बहुत खुश होकर बताया, ''आंटी! अब हमें सरकारी आवास योजना के अंतर्गत बना मकान एलॉट हो गया है, सो मैंने अपनी पत्नी और बच्चों को यहाँ बुला लिया है। बच्चे स्कूल भी जाने लगे हैं और हम भी मनई-मानुस की तरह रहते हैं।''

गोपीनाथ की पत्नी तो वैसे भी तेज-तर्रार थी और बन-ठनकर रहती थी, अब तो उसके रंग-ढंग ही बदल गए थे। उसके साथ उसकी गोरी-चिट्टी प्यारी गुड़िया-सी बिटिया भी थी, जो बहुत ही होनहार लग रही थी।

आज ही मैंने समाचार-पत्र में एक न्यूज देखी—एक युवक ने पुराना ट्रक खरीदकर, उसमें कुछ पैसा लगाकर उसे अपनी आवश्यकतानुसार सजा-धजाकर मोबाइल फैशन स्टोर शुरू किया है। वह दिल्ली, मुंबई आदि से फैशनेबल कपड़े खरीदकर अलग-अलग इलाकों में कपड़े की बिक्री करता है और अच्छा-खासा व्यवसाय खड़ा कर लिया है।

इन उत्साही नवयुवक-युवतियों के लिए न जाति-धर्म कोई बाधा है, न सामाजिक स्तर उनके पैरों को पीछे खींचता है। वे आगे बढ़ रहे हैं, अपने जीवन-स्तर को सुधार रहे हैं। किसी किसान के बेटे ने मैक्डोनाल्ड्स के लिए बड़े आकार के आलू उगाना शुरू कर दिया है तो कोई सोयाबीन और सूरजमुखी की खेती कर रहा है। कभी जरूरत पड़ती है तो गाँव-कस्बे के पढ़े-लिखे नवयुवक मदद लेकर खेती के नए-नए तरीके सीख रहे हैं। वे थोड़ा पैसा खर्च करके अपनी फसल का बीमा करवाते हैं। कभी मौसम की मार पड़ने के कारण उन्हें खुदकुशी नहीं करनी पड़ती, न कर्ज माफी के लिए सरकार का मुँह ताकना पड़ता है। वे आंदोलन करके आरक्षण या कर्ज माफी के लिए अपना कीमती समय नहीं गँवाते। हर दिन नई ऊर्जा से भरकर आगे बढ़ने को तैयार हो जाते हैं। विकास के नए आयाम, क्षितिज खुल रहे हैं। अपनी आँखें खुली रखकर वे साहस करके चल पड़ते हैं। इसलिए नेताओं को उन्हें अपना अस्त्र बनाने या उनके लिए घड़ियाली टसुए बहाने की आवश्यकता नहीं है। अगर इन नेताओं में थोड़ी भी शर्म बाकी बची है तो इस महाशक्ति को सही मार्ग पर ले जाने के लिए अपने नेतृत्व का उपयोग करना चाहिए और उनके मार्गदर्शन के लिए अपने बुद्धिबल का सहयोग देना चाहिए।

सा अ

१-बी, ८०६ ट्रिनिटी टॉवर
गेरा ग्रीन विले, इऑन आई.टी. पार्क के पास
खराड़ी, पुणे-४११०१४
दूरभाष : ०९७२३७२३६८१

राम झरोखे बैठ के

# अदृश्य विकास और ईश्वर

• गोपाल चतुर्वेदी

कुछ की मान्यता है—विकास एक सफर है। यह कोई हवाई या ट्रेन यात्रा नहीं है कि दिल्ली से मुंबई या बैंगलुरु के लिए चले तो देर-सबेरे पहुँच ही जाएँगे। यह एक ऐसी अनवरत यात्रा है, जिसका लक्ष्य वक्त के साथ आगे खिसकता रहता है। कभी विज्ञान की नई खोजों से, कभी तकनीकी प्रगति से। जब सैल-फोन आया तो उसका स्वागत संचार के क्षेत्र में नई क्रांति के रूप में किया गया। आज स्मार्ट फोन के युग में उसकी हैसियत है क्या? कौन कहे कल क्या हो? यों सफर है तो 'सफरिंग' भी है। लगातार सफर के चाहनेवाले यायावर कम ही होते हैं। यों थोड़ा-बहुत रुककर सुस्ताना उनके लिए भी अनिवार्यता है।

सफर के साथ परिवर्तन भी है। कभी उसके साधनों का, कभी सवारियों का। कभी छोटे जहाज थे, अब बड़े हैं। रेल के डिब्बे भी कौन स्थायी हैं? वे भी बदलते रहते हैं और इन डिब्बों को खींचनेवाले इंजन भी। इस विकास में सरकार की बड़ी भूमिका है, न जहाज सस्ते हैं न रेल के नए इंजन, न डिब्बे। एयर इंडिया के नए जहाज हों या देश की रक्षा के उपकरण, सरकार का ध्यान इन की ओर खुद-बखुद तो आकृष्ट होने से रहा। इस आवश्यक काम के लिए हर निर्माता-कंपनी के पास उसकी 'ध्यान आकर्षण टीम' होती है। यह दल जी-जान से लगा रहता है बाबू से लेकर मंत्री का ध्यान खींचने में।

ज्ञानी पुरुष यह भी जानते हैं कि ध्यान-आकर्षण में गुणवत्ता के साथ एक अन्य तत्त्व भी महत्त्वपूर्ण है। इसे छोटे और सामान्य कर्मचारियों के संदर्भ में 'घूस' कहा जाता है। पर बड़े लोगों को छोटे सड़क के किनारे बने ढाबे के खाने से परहेज है। यह सामान्य बाबू के लिए है। बड़े सिर्फ पाँच तारा होटलों में पका और प्रचलित कमीशन खाते हैं। इसके नाम से ही जाहिर है कि यह हर 'कमी' को 'शन' करता है, यानी घूस से बड़ा और महान् है। कमीशन कैसा हो, कितना हो, लेन-देन की प्रक्रिया क्या हो, इसे कैसे दुनिया की नजरों से छिपा के रखा जाए आदि ऐसे मूलभूत प्रश्न हैं, जिनके समाधान के बिना सरकार का ध्यान, किसी पंछी के समान उड़ता-फुदकता, आता-जाता रहता है। ध्यान आकर्षक टीम जानती है कि समझौता गुणवत्ता में संभव है, कमीशन पर नहीं। वह पूरे मनोयोग से अपने मिशन में लगी रहती है।

प्रगति से संबद्ध ज्ञानियों की मान्यता है कि त्वरित विकास और भ्रष्टाचार का चोली-दामन का साथ है। स्कूल की इमारत का निर्माण हो या सड़क का, दोनों सरकार की स्वीकृति के बिना संभव नहीं हैं। इसमें सबका कल्याण निहित है। स्वीकृति देनेवाले का और जनता का। सरकार से संपर्क के आनेवाले हर व्यक्ति को पता है कि जड़ फाइलों के पैर तो हैं नहीं। जब उनमें पैसे के पैर लगते हैं, तभी उनमें गति आती है। नहीं तो वह जहाँ टिकी हैं, वहाँ-की-वहीं, टिकी रहती है। गुम होना या दीमक-चटना उनकी स्वाभाविक नियति है। ठेकेदार इस तथ्य से परिचित हैं। लिहाजा, वह एक हाथ में रुपयों का थैला रखता है और दूसरे में टैंडर के आधार पर चयनित होने के कागज। इनफ्लेशन के मानक से कमीशन की बढ़ी दर वह देने को प्रस्तुत है। स्कूल की इमारत और सड़क बनने से जुड़े हर व्यक्ति की चाँदी है। सरकार को कमीशन, ठेकेदार को मुनाफा, मजदूरों को दिहाड़ी, छात्रों को छत, कीचड़ सने कच्चे रास्तों पर चलनेवालों को डामर की सड़क, आदि उपलब्ध होती हैं। देखने में आया है कि अफसरों के बँगले, ठेकेदारों की कोठी, जनता को सुभीता, आदि के पीछे विकास की सक्रिय और सार्थक भूमिका है।

विकास के कई आयाम हैं। हर उपभोक्ता का खुद का अनुभव है। कई सरकारें महँगाई का विकास करती हैं। हमने अपने व्यापारी मित्र से इस विषय में शिकायत की तो उन्होंने हमें चुप करा दिया, ''हम स्वतंत्रता के तत्काल बाद से सबका साथ, सबका विकास के इच्छुक हैं। क्या दुकानदार इस देश के नागरिक नहीं हैं? बड़े जनकल्याणी मिशन की कामयाबी के लिए कुछ कष्ट तो सहना ही पड़ता है। देश की प्रगति के रास्ते में रोड़े अटकाना उचित है क्या?'' हम उनसे क्या कहते? आजादी के बाद से हर दल ने अपनी और अपनों की दौलत का विकास किया है। इसे हम व्यक्तिगत दुर्भाग्य ही कहेंगे कि अपन किसी भी दल के कभी अपने नहीं रहे हैं। न अतीत में, न वर्तमान में। कुछ ऐसे प्रगतिशील भी हैं, जो हर पार्टी में खाते हैं। वे बधाई के पात्र हैं। यहाँ तो निजी फर्म के स्वामी ने लक्ष्य निर्धारित कर रखे हैं। उन्हें प्राप्त करो तो तनख्वाह मिलती है, नहीं तो उस तक में कटाई का खतरा है।

इस मामले में हम ही क्यों, हमारे ऐसे अनेक सरकार की उदारता के कायल हैं। वहाँ काम करने पर भले ही कोई दंडित हो, काम न

करने पर वेतन, प्रमोशन, महँगाई भत्ता आदि सब उपलब्ध हैं। महिमा-मंडित शासन तंत्र, 'सरकाने' की सरकार है। जो इधर-उधर फाइल सरकाने में माहिर है, वही कार्य-कुशल है। आजादी के बाद से उनकी बिरादरी खूब फल-फूल रही है। देश का विकास हो या दल का, उसके पर्याय वह खुद ही हैं। उनकी अपनी तरक्की मुल्क की तरक्की का मानक है। इस मानसिकता की पकड़ इतनी प्रबल है कि कोई देश की प्रगति के लिए प्राणों की बाजी भी लगाने को प्रस्तुत हो तो नौकरशाह और नेता उसके विरुद्ध शर्तिया आत्महत्या का केस दर्ज करवा दें?

ऐसा नहीं है कि विगत छह-सात दशकों में देश ने प्रगति नहीं की है। पुल, बाँध, सड़कें, इमारतें, शिक्षा संस्थान, कृषि, विज्ञान आदि हर क्षेत्र में तरक्की हुई है। एक इंजीनियर जो इस विकास के साझीदार रहे हैं, वे हमें बताते हैं कि ''यह व्यर्थ का दुष्प्रचार है कि निर्माण कार्यों में गुणवत्ता का अभाव है। यह जो थोड़ा-बहुत है, वह हमने जान-बूझकर किया है।'' हम अविश्वास की मुद्रा में उनसे पूछते हैं, ''ऐसा क्यों?'' विश्वास के साथ और बिना किसी अपराध-बोध के उनका उत्तर है कि ''आप व्यापक राष्ट्र-हित का नहीं सोचते हैं? यदि सड़क या इमारत ऐसी पुख्ता बन गई कि दस-बीस साल तक उसमें कोई मरम्मत की दरकार नहीं होगी तो रोजगार का क्या होगा? दिहाड़ी के मजदूर कहाँ काम करेंगे? हम उनके प्रति संवेदनशील हैं। उनकी रोजी-रोटी का खयाल रखते हैं। इसीलिए हमारे द्वारा पोले मकान और सड़क बनाए जाते हैं। इससे हर वर्ष मजदूरों की आवश्यकता पड़े। इसी को 'धनवान का पैसा निर्धन के काम आना' कहते हैं।''

हमें शंका कि कहीं यह स्वयं के भ्रष्ट आचरण का बचाव तो नहीं कर रहे हैं? उन्होंने शंका-समाधान के साथ हमारा ज्ञानवर्धन भी किया, ''आप जानते हैं कि नहीं, यह विगत सरकारों की नीति के अंतर्गत है। सबके चुनावी घोषणा-पत्र नए रोजगारों के सृजन की बात करते हैं। नए निर्माण में होता भी है, पर यह पर्याप्त नहीं है। हर वर्ष की हमारी पोली इमारतें और धँसतीं सड़कें रोजगार के ढेरों अवसर प्रदान करती हैं। इतना ही नहीं, इससे मंत्री, अफसर, सामान्य जन के बीच धन के वितरण का समाजवाद भी पधारता है। सबको अपनी-अपनी सामर्थ्य के अनुरूप कमाई की राशि उपलब्ध होती है।''

उनके इस आश्चर्यजनक स्पष्टीकरण से हमें यकीन होने लगा कि यह निजी करप्शन को नीतिगत बनाकर उसका औचित्य सिद्ध कर रहे हैं? उनसे इस प्रकार के सीधे सवाल की गुस्ताखी वर्तमान सभ्य आचरण की मनभावन संस्कृति के विपरीत होती। कौन कहे, वह भविष्य में हमसे अनबोलाचाली न साध लें? कुछ चेहरे ऐसे हैं, जो मन की बात कह जाते हैं। हमारी प्रश्नवाचक मुद्रा के उत्तर में उन्होंने हमें आश्वस्त किया, ''इसमें शंकित होने जैसा कुछ नहीं है। बात बात पर विवाद करने के लतियल विद्वान् भी एक मत हैं कि मनुष्य एक निहायत स्वार्थी प्राणी है। बिना किसी स्वार्थ पूर्ति की संभावना के वह हाथ-पर-हाथ धरे बैठा रहता है। नेता, विक्रेता, दुकानदार, सामान्य इनसान हो या कोई पेशेवर वकील अथवा प्राध्यापक, सब अपने-अपने स्वार्थ की कठपुतली हैं। सूत्रधार स्वार्थ है। कुछ सत्ता के साधक हैं, कुछ पैसे के। कुछ की पेट भरने की विवशता है, तो कुछ की पहचान पाने की। लब्बो-लुआब यह कि सब स्वार्थ प्रेरित हैं। नेता का भाषण हो या फिर गुरुजी का प्रवचन। एक का कर्मयोग कुरसी है, दूसरे का महलनुमा आश्रम, जो विश्वासियों की श्रद्धा-भक्ति से बनकर ही रहता है।

**विकास भी दो प्रकार का है : एक दृश्य, दूसरा अदृश्य। देवदूतों की विशेषता है। यह इधर विकास की बात भी करते हैं तो उधर विकास के फूल खिलते हैं। इतना ही नहीं, कई आस्थावानों को विश्वास है कि इन्होंने एक बार विकास पर जनसभा में भाषण दिया तो प्रत्यक्षदर्शियों ने विकास के लहलहाते झाड़ तक देख लिये! कठिनाई यह है कि ऐसा अदृश्य विकास आस्थावानों को ही नजर आता है। सत्ता से देवता हटे तो विकास का भी लुप्त होना निश्चित है। इसके बावजूद उनके आस्था-समुदाय का मत है कि मुल्क जो भी तरक्की कर रहा है, उसकी नींव देवदूत परिवार के सदस्यों ने ही रखी है। दिक्कत है, नींव दिखती नहीं है, खासकर सामान्य आदमियों को।**

आस्था हिमालय भी हिला सकती है। हालाँकि किसी ने हिमालय को हिलते नहीं देखा है, फिर भी भारत में इसके अनेक उदाहरण हैं। अपनी आस्था व लगन से कई गुरु गुरूघंटाल बन गए हैं। उनका जेल जाना अहम नहीं है। महत्त्वपूर्ण यह है कि चेलों की आस्था उन्हें मुक्त कब करवाती है? कोर्ट के आदेश से नहीं तो जेल तोड़कर? इसी आस्था ने कई परिवारों को प्रजातंत्र का पर्याय बनाकर देश को पारिवारिक प्रजातंत्र की सौगात दी है। प्रारंभ में संसार भर को भारत में प्रजातांत्रिक प्रणाली की सफलता के विषय में संदेह रहा है। प्रजातंत्र को टिकाए रखने में भी इन्हीं करिश्माई परिवारों का अहम योगदान है। सत्ता का पट्टा इन परिवारों के नाम हमेशा के लिए लिख देना था, पर लोकतंत्र में चुनावों की अनिवार्यता का कोई क्या करे? आस्थावानों के अनुसार इन परिवारों में इनसान नहीं, देवदूत जन्म लेते हैं। इनसान होते तो गलती करते! पर ये इनसान न होकर देवता हैं। इनके गलती करने का प्रश्न ही नहीं है।

विकास भी दो प्रकार का है : एक दृश्य, दूसरा अदृश्य। देवदूतों की विशेषता है। यह इधर विकास की बात भी करते हैं तो उधर विकास के फूल खिलते हैं। इतना ही नहीं, कई आस्थावानों को विश्वास है कि इन्होंने एक बार विकास पर जनसभा में भाषण दिया तो प्रत्यक्षदर्शियों ने विकास के लहलहाते झाड़ तक देख लिये! कठिनाई यह है कि ऐसा अदृश्य विकास आस्थावानों को ही नजर आता है। सत्ता से देवता हटे तो विकास का भी लुप्त होना निश्चित है। इसके बावजूद उनके आस्था-समुदाय का मत है कि मुल्क जो भी तरक्की कर रहा है, उसकी नींव देवदूत परिवार के सदस्यों ने ही रखी है। दिक्कत है, नींव दिखती नहीं है, खासकर सामान्य आदमियों को। इधर जब से चुनावों में गड़बड़झाला

होने लगा है, कुछ सेवक किस्म के लोग भी सत्ता में आ जाते हैं। जाहिर है कि इन सेवकों में आस्था का अभाव हो। जब इन्हें विकास के झाड़ तक नहीं दिखते हैं तो भला नींव कैसे दिखे?

प्रजातंत्र में आजकल विकास का दर्जा ईश्वर जैसा है। मंदिर, मसजिद, गुरुद्वारे, चर्च में जानेवाले जैसे ईश्वर की तलाश में जुटे हैं, वैसे ही लोकतंत्र में विकास के नाम पर सियासी दल वोट की। कुछ को वाकई भरोसा है कि विकास का मंत्र ऐसा हनुमान चालीसा हैं, जो चुनावी संकट से उबरने की शर्त है। चुनावी अखाड़े में कुछ सिद्ध पहलवान भी हैं। यह दिखाने को हनुमान चालीसा का पाठ तो करते ही हैं, पर जानते हैं कि साथ-साथ अपनी जाति और अल्पसंख्यकों को पटाना भी श्रेयस्कर है। वास्तविक निष्ठा के अभाव में इसके लिए मंदिरों में मत्था टेकने के अलावा दुपल्ली टोपी से लेकर जातिगत सम्मेलनों का और धर्म-गुरुओं का सहारा लिया जाता है। उनका परिवार अनुभवी है। उन्हें पता है कि हनुमान चालीसा के पाठ के मंत्र के साथ अपने प्रयास भी करते रहने से सफलता संभावित है। ऐसों के लिए अदृश्य विकास एक बेहद उपयोगी शै है। अपने सत्ता-काल में किए गए अदृश्य विकास के कार्यों की सूची गिनवाना वे नहीं भूलते हैं। कैसे उन्होंने वातावारण को प्रदूषण रहित करने को डेढ़ हजार करोड पेड़ लगवाए? विरोधियों ने सत्ता में आते ही इन्हें कटवा दिया। कैसे उन्होंने लाखों को रोजगार देने का प्रबंध किया। जो घरों में बेकार बैठे रहते, उन्हें ग्राम-प्रधान के जरिए 'डोल' की स्टाइल में, नरेगा-मनरेगा की राशि बाँटकर, किसी भी अन्य काम-काज के लिए असमर्थ और अयोग्य बना दिया। इस अदृश्य विकास के समर्थन में वे बहुधा बताते हैं कि उन्होंने गाँवों की दशा ऐसी सुधारी है कि जो कच्चे मकान में रहते थे, वही ग्राम प्रतिनिधि अब कोठियों तक तरक्की कर गए हैं, 'डोल' बाँटने की सामर्थ्य के कारण। 'कंपू' भैया देश को उन्हीं की देन है, वरना इंटरनेट, स्मार्ट फोन और इ-संस्कृति कैसे पनप पाती? अदृश्य विकास लाने में उन्होंने खून-पसीना खूब बहाया है। यही देश को समर्थ और समृद्ध बनाएगा।

कुछ उनके विकास के विषय में शंकालु हैं। वे उन्हें दिलासा देते हैं, ''पूजा-पाठ, यज्ञ-हवन के पश्चात् भी क्या भगवान् या हनुमानजी ने आपको दर्शन दिए हैं? किंतु प्रभु का आपके प्रति वह ऊपरवाले के समकक्ष है। दृष्टिकोण सकारात्मक है। वह कष्ट निवारण को सदा आपके साथ है। ऐसा ही हमारा विकास है। वह हर अभावग्रस्त-वंचित व्यक्ति की, आखिरी पंक्ति के अंतिम व्यक्ति तक की तरक्की में उसके साथ है। परिणाम आने में समय तो लगता ही है।''

हमें आशा है कि अदृश्य विकास के जनक कभी हमें दाल-रोटी भी दे दें। सवाल यह है कि कितने दशकों बाद? फिर भी मन में उम्मीद की धुँधली किरण है कि अपने नहीं तो न सही, कौन जाने, यह अदृश्य विकास भविष्य की पीढ़ियों के काम आए?

९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

साहित्य अमृत

भारत सरकार (गृह मंत्रालय) के राजभाषा विभाग के
पत्रांक ११०१४/८/९६-रा.भा. (प) द्वारा
केंद्रीय सरकार के मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों/
सार्वजनिक उपक्रमों/बैंकों/स्वायत्त निकायों/संस्थाओं आदि के लिए
**एक विशिष्ट मासिक साहित्यिक पत्रिका के रूप में अनुशंसित एवं अनुमोदित।**
**एक प्रति का शुल्क : तीस रुपए**
**एक वर्ष का शुल्क : चार सौ रुपए**
शुल्क मनीऑर्डर अथवा बैंक-ड्राफ्ट द्वारा 'साहित्य अमृत' के नाम
४/१९ आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२ के पते पर भेजा जा सकता है।
**राजभाषा हिंदी तथा सत्साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिए**
**संस्थाओं का सहयोग अपेक्षित है।**

# नई हिंदी का वैश्विक स्वरूप

● दीपक शर्मा

आज तकनीकी युग के बढ़ते प्रभाव के बावजूद भी हिंदी भाषा की माँग देश-विदेश में बढ़ती जा रही है। अब हिंदी भाषा का क्षेत्र केवल साहित्यिक-सांस्कृतिक क्षेत्र तक ही सीमित नहीं रहा। फिल्म, कला और संस्कृति के एक विशाल बाजार में भी हिंदी भाषा की मजबूत दस्तक देखी जा सकती है। संपूर्ण विश्व आज एक नई हिंदी को देख रहा है। आज हिंदी रोजगार से जुड़ते हुए, विकास के कई अवसरों को अपने भीतर अंकुरित करने लगी है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी का पठन-पाठन अनेक रूपों में आरंभ हो चुका है। कहना होगा कि हिंदी भाषा की सबसे बड़ी विशेषता है कि उसने न केवल अपनी क्षेत्रीय बोलियों को अपने भीतर आत्मसात् किया हुआ है बल्कि विश्व भर की अन्य भाषाओं अंग्रेजी, अरबी, रूसी, जापानी, तुर्की इत्यादि भाषाओं को भी अपने भीतर एकमेक किया हुआ है। सभी को ज्ञात है कि हिंदी भाषा का हृदय बहुत विशाल है, जिसके भीतर संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश, फारसी, अरबी, तुर्की, अंग्रेजी फ्रांसीसी इत्यादि भाषाओं के साथ-साथ, भारत की ही अनेक बोलियों के शब्द समाहित हैं, जिसे हिंदी ने बहुत ही खुले मन से अपनाया है और जो आज हिंदी भाषा के ही अपने शब्द प्रतीत होते हैं। लेकिन वर्तमान में आलोचकों का एक तबका तो हिंदी भाषा से अन्य भाषाओं के साथ-साथ ब्रज, अवधी, भोजपुरी, बांग्ला, खड़ी बोली जैसी बोलियों को अलग करने पर जोर दे रहा है। इस वर्ग की मान्यता है कि इन सबसे विरक्त होकर ही न केवल हिंदी भाषा का वास्तविक स्वरूप सबके सामने आएगा वरन् अन्य बोलियों के अस्तित्व को भी बचाया जा सकेगा। ध्यातव्य रहे कि हिंदी भाषा इन बोलियों के अस्तित्व के लिए खतरा न होकर उनके अस्तित्व का पुनर्निर्माण है, जो इन बोलियों को भी एक ग्लोबल अभिव्यक्ति दिलवाती है।

इन लोगों को यह समझना चाहिए कि हिंदी में समाविष्ट होकर इन बोलियों का क्षेत्र विस्तार ही हो रहा है। हिंदी भाषा ने अंग्रेजी भाषा को अपनी एक उपबोली की तरह ही बना लिया है। हिंदी की अन्य उपबोलियों की भाँति अंग्रेजी भाषा भी हिंदी के भीतर अच्छे से रच-बस गई है। ऐसे में हिंदी के स्वरूप में रची-बसी ये बोलियाँ हिंदी से अलग होकर घाटे में ही रहेंगी, क्योंकि जो क्रय-शक्ति एवं बाजार आज हिंदी भाषा के पास है, वह इन बोलियों को नहीं मिल सकता। वैश्वीकरण ने हिंदी भाषा को जो विस्तार दिया है, संभवतः हिंदी को ऐसा विस्तार पाने के लिए कई और वर्ष लगनेवाले थे। इसका कारण भी स्पष्ट है कि हिंदी भाषा के पास एक बहुत बड़ा बाजार है जिसे पाने के लिए विभिन्न व्यापारिक निगमों को इस हिंदी भाषा से ही होकर गुजरना होगा अन्यथा ये निगम भारत में प्रभावशाली रूप से कार्य नहीं कर सकते हैं।

नवोदित लेखक। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। जूनियर रिसर्च फेलोशिप (यू.जी.सी.)। 'ऐंबेस्डर ऑफ पीस' पुरस्कार से सम्मानित। संप्रति स्वतंत्र-लेखन एवं अतिथि प्राध्यापक, दिल्ली विश्वविद्यालय।

भूमंडलीकरण का ही प्रभाव मानना चाहिए कि जो हिंदी भाषा अभी तक गरीब एवं पिछड़े वर्गों की भाषा मानी जाती थी, अब वह देश और दुनिया में अपनी सक्रिय उपस्थिति दर्ज करवा चुकी है। आज हिंदी मनोरंजन की सबसे बड़ी भाषा है। हिंदी विश्व के दूसरे सबसे बड़े फिल्म उद्योग बॉलीवुड का भी प्रमुख माध्यम है।

भारत में चैनल-विस्फोट के दौरान उपजे मनोरंजन एवं समाचार चैनलों की भी केंद्रीय भाषा हिंदी ही है, जिसके दर्शक देश-विदेशों में भी बहुतायत में हैं। अब हिंदी गरीब और पूँजीवादी वर्ग दोनों की भाषा बन चुकी है। फिर भले ही पूँजीवादी वर्ग हिंदी को मजबूरी में ही अपना रहा हो। आज तो अनेक पूँजीवादी देशों में हिंदी भाषा सिखाई जा रही है। खुद अमरीकन सरकार अपने देश में हिंदी भाषा को सिखाने के लिए लाखों-करोड़ों डॉलर खर्च कर रही है। इसी क्रम में ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी इत्यादि देशों का नाम भी लिया जा सकता है। भविष्य में हिंदी भाषा के इस विस्तार के बढ़ने की भी अनेक घोषणाएँ की जा चुकी हैं, जिन्हें नजरंदाज नहीं किया जा सकता है। हिंदी भाषा की लिपि की अगर बात की जाए तो कहना होगा कि यह विश्व की सबसे वैज्ञानिक लिपि है। यह मंदारिन भाषा की लिपि की तरह जटिल लिपि नहीं है कि जिसे समझने में ही सालो-साल लग जाएँ। हमें यह भी ज्ञात है कि तुर्किश और इंडोनेशियन भाषा को अपने प्रसार के लिए रोमन लिपि को अपनाना पड़ा, लेकिन हिंदी भाषा न केवल भारतीय परिवेश में भावों को अच्छी तरह से व्यक्त करने में समर्थ रही है बल्कि तकनीकी स्तर पर भी हिंदी भाषा ने अपार सफलताएँ अर्जित की है। इसी के चलते विभिन्न इंटरनेट एक्सप्लोरर, ऑपेरा ब्राउजर, नेटस्केप, मौजिला के साथ-साथ सबसे बड़ा सर्च इंजन माने जानेवाला गूगल भी हिंदी को सपोर्ट करता है।

हिंदी भाषा के लिए काफी समय से एक जुमला प्रचलित है कि 'हिंदी गरीब की भौजाई है', लेकिन अब इस जुमले का अतिक्रमण करती हुई हिंदी भाषा गरीब की भौजाई ही नहीं, बल्कि इस बाजार की माँ बन बैठी है। भारतीय संदर्भ में कहें तो बाजार को अपनी इस माँ का आँचल थामकर ही आगे बढ़ना होगा। मीडिया के संदर्भ में अगर बात की जाए तो कहना होगा कि आज हर चैनल या तो हिंदी में

अपना प्रसारण कर रहा है या करना चाहता है। हॉलीवुड फिल्मों का हिंदी में प्रसारण हो रहा है और अब तो दक्षिण भारतीय फिल्मों का भी हिंदी में प्रसारण विभिन्न चैनलों पर होता रहता है, जो हिंदी की बढ़ती हुई शक्ति को ही दर्शाता है। न केवल कंप्यूटर बल्कि मोबाइल फोन में भी हिंदी के विभिन्न सॉफ्टवेयर का प्रयोग किया जा रहा है और हिंदी भाषा से संबंधित नई-नई एप्लीकेशनों को निर्मित किया जा रहा है।

हर देशी और विदेशी कंपनी हिंदी भाषा में अपना एक निजी हिंदी चैनल लाने की ताक में रहती है। साहित्य के क्षेत्र में भी अन्य भाषाओं से सबसे ज्यादा अनुवाद हिंदी भाषा में ही किए जा रहे हैं। इस बाजार आधारित अर्थव्यवस्था और इससे उत्पन्न होनेवाली परिस्थितियों ने हिंदी भाषा के संसार को ही बदलकर रख दिया है। यह बदलाव इस गति से हो रहा है कि उसे ठीक से कुछ निश्चित शब्दों में बाँधना बहुत मुश्किल कार्य है। लेकिन इस बदलाव ने निश्चित ही हिंदी भाषा के शब्द भंडार को समृद्ध किया है, जिसके कारण हिंदी के विस्तार की गति और भी तेज हो गई है। इसे हम यों भी कह सकते है कि हिंदी स्वतंत्र होकर बिना किसी सरकारी सहायता के आगे बढ़ रही है। हिंदी भाषा में यह दम और साहस इसी बाजार ने दिया है, जिसे हिंदी साहित्यिक समाज दिन रात कोसते रहते हैं। जिस हिंदी के विकास में सरकारी तंत्र पिछले अनेक वर्षों से प्रयासरत रहा है और जिसने हिंदी सुधार के नाम पर हिंदी को केवल किताबों और पुस्तकालयों तक ही सीमित कर दिया, बाजार ने उसी हिंदी का बहुत ही रचनात्मक और व्यावहारिक प्रयोग कर हिंदी की सूरत ही बदलकर एक नई हिंदी का निर्माण किया है। सरकारी कार्यालयों में एक पंक्ति अवश्य देखते हैं, 'अगर आप हिंदी।'

बात करेंगे तो हमें प्रसन्नता होगी। लेकिन इसके अलावा कुछ भी सार्थक काम हिंदी के प्रति नहीं किया गया है। हिंदी भाषा के प्रति जो धिक्कार बोध इस प्रकार की क्रियाओं द्वारा विकसित हुआ है, उसी को सबसे पहले इस नई हिंदी ने चोट की है। उसी हिंदी ने आज इससे अलग अपनी एक दुनिया को निर्मित किया है, जिसे आज पहचानना बहुत जरूरी है। सही मायनों में वही हिंदी की वास्तविक शक्ति है। सत्तर के दशक में हिंदी 'अंग्रेजी हटाओ' की माँग करनेवाली भाषा थी, आज वह अंग्रेजी पचाओ की भाषा बन गई है। हिंगलिश या हिंग्रेजी इसकी नई शैली है, जो उत्तर-उदारीकरण वाली ग्लोबल पीढ़ी के उन्मुक्त संवाद की भाषा बन गई है। वह सोशल मीडिया के तुरता 'कनेक्ट' की 'चैट' की और 'ट्विट' की भाषा बन गई है। इस प्रक्रिया में वह सबसे अधिक बोली जानेवाली भाषा बन गई है और अब सबसे बड़े हिंदी-मार्केट की भाषा है । (इंडिया टुडे, नवंबर २०१६, पृष्ठ १८९)

जिस ब्लॉग की चर्चा अभी तक अंग्रेजी भाषा के संदर्भ में होती थी और जो हिंदी भाषा एवं हिंदी भाषियों के लिए एक अजनबी दुनिया थी आज उसी ब्लॉग की दुनिया में हिंदीवालों ने तहलका मचा दिया है। रोज-रोज अनेक हिंदी ब्लॉगरों का इस हिंदी ब्लॉगिंग के क्षेत्र में आना हिंदी की बढ़ती हुई शक्ति को ही बता रहा है। इस क्षेत्र में जो सबसे क्रांतिकारी काम हुआ वह था, 'यूनिकोड' नामक एक हिंदी भाषा से संबंधित ऐसा एन्कोडिंग सिस्टम, जिसने हिंदी को वही शक्ति प्रदान की, जो अभी तक अंग्रेजी भाषा के पास थी। जिस सरलता से अंग्रेजी भाषा का प्रयोग कंप्यूटर और अन्य तकनीकी क्षेत्रों में किया जाता था, अब बिलकुल वैसा ही प्रयोग हिंदी भाषा का भी होने लगा है। इस एन्कोडिंग सिस्टम ने हिंदी की सूरत ही बदलकर रख दी, जिससे हिंदी भाषा के बाजार में बहुत तेजी से कितार हुआ और हिंदी ने विभिन्न व्यापारिक निगमों से हाथ मिलाकर उनकी हमकदम बन गई। यहाँ फिर यह बात सिद्ध हो जाती है कि नई हिंदी का हृदय बहुत विशाल और तालमेल बिठानेवाला है, जिसने न केवल अन्य भाषाओं बल्कि टेक्नोलॉजी के साथ भी कदम मिलाया है। आर्थिक रूप से मजबूत होनेवाली यह नई हिंदी केवल संस्कृत के शुद्धतावादी खूँटे से नहीं बँधी रह सकती है। इसका एक विशिष्ट कारण भी यह है कि यह नई हिंदी केवल हिंदी-भाषी समूह का ही हिस्सा नहीं है, बल्कि हिंदीतर समाजों का भी यह एक महत्त्वपूर्ण अभिन्न अंग बन चुकी है। यही वह शक्ति है जिसकी बार-बार चर्चा कर सबका ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहते हैं।

**अंतरराष्ट्रीय स्तर पर चालीस से अधिक देशों में लगभग ६५० विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा का अध्ययन-अध्यापन किया जाता है। हम देखते हैं कि अमेरिका और यूरोप में आज हिंदी का पठन-पाठन शुरू हो चुका है। कनाडा और अमेरिका में ही अकेले लगभग ४५ विश्वविद्यालयों में हिंदी का शिक्षण हो रहा है। अमेरिका के येन यूनिवर्सिटी में तो १८१५ से हिंदी भाषा के शिक्षण की व्यवस्था है। फ्रेंच, रूसी, जर्मन और अंग्रेजी भाषाओं की महत्त्वपूर्ण पुस्तकों का अब हिंदी में भी अनुवाद शुरू हो चुका है।**

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर चालीस से अधिक देशों में लगभग ६५० विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा का अध्ययन-अध्यापन किया जाता है। हम देखते हैं कि अमेरिका और यूरोप में आज हिंदी का पठन-पाठन शुरू हो चुका है। कनाडा और अमेरिका में ही अकेले लगभग ४५ विश्वविद्यालयों में हिंदी का शिक्षण हो रहा है। अमेरिका के येन यूनिवर्सिटी में तो १८१५ से हिंदी भाषा के शिक्षण की व्यवस्था है। फ्रेंच, रूसी, जर्मन और अंग्रेजी भाषाओं की महत्त्वपूर्ण पुस्तकों का अब हिंदी में भी अनुवाद शुरू हो चुका है। अकेले रूस में जितना अनुवाद हिंदी भाषा से हुआ है, उतना तो शायद ही किसी अन्य भाषा का हुआ होगा। रूसी विद्वान् वारान्निकोव ने तो गोस्वामी तुलसीदास के 'रामचरितमानस' का भी रूसी भाषा में सफल अनुवाद किया है। जापान में भी लगभग ६ विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा को पढ़ाया जाता है। यूनिवर्सिटी ऑफ वेस्टइंडीज में तो 'हिंदी-पीठ' की भी स्थापना की जा चुकी है। गुयाना ऐसा देश है, जहाँ स्नातक स्तर तक हिंदी भाषा के अध्ययन का प्रावधान है। जो यू.ए.ई. स्वर्ण के लिए जाना जाता है, वहाँ पर भी हम हिंदी भाषा के लगभग तीन रेडियो चैनलों को सुना जा सकता है। हिंदी डेली-सोप और हिंदी संगीत वहाँ बहुत लोकप्रिय है। ब्रिटेन के

जॉन गिलक्राइस्ट, मोनियर, केलाग होरली, ग्रियर्सन जैसे विद्वानों ने भी हिंदी भाषा और साहित्य के लिए बेहतर कार्य करके हिंदी भाषा का उद्धार किया है। यहाँ तक कि भारत के पड़ोसी देशों नेपाल, म्याँमार, श्रीलंका, अफगानिस्तान में भी हिंदी भाषा के सरलतम प्रयोग को किसी-न-किसी स्तर पर देखा जा सकता है। श्रीलंका में प्रयोग होनेवाली 'सिंहली' भाषा हिंदी-क्षेत्र की ही एक भाषा मानी जा सकती है। बताना होगा कि एशिया में नेपाल ही ऐसा देश है, जहाँ हिंदी भाषा को उच्च शिक्षा के लिए भी प्राथमिकता दी गई है। नेपाल की ही 'त्रिभुवन-यूनिवर्सिटी' में हिंदी विभाग की स्थापना की गई है। हिंदी भाषा को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सशक्त करने में चीन का भी अच्छा योगदान रहा है। हिंदी भाषा के क्षेत्र में चीनी विद्वान् और प्रोफसर ल्युकोनान के योगदान से आज अभी परिचित हैं । चीन के ही अन्य विद्वान् चिन-तिंग-हान के हिंदी भाषा के प्रति समर्पण से भी हम अनजान नहीं हैं, जिन्होंने हिंदी-चीनी शब्दकोश, हिंदी-चीनी मुहावरा कोश के साथ-साथ हिंदी कथा सम्राट् प्रेमचंद के प्रसिद्ध उपन्यास 'निर्मला' का भी चीनी भाषा में अनुवाद किया था। चीनी विश्वविद्यालयों और स्कूलों में हिंदी भाषा का पठन-पाठन काफी वर्षों से चल रहा है। यद्यपि चीनी स्कूलों में चीनी भाषा में ही स्कूली किताबें मिलती हैं। विश्व भर में १७६ विश्वविद्यालयों में हिंदी शिक्षण की व्यवस्था है। (जी न्यूज-डी.एन.ए. रिपोर्ट, रात ९ बजे, १३/०६/१७)

भारतीय परिप्रेक्ष्य में अनेक विद्वानों का तर्क रहा है कि हिंदी भाषा का वास्तविक अर्थ वह हिंदी है, जिसमें अनिवार्य रूप से शुद्धता का ध्यान रखा जाए। जिसमें अंग्रेजी व अन्य भाषाओं के शब्दों का समावेश नहीं होना चाहिए और अगर ऐसा कहीं होता भी है तो उस हिंदी भाषा से उन शब्दों को तुरंत निकालकर बाहर का रास्ता दिखा देना चाहिए। ऐसे लोगों का उद्देश्य हिंदी को एक विशुद्ध भाषा के रूप में सुरक्षित रखने का होता है, जो हिंदी के शुद्धतावाद को भले ही सँभालकर रख ले, मगर हिंदी को जनसमाज से काट देती है। इस विशुद्ध हिंदी से केवल एक विशेष पाठक वर्ग ही जुड़ पाता है, जिसका संबंध हिंदी अध्ययन-अध्यापन से अनिवार्य रूप से रहता है। यह ऐसी हिंदी होती है, जिसे पढ़कर कोई जन, हिंदी-संस्कृति और हिंदी-व्याकरण को तो भलीभाँति समझ सकता है लेकिन हिंदी को उत्पादन एवं व्यवसाय से नहीं जोड़ पाता। हिंदी भाषा के व्यावहारिक बोध से वंचित रहकर हिंदी के प्रति एक धिक्कार-बोध से ग्रसित हो जाता है। अधिक-से-अधिक वह हिंदी भाषा और साहित्य से संबंधित एक-दो किताबें लिखकर कुछ रुपए-पैसों का इंतजाम तो कर सकता है, लेकिन हिंदी की वास्तविक शक्ति से अपरिचित ही रहता है। ऐसी हिंदी ही हिंदी भाषियों में एक धिक्कार-बोध को जन्म देती है, जिसके चलते हिंदी भाषी स्वयं को अन्यों से पिछड़े हुए मानने लगते हैं। स्वयं को दूसरों की नजरों से देखना प्रारंभ कर देते हैं, जिसमें उन्हें सिवाय उपेक्षा और कभी सहानुभूती के अलावा कुछ नहीं मिलता। जब तक हम इसी हिंदी के दामन को पकड़कर आगे बढ़ेंगे, तब तक हिंदी भाषा और हिंदी बोलनेवालों को उपेक्षा और तिरस्कार का सामना करना पड़ेगा। आज उपभोक्तावादी व्यवस्था ने हिंदी भाषियों को एक राह सुझाई है कि कैसे हिंदी का सही इस्तेमाल हो सकता है। हिंदी की शक्ति का कैसे रचनात्मक प्रयोग किया जाना चाहिए। कहना होगा कि इस बाजारवादी अर्थव्यवस्था में भले ही अनेक खामियाँ हैं, लेकिन हिंदी का भविष्य इस अर्थव्यवस्था में सुरक्षित है। हिंदी भाषा को इसी अर्थव्यवस्था ने पुनर्जीवित किया है। हमें आज यह समझना चाहिए कि हिंदी की शक्ति उसकी शुद्धता में नहीं, उसके व्यावहारिक प्रयोग में है। हिंदी की प्राणवत्ता अधिसंख्य समुदाय से जुड़ने में है, न कि उसे कुछ निश्चित मानकों में समेटकर रखने में। पहले हिंदी 'स्लोमोशन' की भाषा थी, अब वह 'फास्ट फॉरवर्ड कम्यूनिकेशन' की भाषा है। पहले वह सीमित बातचीत की भाषा थी, अब वह 'ग्लोबल कनेक्टिविटी' की भाषा है। पहले वह संस्कृत के खूँटे से बँधी थी, अब वह खूँटा तोड़कर भाग छूटी है और खुद एक खूँटा बन गई है, जिसमें दूसरी भाषाओं के शब्द बँधे रहते हैं। पहले वह पराए शब्दों से परहेज किया करती थी, अब वह पराए शब्दों को पचानेवाली भाषा है।' (इंडिया टुडे, ३० नवंबर, २०१६, पृष्ठ ८९)

समग्रत: कहना होगा कि आज हिंदी भाषा अपने पुराने चोले को उतारकर नई होकर हमारे सम्मुख उपस्थित है। जिस शुद्धतावादी दृष्टिकोण की दुहाई आमतौर पर हिंदी के लिए दी जाती रही है, उसे हिंदी भाषा ने काफी पीछे छोड़ दिया है, जो आज के परिदृश्य में बहुत जरूरी भी था। अगर हिंदी भाषा को इसी शुद्धतावाद के फेर में व्यस्त रखा तो वह दिन दूर नहीं, जब हिंदी भाषा की मृत्यु पर शोक मनानेवाला भी कोई नहीं मिलेगा और न ही कोई हिंदी पढ़ना-लिखना चाहेगा। 'भाषा बहता नीर' कहकर कबीरदास ने वर्षों पहले भाषा के मूलतत्त्व को हिंदी भाषा के संदर्भ में व्याख्यायित कर चुके हैं। भाषा का मतलब सरल रूप में 'निहित भावों और विचारों को अपने लक्षित वर्ग तक पहुँचाना' होता है और आज हिंदी यही कर रही है। हिंदी आज ग्लोबल ही नहीं, 'ग्लोकल' भाषा बनने की तरफ अग्रसर है। सोशल मीडिया में आज हिंदी में संदेश 'मेसेज' बन गया है तो बातचीत 'चैटिंग' बन गई है। जिसे देखकर अनेक शुद्धतावादियों को खीझ उठती होगी, लेकिन आज हिंदी कि यही शक्ति है, जिसने उसे जनसामान्य से जोड़ा हुआ है। जिस 'मिश्रण' को कुछ आलोचक नापसंद करते हैं, वस्तुत: यही मिश्रण हिंदी की खूबसूरती और शक्ति है। आज सभी को ज्ञात हो गया है कि भारत में हिंदी भाषा का बहुत बड़ा बाजार है। हिंदी भाषा के माध्यम से बहुराष्ट्रीय निगम अपने माल की खपत को कई गुना बढ़ा सकते हैं। परिणामस्वरूप, विभिन्न देशों की बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने अपने देशों में हिंदी-शिक्षण को बढ़ावा देने के कार्य को तेजी से अमली जामा पहनाना शुरू कर दिया है। हिंदी सिनेमा भी अपने संवादों और गीत-संगीत के चलते अपनी वैश्विक पहचान बनाए हुए है, जिससे हिंदी भाषा के प्रति वैश्विक स्तर पर आकर्षण बढ़ता जा रहा है। वह दिन अब दूर नहीं जब यह नई हिंदी अपने इस वैश्विक प्रसार की वजह से संयुक्त राष्ट्र में भी आधिकारिक भाषा का दर्जा प्राप्त कर लेगी।

ई-१/३२३, शिवराम पार्क
नांगलोई, दिल्ली-११००४१
दूरभाष : ०९८११४२४२००

# शिक्षक दिवस (५-९-२०१७)

● रामदरश मिश्र

हाँ, आज शिक्षक दिवस है। मेरे लिए तो इसका दुहरा अर्थ है, यानी मेरे शिक्षक तो थे ही, मैं भी ३४ वर्ष तक शिक्षक रहा हूँ। दोनों के अनुभवों की जुगलबंदी से गुजर रहा हूँ। याद आ रहे हैं गाँव के प्राइमरी और मिडिल स्कूल। उनकी याद आती है तो एक खुशबू से भर जाता हूँ। यों उस समय की पढ़ाई के साथ दंड जुड़ा हुआ था। मैं पढ़ने में अच्छा रहा, फिर भी कभी-कभी अकारण या सकारण रूप से दंडित होता रहा। सकारण दंडित होने पर दु:ख नहीं होता था, किंतु अकारण पिट जाने पर दु:ख के साथ क्रोध भी आता था। पंडित रामचंद्र त्रिपाठी तो छात्रों को पीटने के लिए विख्यात थे, बल्कि कुख्यात थे। वे समझते थे कि मारने-पीटने से ही छात्रों को विद्या आएगी, किंतु होता उसका उल्टा था। जिस बात के लिए वे पीटते थे, कक्षा में वह बात बनती तो क्या और बिगड़ जाती थी। हाँ, जब घर आकर इत्मीनान से स्वयं या भइया के सहयोग से उस पर विचार करता था, तब बात बन जाती थी। इसी प्रक्रिया से मैं पढ़ाई में आगे निकलता गया। अपनी कक्षा में अच्छा छात्र माना जाता रहा।

याद आता है एक प्रसंग। मैं दर्जा एक में था। संभवत: सात साल का रहा होऊँगा। पाठ्यक्रम में मन्नन द्विवेदी की 'बाल कवितावली' लगी थी, उस मरकहे शिक्षक ने बच्चों से कहा कि बाल कवितावली की कविताएँ जुबानी सुनाओ। कोई भी याद करके नहीं आया था। भला यह भी कोई बात थी कि बच्चे कवितावली की कविताएँ याद करके आए हों। फिर क्या था, उस निर्दय शिक्षक ने बच्चों को धूप में खड़ा कर दिया और कहा कि आँखें फाड़-फाड़कर सूरज की ओर देखो। फिर उसने बच्चो के तलवों पर डंडे से प्रहार करना शुरू कर दिया। बच्चे चिल्लाने लगे। दर्जा दो की कक्षा ले रहे गुजेशवरी पंडित चिल्लाकर बोले, 'अरे जल्लाद, बच्चों की जान लेगा क्या?'

उसी पंडित रामचंद्र ने कई वर्ष पूर्व भैया की बाँह पर डंडा मारा था। बाँह कट गई थी, खून बह रहा था। भैया घर आए तो खाना खाते हुए रोए जा रहे थे। बात खुली तो पिताजी कई मित्रों के साथ लाठी लेकर स्कूल पहुँच गए। पंडित रामचंद्र तो छिप गए। प्रधानाचार्य (जो कि बहुत सम्मानित शिक्षक थे और जिन्हें बड़का पंडित भी कहा जाता था) ने क्षमायाचना की।

पाठशालाओं में पढ़ाने के क्रम में बच्चों की पिटाई करने की प्रथा इतनी अनुचित थी कि कई छात्र तो पाठशाला तो पाठशाला, घर छोड़कर भाग जाते थे। पिटाई अकारण भी हो जाती थी। दो प्रसंग मुझे याद आ रहे हैं। तब मैं दर्जा चार में था, गंगा पंडित पढ़ाते थे, उस कक्षा में मेरे गाँव का संत प्रसाद भी पढ़ता था। वे खाते-पीते घर का बिगड़ंत लड़का था। पढ़ाई-लिखाई में शून्यवत् या उसके पास पैसे तो होते ही थे और भी चीजें होती थीं। एक दिन उसने गंगा पंडित से शिकायत की कि किसी लड़के ने उसका चाकू चुरा लिया है। गंगा पंडित ने कहा, 'जिसने चाकू लिया हो, वह दे दे, नहीं तो पूरी कक्षा की पिटाई होगी।' चाकू किसी ने नहीं लिया था तो दे कहाँ से दे। बस फिर क्या था, पूरी कक्षा की पिटाई हो गई। मैंने सोचा, यह कोई न्याय नहीं है, यह तो शिक्षक की गुंडागर्दी है। दरअसल चाकू की चोरी हुई नहीं थी, यह तो संतप्रसाद यानी संतू की बदमाशी थी।

हिंदी के मूर्धन्य कवि-साहित्यकार, जिन्होंने साहित्य की अनेक विधाओं को अपने रचनात्मक अवदान से समृद्ध किया। 'जल टूटता हुआ' और 'पानी के प्राचीर' उपन्यासों की धूम रही। अभी हाल में कविता-संग्रह 'आम के पत्ते' 'व्यास सम्मान' से अलंकृत। इसके अतिरिक्त भी अनेक विशिष्ट सम्मान प्राप्त।

दूसरा प्रसंग याद आ रहा है कि हम लोग जिस कमरे में पढ़ते थे, उसकी छत पर मधुमक्खी का छत्ता लगा हुआ था। एक दिन क्लास छूटने के समय कोई लड़का छत्ते को छेड़ गया। मैं पीछे था। मधुमक्खियों ने समझ लिया कि मैंने ही छेड़ा है।

वे मुझे काटने लगीं, उन्होंने तो काटा ही, गंगा पंडित भी काटने लगे। यह समझकर कि छत्ते को मैंने ही छेड़ा है।

जो भी हो, वे मेरे शिक्षक रहे हैं और कक्षाओं में मुझे जो ज्ञान प्राप्त हुआ, उन्हीं की वजह से हुआ। उन्हीं के प्रयत्नों से सीढ़ी-दर-सीढ़ी चढ़ता गया। बाद में (यानी जब मैं कुछ बना गया) जब वे लोग मिलते थे तो मैं साभार उनके सामने झुक जाता था और वे लोग भी गौरव अनुभव करते थे कि मैं उनका शिष्य रहा हूँ तथा वे मुझे खुले मन से आशीष देते थे।

मेरी समूची पढ़ाई-यात्रा में बहुत से गुरु मिले और सबने मुझे कुछ-न-कुछ दिया ही, किंतु कुछ गुरु ऐसे मिले, जिन्होंने अपने गहरे ज्ञान और मानवीय व्यवहार से मुझे गहरे प्रभावित किया। उन्हें मैं सदा बहुत शिद्दत से याद करता हूँ। याद कर-करके भाव-विभोर हो जाता हूँ। उन पर मैंने संस्मरण भी लिखे हैं। वे हैं मिडिल स्कूल बिकाऊ

पंडित, विशेष योग्यता के शिक्षक पंडित रामगोपाल शुक्ल और उच्चतम शिक्षा के गुरु आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी। मैंने इनसे शिक्षा ही नहीं पाई, जीवन-ज्योति भी पाई। इनका व्यक्तित्व बहुविध छवियों से दीप्त था। आज भी लगता है कि इनके ज्ञान और छात्र-स्नेह की ज्योति मेरे भीतर जगमगा रही है।

और मैं अपनी शुरुआत को कैसे भूल सकता हूँ। वह माता तो थी ही, अक्षर करानेवाली गुरु भी थी। उसी ने मेरी जड़ता को तोड़कर अक्षर-ज्ञान कराया था। उसने मुझे अक्षरों के साथ न लगाया होता तो मैं क्या बना होता। तब मुझे याद करनेवाले गुरु कहाँ मिलते ? वह माँ के रूप में मुझमें छाई ही रहती है, सारस्वत ज्ञान के रूप में भी दीप्त रहती है। वह मेरी सारस्वत-यात्रा की प्रवर्तक गुरु माँ रही है। अनेक गुरुओं का ज्ञान ग्रहण करते-करते एक दिन मैं स्वयं शिक्षक बन गया।

**अंत में ही सही, सर्वाधिक प्रमुखता से अपने बी.एच.यू. के शिक्षक कल को याद कर रहा हूँ। एम.ए. करके निकला था तो चार महीने के लिए बी.एच.यू. के कमच्छा स्थित सेंट्रल हिंदू कॉलेज में अध्यापन का अवसर मिल गया था। तब मैं था ही क्या? नया-नया शिक्षक हुआ था, लेकिन उन चार महीनों में बहुत सारे शिष्य मिल गए। उन्होंने मुझे बहुत मान दिया। कौशल किशोर और वंशबहादुर आगे चलकर उच्च पदस्थ हुए किंतु वे मुझे सदा गुरु मानते हैं और सम्मान देते रहे हैं। आज के यशस्वी कवि विजेंद्र भी मेरी कक्षा में थे और वे आज तक मुझे गुरु के रूप में देखते रहे हैं तथा याद करते रहते हैं। कथाकार काशीनाथ भी उस कक्षा में थे और उनका भी सम्मान-भाव मुझे मिलता रहा।**

मैंने शिक्षण कार्य बी.एच.यू. से शुरू किया औए एम.एस. यूनिवर्सिटी बड़ौदा तथा गुजरात विश्वविद्यालय से होता हुआ दिल्ली विश्वविद्यालय पहुँचा। मैं नहीं जानता कि मैंने छात्रों को क्या दिया किंतु अपनी शक्ति भर देने का प्रयास करता रहा तथा अपने और उनके बीच की दूरी कम करने का प्रयास करता रहा। कौन मुझे कितना याद करता है, मुझे ज्ञात नहीं।

लेकिन कुछ संदर्भों को याद कर बहुत सुकून अनुभव करता हूँ। याद है अहमदाबाद में तब बी.ए. ऑनर्स की कक्षा लेनी शुरू की, तब एक छात्र उद्दंड सा लगा। लगा कि वह कक्षा में पढ़ने नहीं, मौज-मस्ती करने आया है। कुछ दिनों बाद वह मेरे घर आया और पाँव छूकर बैठ गया। मैंने पूछा, 'कहिए कुछ काम है?' उसने कहा, 'नहीं गुरुजी, कृतज्ञता ज्ञापित करने आया हूँ।' 'किस बात की भाई?' 'गुरुजी, मैं पहले कक्षा में आकर यों ही बैठता था। छात्रों और गुरुओं से चुहुल करता था। शुरू में मैंने आपको भी गंभीरता से नहीं लिया किंतु आपकी कक्षा में बैठते-बैठते पढ़ने में जी लगने लगा। लगा कि अब मुझे कुछ बनना है।'

'खुश रहो बेटे, देर से सही, तुम सही रास्ते पर आ गए?'

वह लड़का पढ़-लिखकर एक कॉलेज में प्राचार्य बन गया।

दूसरे छात्र थे विनीत गोस्वामी। उनके बड़े भाई नवनीत गोस्वामी बी.ए., एम.ए. में मेरे छात्र रहे। अत्यंत शालीन और अध्ययनशील छात्र थे। वे मुझसे कहते थे, 'सर, विनीत तो अत्यंत लापरवाह है। घूमता-घामता रहता है, पढ़ने में उसका जी नहीं लगता है।' लेकिन जब वह मेरा छात्र बना तो मेरे व्यक्तिगत संपर्क में भी आता गया और उसका मन अध्ययन में रमता गया। अच्छे अंकों से एम.ए. करके पिलवई कॉलेज में प्रवक्ता बन गया और पी-एच.डी. के लिए अच्छा शोध-प्रबंध लिखा। वह मेरे उन थोड़े से छात्रों में रहा, जो सदा मेरे साथ गहरा लगाव अनुभव करते रहे हैं। विनीत एक दिन अनंत यात्रा पर चला गया। उसकी बहुत याद आती है। मैंने 'शिष्य चरित' नामक एक संस्मरण उस पर लिखा है।

दिल्ली के शिष्य तो दिल्ली में ही हैं और कभी-कभी मिलते-जुलते रहते हैं। हाँ, ज्ञानचंद गुप्त मेरे शिष्य ही नहीं रहे, मेरे सुख-दुःख में शरीक होनेवाले पारिवारिक सदस्य भी बन गए थे, दुःख है कि वे वर्षों से बीमार होकर अपने घर में कैद से हो गए हैं। दिल्ली तो पास होकर भी उतनी पास नहीं लगती किंतु गुजरात दूर होकर भी बहुत पास लगता है। स्व. भोलाभाई पटेल, रघुवीर चौधरी, स्व. अवधनारायण त्रिपाठी, स्व. महावीर सिंह चौहान, स्व. करुणेश शुक्ल, स्व. नवनीत, विनीत गोस्वामी, भवर लाल गुर्जर आदि मेरे पास ही बैठे हैं और हमारे सुख-दुःख परस्पर संवाद कर रहे हैं।

अंत में ही सही, सर्वाधिक प्रमुखता से अपने बी.एच.यू. के शिक्षक कल को याद कर रहा हूँ। एम.ए. करके निकला था तो चार महीने के लिए बी.एच.यू. के कमच्छा स्थित सेंट्रल हिंदू कॉलेज में अध्यापन का अवसर मिल गया था। तब मैं था ही क्या? नया-नया शिक्षक हुआ था, लेकिन उन चार महीनों में बहुत सारे शिष्य मिल गए। उन्होंने मुझे बहुत मान दिया। कौशल किशोर और वंशबहादुर आगे चलकर उच्च पदस्थ हुए किंतु वे मुझे सदा गुरु मानते हैं और सम्मान देते रहे हैं। आज के यशस्वी कवि विजेंद्र भी मेरी कक्षा में थे और वे आज तक मुझे गुरु के रूप में देखते रहे हैं तथा याद करते रहते हैं। कथाकार काशीनाथ भी उस कक्षा में थे और उनका भी सम्मान-भाव मुझे मिलता रहा।

कमच्छा से छूटा तो शोध-छात्र के रूप में बी.एच.यू. में बी.ए. की कक्षाएँ लेने लगा। मैंने अपने को कभी प्रभावशाली शिक्षक नहीं माना, न तब न इलाहाबाद में। लेकिन कुछ प्रतिभाशाली छात्र मेरे निकट आते गए। पहले ही वर्ष में शुकदेव सिंह तथा राजेंद्रकृष्ण जैसे मेधावी छात्र मिल गए, जिनके लिए मैं सदा अति सम्मानित गुरु बना रहा। वे सदा मेरे निकट बने रहे। अब दोनों नहीं हैं किंतु लगता है कि आकाश में बैठे-बैठे वे पूछ रहे हैं, 'कैसे हैं गुरुजी?'

आर-३८, वाणी विहार
उत्तम नगर, नई दिल्ली-११००५९
दूरभाष : ९२११३८७२१०

कहानी

# एडवांस बुकिंग

● रेणुका अस्थाना

सुपरिचित लेखिका। अब तक 'कालिंजर' (कहानी-संग्रह); दो बाल-कहानी संग्रह तथा चार समीक्षाएँ एवं तीस संकलन के साथ-साथ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में ढेरों रचनाएँ प्रकाशित। सेवा भारती (कोलकाता) तथा सृजक संस्थान (अलवर) द्वारा सम्मानित। संप्रति स्वतंत्र लेखन।

ट्रेन स्टेशन पर खड़ी हुई तो हमने देखा, अँधेरा हो चुका था और हल्की बारिश भी हो रही थी। स्टेशन से बाहर आकर हमने टैक्सी ली और चल पड़े अपने उस प्रभु के मंदिर की ओर, जिसपर हमें श्रद्धा थी, विश्वास था, आस्था थी और थी भीतर एक लालच भरी चाह, उनकी पहली आरती देखने की। पर रास्ता अभी भी लंबा था और मंदिर भी उतना ही दूर।

हमारी गाड़ी स्टेशन और शहर की सड़कों/गलियों को पीछे छोड़ती अब राष्ट्रीय मार्ग पर आ गई थी। जहाँ बस, ट्रक और कारों की लाइट्स के चमकते उजाले में रिमझिम बरसता पानी, रात के सन्नाटे को, अजनबी शहर में हमारे डर को तो कम कर ही रहा था, साथ ही गरमी के मौसम में सुख भी पहुँचा रहा था।

एक ढाबे पर खाना खाने के बाद बड़े तो सो गए, पर कभी सड़क की लंबाई नापते और कभी ट्रकों की गिनती करते बच्चे मोबाइल पर गेम खेलते जाग रहे थे, न वे लड़ रहे थे न उनके बीच कोई बात थी। और मैं पीछे पीठ टिकाए अपनी बंद आँखों से अपने उस देव की मूर्ति और उनकी पहली आरती की लौ को, सामने से देखने की खुशी में, तरह-तरह की कल्पनाओं में खोई थी। साथ ही सोचती जा रही थी, कितने सद्विचारों से सद्धर्मों से मेरे देव ने यह ऊँचाई पाई है! मेरी कितनी सारी प्रार्थनाओं को सुनकर उन्होंने उन्हें पूरा किया है।

यों दिल्ली में भी मैं अपने देव के मंदिर जाती रहती हूँ, जो मेरे घर से लगभग पाँच सौ कदम की दूरी पर है, पर इस मंदिर की बात ही अलग है। हर रोज लाखों-करोड़ों का चढ़ावा यों ही नहीं चढ़ता! कुछ तो खास है इस मंदिर में। कितने महान् हैं मेरे देव! श्रद्धा से मेरा मन भर गया।

हम तीन बजे भोर तक मंदिर पहुँच गए। मंदिर से कुछ दूर पर माला-फूल की दो-तीन दुकानें थीं। वहाँ से माला-फूल लेकर उसके बताए रास्ते पर हम आगे बढ़े। थोड़ी दूर पर ही मंदिर था, पर न कहीं कोई आदमी न पक्षी। कुत्ते भी इधर-उधर सोए पड़े थे।

इतना सन्नाटा देखकर मैं सोचने लगी कि शायद हम दूर से आए हैं, इसलिए बहुत पहले पहुँच गए। यहाँ के लोग तो समय पर ही आ पाएँगे। और पक्षी? ये तो बदल ही नहीं सकते, चाहे समय कितना भी आगे निकल जाए। समय पर सोना, समय पर जागना, समय पर अपने घर वापस लौट आना ये नहीं छोड़ सकते। ये भी अजीब हैं। कुछ भी मनुष्य से नहीं सीखते? थोड़ा सोचते, थोड़ा आपस में बात करते हम मंदिर के एक कमरे में पहुँच गए। पर यह क्या? यहाँ पर तो कम-से-कम पचास-साठ लोग पहले से ही बैठे हैं। वह भी नहाए-धुले, साफ-सुथरे से। हमने अपने परिवार को देखा—आरती देखने की धुन में ट्रेन से उतर सीधे मंदिर हो लिये।

घड़ी देखी, साढ़े तीन बज चुके थे। लाइन में लगकर कुछ समय बाद मैंने बगल की एक महिला से पूछा, ''आप लोग यहीं से आए हैं?''

''हाँ, हम यहीं से आए हैं।''

''इतनी सुबह?''

''बाद में भीड़ बहुत बढ़ जाती है। बहुत मुश्किल होती है।''

''ओह!'' कहकर मैं चुप हो गई।

समय बीत रहा था। दो लाइन में लगी भीड़ धीरे-धीरे आगे बढ़ रही थी। और पीछे उससे भी ज्यादा लोगों की भीड़ की लाइन बनती जा रही थी। मैं सबके यंत्र-से भावहीन चेहरे देख रही थी, जो अपने-अपने माला-फूल-प्रसाद को हाथ में थामे कुछ-कुछ जाप सा करते धीरे-धीरे आगे बढ़ते जा रहे थे। केवल बच्चे ही थे, जिन्होंने वहाँ पर भी अपने खेलने की जगह निकाल ली थी। तभी सामने दीवार पर लगे टी.वी. स्क्रीन पर एक चमक के साथ पहले लाइन-लाइन सी उभरी फिर हमारे देव की मूर्ति और कई सारे पंडित दिखे, जो घड़े-घड़े पानी से उन्हें नहला रहे थे। सबने हाथ जोड़ लिये। हमने भी सबके जैसे हाथ जोड़े।

पर कुछ लोगों की तरह न हम श्लोक बोल पा रहे थे, न कुछ लोगों के जयकारे के साथ सुर मिला पा रहे थे। हमारी आँखें सिर्फ टी. वी. के परदे पर टिकी थीं, जहाँ हमारे देव को घड़ों पानी से नहलाने के बाद मुलायम कपड़े से सुखाकर चंदन का लेप किया जा रहा था। कीमती वस्त्र पहनाए जा रहे थे और आभूषणों से उन्हें सज्जित किया जा रहा था।

मुझे अपने देव के जीवन की वह कथा याद हो आई, जिसमें वह नंगे पैरों दूर-दूर तक चलते जाते थे। कभी कोई गाँव आया तो रह लिये नहीं तो पेड़ की छाया में ही सो गए। किसी ने कुछ दिया तो खा लिया, नहीं दिया तो कोई शिकायत नहीं। कभी महीनों जिस गाँव में स्नेह-भक्ति से रखे जाते अचानक वहाँ के विद्रोह ने निकाल दिया तो भी कोई दुःख नहीं।

इतना संतोष! इतना धैर्य था उनमें। ईश्वर के बनाए पृथ्वी, आकाश और प्रकृति के बीच ही वे सुख से जी लेते थे। न कभी ईश्वर को गलत कहा, न पत्थर मारनेवाले को। न गाली बकनेवालों को न स्नेह से साथ चलनेवालों को।

कितना झेला था मेरे देव ने, पर आज किस्मत देखो? उनकी मूर्ति को इतने-इतने पानी से नहलाकर चंदन का लेप किया जा रहा है। सोने-चाँदी से शृंगार किया जा रहा है। समय कैसे बदलता है? तभी कमरे में

माइक की आवाज गूँजी, सामने से आरती देखने के लिए लोग अपनी-अपनी टिकट बुक करा लें। टिकट बुक कराने का चार्ज इतना-इतना है।

पूरे रास्ते की खुशी/उत्साह/सपना सब ढह गया। शरीर और मन अपने आगे-पीछे की भीड़ देखकर उत्साहित था, वह अचानक इतना थका हुआ लगने लगा, जैसे मीलों पैदल चलकर आए हों। मैं जहाँ खड़ी थी वहीं बैठ गई। कुछ देर बाद मैंने अपने आगे खड़ी महिला से पूछा, ''हम सामने से आरती नहीं देख पाएँगे?

वह हँसी थी, ''नहीं, इसके लिए एडवांस बुकिंग करानी होती है।''

''और वहाँ भगवान् के पास जो लोग खड़े हैं?'' मैंने टी.वी. के परदे पर हाथ जोड़े कई लोगों को देखकर पूछा।

''इनमें कुछ तो वी.आई.पी. होते हैं और सारे आरती की एडवांस बुकिंग करा कर आए लोग हैं।''

मेरे भीतर कुछ टूट सा रहा था। सोचा था, सुबह की आरती देखूँगी! अपनी हथेली से दीये की लौ छूकर माथे से लगाऊँगी। पर यहाँ तो सब गलत हो गया। यह क्या है देव? मंदिर में भी एडवांस बुकिंग? वह भी आरती की? जिसपर राजा से लेकर भिखारी तक सबका अधिकार है।

पर सच तो यह है कि जिस देश में स्कूल, अस्पताल, न्यायालय हर जगह अमीर-गरीब के आधार पर नियम बनते-बिगड़ते हैं। जहाँ मनुष्य, चरित्र और ईमान पल-पल बिकते हैं, वहाँ यदि मेरे देव की आरती बिक रही है तो कौन सी गलत बात?

सारा उत्साह ठंडा पड़ गया। हम ठंडे से लाइन के साथ आगे बढ़ते रहे, चलते रहे। कभी बैठकर तो कभी लाइन को व्यवस्थित करनेवाली रेलिंग के साथ टिककर तो कभी बात करके अपने आपको उलझाते। मेरे सामने के टी.वी. के परदे पर आरती शुरू होकर समाप्त हो गई।

वह भोर की आरती, जिसे देखने हम कई सौ किलोमीटर की दूरी तय करके आए थे। जिसके लिए मन में कितना भाव था। कितना चाव भरा था, सब समाप्त हो गया। अब हम उस सीमा पर खड़े थे, जहाँ पीछे हजारों की संख्या में भीड़ थी और सामने बारह-चौदह फीट की दूरी पर हमारे देव का सिंहासन। जिस पर बैठा मेरा ईश्वर मुसकरा रहा था।

मैंने सिर झुकाकर उन्हें पूजा तो, पर भीतर गुस्सा भी भरा था। इसलिए मैंने तो प्रश्न करना शुरू कर दिया—क्या भगवान् इतने भीतर हो गए कि आप तक पहुँचना ही मुश्किल हो गया।

इतनी दूर से तुम्हारी आरती देखने आई थी? उसकी लौ को छूकर अपनी आँखों पर लगाना चाहती थी, अपने माथे पर लगाना चाहती थी, पर सब गलत हुआ।

बहुत गुस्सा आ रहा है तुम पर।

यही तुम्हारी शक्ति है?

मेरी सारी आस्था, सारा विश्वास तुमने तोड़ दिया। इन पुजारियों को इतनी शक्ति दे दी कि ये हमें शांति से बैठकर तुम्हें देखने भी नहीं दे सकते? चुपचाप एक कोने में खड़े होकर प्रार्थना भी नहीं करने दे सकते? मैं प्रश्न पर प्रश्न करती अपने देव पर गुस्सा उतार रही थी और वह पत्थर बना बैठा मुसकरा रहा था। हँस लो, खूब हँस लो।

मैं समझ गई हूँ, तुम सिर्फ उन पैसेवालों के हो, जो तुम्हें करोड़पति-अरबपति बनाते हैं। जो तुम्हें विश्व में प्रसिद्धि दिलाते हैं। तुम्हारे मंदिर को पहला-दूसरा स्थान दिलाते हैं···तुम सिर्फ उन्हीं के हो···

क्रोध और दुःख से मेरी आँखें भरी थीं। मैंने देखा, देव की प्रतिमा की हँसी गायब हो गई। शांत बड़ी आँखें दुःख और विवशता से भीग गईं। ये क्या देव?

ना···ना···मैं आपको दुःख देना नहीं चाहती। मैं नहीं चाहती आपको मेरे कारण कष्ट हो। गलती हो गई। पर जिस आरती के लिए इतनी दूर से आई और वही नहीं देख पाई तो गुस्सा आ गया। एक बात पूछूँ?

मेरे देव के होंठ हिले

'बेटी मेरा दुःख कोई समझता है?'

'क्या समझता है मेरा बंधन, मेरी बैचैनी?'

'नहीं समझता।'

'प्रत्येक को अपना हक, अपना अधिकार चाहिए। सुख चाहिए, संपत्ति चाहिए, यश चाहिए, वैभव चाहिए।'

'उतना नहीं जितना उनका कर्म है या भाग्य बल्कि उतना, जितना उनका अधिकार है ही नहीं। इसलिए इन्हीं जैसे लोगों ने मुझे धन और धातु से इस तरह से बाँध रखा है कि मेरी आत्मा अपाहिज हो गई है।'

'मैं घुट रहा हूँ इस पूजा में?'

'भूखा हूँ इस छप्पन भोग के बीच? और नंगा हूँ इन रेशमी वस्त्रों के बाद भी।'

'फिर गढ़ा तो तुम सबने हमें पत्थर से ही है और पत्थर ही बनाकर रख दिया।'

'क्या तुम मुझे बचा सकती हो?'

'मैं?'

'मैं क्या कर सकती हूँ?' मैं घबरा गई। पर भीतर से मेरे विश्वास ने कहा, 'मैं कर सकती हूँ देव। मैं करूँगी। आप कहिए।' मेरी आँखें अपने आप ढक गईं।

'पहले मनुष्य बनकर मनुष्यता बचा लो।'

'मैं अपने आप स्वतंत्र हो जाऊँगा, क्योंकि तब यह धन मुझे नहीं, उसे मिलेगा, जिसे आवश्यकता है। और ये भोजन उसे मिलेगा, जो भूखा है।'

फिर ये जगह सबके लिए समान होगी।

कर सकोगी? बोलो-बोलो?

मैं? मैं···क्या कर सकती हूँ? यहाँ तो जो अच्छा करे, वही अपराधी और जो सही चले, वही गलत है।

मैं कुछ सोच पाती, कह पाती, तभी हाथों में लाठी थामे खड़े पुजारी के गण लाल-लाल आखों से चिल्लाए—'आगे बढ़ो···आगे बढ़ो···

यह तुम्हारे खड़े होने की जगह नहीं है?

आगे चलो···चलो···चलो'

मैंने लड़खड़ाकर कुछ फीट की दूरी पर विराजे अपने देव को देखा, जो सचमुच पत्थर सा अपनी जगह विराजमान था।

साअ

एल-२०७, आशियाना आँगन
पोस्ट—भिवाड़ी
जिला—अलवर-३०१०१९ (राज.)
दूरभाष : ०९९८२४४८१२६

# नन्ही फुदकती चहचहाती लौट आ 'चिरी'

• सुदेश गोगिया

हम लोग पंजाब से आए, सब बच्चे 'चिरी' नाम से संबोधित करते थे। जम्मू-कश्मीर का दोस्त चेतन इसे 'चेर' कहता था। इस तरह से मुसलिम भाई जावेद इसे 'चिरैया', सिंधी—'झिरकी', बंगाली—'चराई पाखी', उड़ीसा—'छराछतिया', गुजराती—'चकली', तेलुगु—'पिछुका', कन्नड़—'गुवाच्ची' और हमारे साइंटिस्ट इसे 'पेसर डोमिस्टिकस'। विभिन्न नामों से क्या होता है? 'आम' तो आम होता है। रसीला-मीठा, वीर्यवर्धक, पौष्टिक, किसी भी नाम से पुकारिए। मेरे घर-लॉन, आँगन में फुर्र-फुर्र आई मेरी प्यारी 'गौरैया झुंड में रहनेवाली, चहचहाकर अपनी मौजूदगी का सशक्त हस्ताक्षर देनेवाली, दुनिया के हर हिस्से में पाई जानेवाली, आज विलुप्त होने के कगार पर है।

## इसकी दयनीय स्थिति व विलुप्ति के कारण

• पेट्रोल के दहन से निकलने वाला मिथाइल निब्रेट।

• मोबाइल फोन के टावरों से निकलनेवाली सूक्ष्म तरंगें इस बेचारी के अंडों को नष्ट कर रही हैं

• शान-शौकत, ऐश्वर्य से बन रहे हमारे मल्टी स्टोरेज, आकाश को छूती ऊँची-ऊँची इमारतें।

• नई स्टिल्ट पार्किंग के लिए शहरीकरण में घरों में लॉन के लिए कोई स्थान नहीं है। मेरा सिंगल स्टोरी घर, जिसमें पेड़-पौधों के साथ-साथ लॉन में गौरैया एवं उनके नन्हे-नन्हे बच्चों के छोटे-छोटे घोंसले तसदीक देते हैं।

• झरोखे समाप्त, जहाँ आपकी गौरैया अपनी ठौर बनाती थी।

• खाद्य पदार्थों में मिलावट, फसलों में रसायनों के अंधाधुंध प्रयोग ने गौरैयों के जीवन को संकट में डाल दिया।

जबकि मेरे लॉन में चिड़िया, कबूतर, तोते, गिलहरी तथा अन्य रंग-बिरंगे पक्षियों का आना-जाना लगा रहता है। ये विशेष रूप से चूँ-चूँ करतीं, अभिवादन करतीं कृतज्ञ भाव से मेरा स्वागत करती हैं। इन पक्षियों के आशियानों को छीनने का हमें हक नहीं है।

सुपरिचित लेखक। पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। लगभग आठ पुस्तकें प्रकाशित। संप्रति, योग अध्यापक।

## प्रजातियाँ

मात्र २५-४० ग्राम की नन्ही सी सदा फुदकती-चहकती, जहाँ स्पष्टत: अपने सामाजिक पक्षी की पताका लिये हुए सफदरजंग एन्क्लेव में झुंड में मस्ती से चक्कर लगाती है। वैज्ञानिक ऐसी कुल २५ घरेलू गौरैया की प्रजातियाँ मानते हैं, जिनका जीवनकाल मात्र ४-५ वर्ष का होता है।

## जाने कहाँ चले गए वो दिन?

मेरे पोते-पोतियों के संग नई पीढ़ी के बच्चों ने तो गौरैया को इंटरनेट पर ही देखा है। क्या हमारे संपन्न-समृद्धिवान जीवन से इनका हमारे बीच से चले जाना, पर्यावरण को लेकर अत्यंत गंभीर विषय नहीं है? क्या इसे विलुप्त-प्राय प्रजाति में सम्मिलित कर लेना अमानवीय कृत्य नहीं है?

## चुनौती के रूप में स्वीकार किया

एक चिड़िया के साथ अनेक चिड़ियों को दाना चुगने के बहाने मेरे लॉन में आना, जहाँ पेड़-पौधे असंख्य हैं; मेरे लिए सौभाग्य की बात है। जहाँ दो आम के पेड़ हैं। यहाँ बने घोंसलों में उनका प्रजनन जारी है। खाली प्लास्टिक के डिब्बों का उपयोग कर हम सभी घर-परिवार के सदस्य 'घोंसलों' का स्वरूप देते हैं और उन्हें सुरक्षित जगह मुहैया कराते हैं। मैं सिविल इंजीनियर स्ट्रक्चर ऐंड सीमेंट कंक्रीट कई दशकों से पढ़ाता रहा हूँ; लेकिन कंक्रीट का जंगल बनाने का मुझे कोई हक नहीं है। इन डिब्बों में घास-फूस लगाकर इन्हें घोंसले जैसा बनाता हूँ। रोज दाना-पानी डालना, हमारा नित्य धर्म-कर्म है। मुझे देखकर अन्य लोग भी खाली डिब्बों का उपयोग पक्षियों के आशियानों के रूप में करने लगे हैं।

## मानव की उच्च आकांक्षाओं का मंजर

पूरी धरा पर अपना अधिकार जताकर मानव स्वार्थी बन गया है। इन चिड़ियों ने अपना वतन ही छोड़ दिया। कुछ पक्षियों की नस्लें भी खत्म हो गईं। सुबह-सुबह ब्रह्ममुहूर्त के बाद, सूर्य की लालिमा के पूर्व इनकी चहचहाहट सुनाई देती थी, जो सोनेवालों को आलस्य त्यागकर कर्म करने की प्रेरणा देती है। उनकी मधुर चहचहाहट को सुनकर मन में स्फूर्ति और उत्साह भर जाता है; फिर संध्या के क्षणों में इनकी चहचहाहट मानव को यही प्रेरणा देती है कि अपने घर लौटकर परिवार के सदस्यों की आत्मीयता अनुभव कीजिए। रात्रि में विश्राम कर फिर नई सुबह का इस्तिकबाल करें।

## प्रकृति का अंधाधुंध दोहन

प्रकृति का अंधाधुंध दोहन, धुआँ, विषैला वातावरण हमारी इन प्यारी चिड़ियों एवं इनके बच्चों को रास नहीं आया और ये भाग खड़ी हुईं। सूक्ष्म रेडिएशन ने तो इनकी प्रजनन की क्षमता को ही घटा दिया, यह गंभीर समस्या हमारे सामने घटित हो रही है, जो हम सब देख रहे हैं। यह समस्या हमने रची है। इसका समाधान हमें ही खोजना होगा। आज यह नन्ही फुदकती चिड़िया हमारे शहरों से चली गई है। कल और परसों किसकी बारी है? और अब वैज्ञानिक भी कहने लगे हैं कि फिर इसी शृंखला में एक बारी हमारी भी आएगी।

स्टीफन हॉकिंग ने 'ए ब्रीफ हिस्टरी ऑफ टाइम में लिखा है—धरती को बचाने की उनकी चिंता सदा सुर्खियों में रही। जलवायु परिवर्तन को वे गंभीर खतरा मानते थे। उन्होंने बार-बार चेताया था कि अगर मानव ने अपनी आदतें नहीं सुधारीं तो पर्यावरण का अंधाधुंध दोहन एवं पक्षियों का लोप होना इत्यादि पृथ्वी को लील जाएगा। यह प्रवृत्ति परमाणु या जैविक युद्ध के जरिए हम सबका विनाश कर सकती है। आगे चेतावनी देते हुए कह गए, 'एक दिन मानव जाति ही विलुप्त हो जाएगी। मनुष्य को पृथ्वी छोड़कर किसी नए ग्रह पर बसने की तैयारी करनी चाहिए।'

मुझे पूरा विश्वास है कि इस तरह या इससे बड़े और भी साधन अपनाकर हम शहरवासी अनुकूल वातावरण बनाएँ, कोई वजह नहीं कि हमारी फुदकती-चहचहाती 'चिरी' लौटकर न आए। हाँ, जहाँ-जहाँ आपके पास जगह है, मुँड़ेर अवश्य बनाएँ। गौरैया को पर्याप्त भोजन-पानी मिले, घोंसलों की यथासंभव व्यवस्था हो। हाँ, दिल्ली जैसे शहर में यदा-कदा कबूतरों को दाना खिलाने की होड़-सी लगी है। आप देख सकते हैं कि नतीजतन राजधानी में कबूतर बढ़ते जा रहे हैं। क्यों न हम कबूतरों की तरह गौरैया एवं अन्य पक्षियों को भी शुभ आमंत्रण दें तथा अपनी धार्मिकता का परिचय दें!

पौधारोपण एवं पेड़ लगाने के कृत्य में अपने साथ बच्चों को भी शामिल करें; सही मायनों में यही शुद्धतम धार्मिक कृत्य है।

साअ

बी-४/१६३, सफदरजंग एन्क्लेव
नई दिल्ली-११००२९
दूरभाष : ९८१०५५६७६५

## पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक **साहित्य अमृत** के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. 1110734393 IFSC–CBIN 0280297 में **साहित्य अमृत** के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- पत्रिका न मिलने पर १५ तारीख तक सूचित कर दें, ताकि वह अंक नए अंक के साथ भेजा जा सके।
- आपको अगर **साहित्य अमृत** का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया फोन नं. ०११-२३२५७५५५, २३२७६३१६ अथवा sahityaamritindia@gmail.com पर इ-मेल करें।

# इसे कॉर्पोरेट कल्चर भी कहते हैं

• दिनेश बैस

एक श्रवण कुमार घर से अंतर्धान हो गए। बापू के पास संदेश भिजवाया। फिरौती पहुँचाओ नहीं तो··· । सीधे-सीधे शब्दों में कहें तो वे पिताश्री से अपने अपहरण की फिरौती माँग कर रहे थे।

एक प्रकार से यह इन हाउस जैसा मामला थी। हम-तुम और कोई नहीं। हम अपहृत होंगे। हम ही फिरौती वसूल करेंगे, तुम्हीं को दर्द देंगे, तुम्हीं से दवा लेंगे—कायदे से पिताश्री को इस मामले में शोक-संतृप्त नहीं होना चाहिए। बाप नाम की प्रजाति की आत्मा को शांति मिलनी चाहिए। खुश होना चाहिए कि उनका पुत्र स्किल डेवलपमेंट कार्यक्रम में लगा है—आज खुद को अपहृत बताकर अपने ही बाप से फिरौती माँग रहा है। कल भगवान् ने कृपा की तो दूसरों के बेटों को उड़ाएगा। दूसरों के बापों से फिरौती डिमांड करेगा—मेरा नाम करेगा रौशन, जग में मेरा राज दुलारा।

अपने महान् देश की तो परंपरा भी यह रही कि दान घर से ही आरंभ होता है—चैरिटी बिगेन फ्रॉम होम। घर-वार्त्ता से कुछ बच गया तो खुरचन जरूरतमंदों के हाथ में भी पहुँच जाती है।

बात संस्कार वाली भी है। अपहरण कला में पारंगत होना भी सुसंस्कृत होना है। संस्कारवान होना है। संस्कारवान पिता बच्चों में संस्कार विकसित होते देखते हैं तो छाती छप्पन इंच की हो जाती है। मेरे एक सेठ मित्र थे। घटतौली के क्षेत्र में उनकी प्रतिष्ठा थी। तनिक देर के लिए उनके चिरंजीव दुकान पर बैठते थे। इतने में ही गल्ले में नोटबंदी की तरह रकम का अकाल पड़ जाता था। मित्र अहिंसावादी थे। इसलिए क्रोध नहीं करते थे! दुखी होकर मन बहला लेते थे। लेकिन बाद में दोस्तों के साथ सबेरे, चींटी चुगाओ अनुष्ठान में, पारिवारिक आत्मतुष्टि से लबलबा रहे होते थे—'भैया हमाये तौ संस्कारई ऐसे हैमें। बाँकेबिहारी की मेहर हैगी के छोरा मैऊँ बैसेई संस्कार भर रये हैंगे। आज हमारौ गल्लौ साफ कर रयौ हैगो। कल्ल कनैयाजी की किरपा भई तो ग्राहकन की जेब खाली करैगौ। बोलो राधे-राधे।'

अब ट्रेंड यही है। हिट हो रहा है यह फॉर्मूला। अपने संसाधनों को विकसित करने का। उन पर भरोसा करने का। कौन किसका अपहरण करने जाए। उसमें खतरा है। आखिर पुलिस नाम का एक विभाग भी तो अपने यहाँ पाया जाता है। अति-अति विशिष्टों के अंगों की रक्षा करने से फुरसत मिलती है तो अपराध-जगत् में हस्तक्षेप करना आरंभ कर देता है। यह असुविधाजनक होता है। काम में बाधा पहुँचाती है पुलिस। अच्छा है, खुद ही अपहृत हो लो। पिता नाम के प्राणी से फिरौती मिल गई तो मौजाई मौजा। नहीं मिली, जितना हाथ की सफाई करके अपहृत हुए थे, वह उड़ा लिया, खुद घर वापसी करनी पड़ी तो बाप क्या कर लेगा। सिवाय पुलिस से बेटे के अपहरण की रपट वापस लेने की प्रार्थना करने के अलावा। जैसे पहले अपहरण की रपट लिखाने के एवज में कुछ गालियाँ खाई थीं। कुछ पूजा-अर्चन सामग्री भेंट की थी, वैसे ही अब रपट वापस लेने के अपराध में चंद तीखे बोल साथ में मिठाई खाने के साधन अर्पित करेगा। आखिर बाप नाम का प्राणी होता किसलिए है। अब श्रवण कुमार के समय के बाप थोड़े ही रहे हैं कि कंधों पर लादे-लादे घूमें। यह काम अब कुलदीपक ही कर लेते हैं। व्यवस्था ने बेरोजगार रहने का प्रबंध कर दिया है। इसलिए बाप की पेंशन पर पूरा हक उनका होता है। उस पर लदे रहने लगे हैं। वे अब उत्तराधिकारी की भूमिका से आगे निकलकर पूर्वाधिकारी की प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुके हैं।

इसे कॉर्पोरेट कल्चर भी कहा जा सकता है—बहुत सारे काम खुद करो। बाजार पर अपनी पकड़ बनाओ, आजकल इस संस्कृति का बहुत जोर है। मेरे क्षेत्र की सब्जी मंडी में पौत्र से लेकर दादाजी तक ठेले लगाए बैठे रहते हैं। समय की नजाकत देखते हुए चाची, भौजी, गुड़िया, बिन्नू इत्यादि भी वहीं ठीया लगाए बरामद हो जाती हैं। आप कहीं से भी सब्जी लेंगे, दिए गए पैसे का प्रवाह एक ही परिवार की ओर होगा। सब्जीवाले परिवार से लेकर टाटा-अंबानी तक कॉर्पोरेट कल्चर का शव ढो रहे हैं। जैसे दुनिया अब हमसे सब सीख रही है, वैसे ही अब हमसे यह गुण सीख रही है। सौंदर्य तारिकाओं वाला साबुन लें या तंदुरुस्ती की रक्षा करनेवाला, बाल उगानेवाला तेल लें या बाल उड़ानेवाला लोशन, पैसा एक ही विदेशी कंपनी के खाते में पहुँचेगा। लोग सिंगल देशभक्त होते हैं। बहूद्देशीय कंपनियाँ अधिकांश देशों की भक्ति कर रही होती हैं। उनके उत्पाद पाकिस्तान में भी बिक रहे हैं, भारत में भी। वे दोनों देशों के रक्षा कोष को समृद्धि प्रदान कर रहे हैं—लड़ो ससुर तुम। अपना तो धंधा चलना चाहिए। हम तो अपना माल बेच रहे हैं। वक्त की गोली से लेकर बुखार की गोली तक बना रहे हैं। समरसता ही है कि दोनों देशों के लोग उनकी गोली का सेवन करके ही मर रहे हैं। उनके बनाए हथियारों से ही मर रहे हैं।

अब कॉर्पोरेटिंग कल्चर का स्वदेशीकरण भी हो गया है। मस्तिष्क को शांत करने से लेकर उत्तेजना पैदा करनेवाले उत्पाद तक बाबा की दिव्य दुकानों पर बिक रहे हैं। कुछ भी खरीद लीजिए। मन मारकर कुंठित

रहनेवाले उत्पाद या खा लगाकर धूम मचा देने का दावा करनेवाले पैसा खींचू उत्पाद।

अपने स्वअपहरण की दिशा में कुछ मौलिक प्रयोग भी हुए हैं—व्यवसाय चतुर व्यवसाइयों ने सहृदयता के साथ कर्ज स्वीकारे। वापस करने में निर्ममता के साथ 'आपको हुई असुविधा के लिए खेद है' वाली तख्ती गले में धारण करके बैठ गए। कर्ज देनेवालों को भैंसें पानी में जाती महसूस हुईं तो वे भी हर बाधा को दूर करने में जुट गए। कर्ज ग्रहण करनेवाले व्यवसाइयों का विजय माल्याकरण हो गया। नीरव मोदीकरण हो गया, अपहरण हो गया, पुलिस की तत्परता भी कभी-कभी धोखेबाजी कर देती है। पुलिस ने सूँघ-साँघकर खोज कर ली कि भाई मुंबई पर्यटन उद्योग को प्रोत्साहित कर रहे थे। पुलिस भी बेचारी क्या करती। परिवार की ओर से कुछ ऐसा संगीत ही नहीं छेड़ा गया कि कहाँ गया उसे ढूढ़ो। संदेह में पुलिस स्वयं ही ढूँढ़ने में पिल पड़ी।

**अपने स्वअपहरण की दिशा में कुछ मौलिक प्रयोग भी हुए हैं—व्यवसाय चतुर व्यवसाइयों ने सहृदयता के साथ कर्ज स्वीकारे। वापस करने में निर्ममता के साथ 'आपको हुई असुविधा के लिए खेद है' वाली तख्ती गले में धारण करके बैठ गए। कर्ज देनेवालों को भैंसें पानी में जाती महसूस हुईं तो वे भी हर बाधा को दूर करने में जुट गए। कर्ज ग्रहण करनेवाले व्यवसाइयों का विजय माल्याकरण हो गया। नीरव मोदीकरण हो गया, अपहरण हो गया, पुलिस की तत्परता भी कभी-कभी धोखेबाजी कर देती है। पुलिस ने सूँघ-साँघकर खोज कर ली कि भाई मुंबई पर्यटन उद्योग को प्रोत्साहित कर रहे थे। पुलिस भी बेचारी क्या करती। परिवार की ओर से कुछ ऐसा संगीत ही नहीं छेड़ा गया कि कहाँ गया उसे ढूढ़ो। संदेह में पुलिस स्वयं ही ढूँढ़ने में पिल पड़ी।**

बहुधंधी होना समारे समाज का गुण है। दशकों पहले मिड-मुरैना के गाँवों में जाने का अवसर मिला था। तब डाकू दिल्ली-लखनऊ में नहीं, वहीं पाए जाते थे—हालाँकि वे तथा वहाँ के लोग उन्हें डाकू नहीं बागी कहते थे—दोपहर के भोजन के बाद मेजबान विनम्र हो उठे और क्या सेवा करें आपकी, हमने अवसर का लाभ उठाया—डाकू-दर्शन, क्षमा करें, बागी दर्शन करा दीजिए, जीवन धन्य हो जाएगा। मित्र ने तनिक धैर्य रखने की सलाह दी। बोले, दो बागी विभूति अपने ही घर में हैं। एक ऑपरेशन पर गए हैं। कल सबेरे तक पकड़ के साथ उनकी आमद होगी। एक की जमानत हो गई है। शाम तक आ जाएँगे। दरअसल भतीजा वकील है। शाम को उसी की गाड़ी में दोनों साथ लौटेंगे। मित्र स्वयं पुलिस की सेवा में थे। गाँव छुट्टियाँ मनाने आए थे। उनके एक भ्राता सीमाओं की रक्षा में थे। एक सूबे में उप-कानून मंत्री का पद सुशोभित कर रहे थे।

देखकर छाती जुड़ा गई। कैसा आदर्श परिवार है। कहीं और जाना ही नहीं है। भगवान् का दिया सब है अपने घर में।

सा/अ

३ गुरुद्वारा, नगरा,
झाँसी-२८४००३
दूरभाष : ०८००४२७१५०३

---

कविता

# गुलदस्ता

● रामगोपाल 'राही'

मन को भाता बड़ा सुहाता,
प्यारा लगता गुलदस्ता।
सुंदर-सुंदर फूल का सुंदर,
हृदय लुभाता गुलदस्ता।
रंग-रंग के फूल निराले,
उनसे निर्मित गुलदस्ता।
खुशियाँ दे मुसकान साथ में,
खुश कर देता गुलदस्ता।
प्राकृतिक फूलों का अनुपम,
महक लुटाता गुलदस्ता।
बाग-बाग दिल हो जाता है,
देख-देखकर गुलदस्ता।

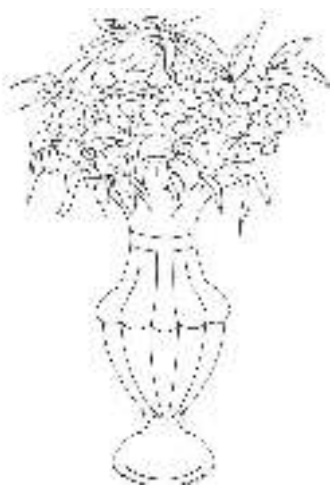



फूलों की सौगात रंगीला,
प्यारा लगता गुलदस्ता।
व्यवहांा की मूक भाषा,
अद्भुत-प्यारा गुलदस्ता।
सात रंग के फूलों का यह,
गद्गद करता गुलदस्ता।
हृदय प्रफुल्लित व उल्लसित,
कर देता है गुलदस्ता॥

सा/अ

वार्ड-४, मोहल्ला गणेशपुरा
पो. लाखेरी-३२३६१५
जिला-बूँदी (राजस्थान)
दूरभाष : ८२३९६०४४७७

# सपेरा

*मूल* : **उमा राव**

*अनुवाद* : **डी.एन. श्रीनाथ**

कन्नड़ की ख्याति प्राप्त लेखिका। अब तक तीन कहानी-संग्रह, एक उपन्यास, एक यात्रा-कथन, मुंबई डायरी, स्तंभ-लेखन आदि प्रकाशित। उमा राव तीस साल तक मुंबई में रही, वहाँ की रंगभूमि और कॉपी राइटिंग्स में भी अपने को लगाए रखा। इनको कनाडा का ब्रिटिश कोलंबिया विश्वविद्यालय की आंड्स फेलोशिप मिली। इन्होंने दूरदर्शन कार्यक्रमों के लिए भी काम किया। कर्नाटक साहित्य अकादेमी से पुरस्कृत उमा राव फिलहाल बेंगलुरु में रहकर अपने लेखन कार्य को एक नया मोड़ दे रही हैं। यहाँ उनकी चर्चित कहानी सपेरा का हिंदी रूपांतर दे रहे हैं।

बेंगलुरु के दक्षिण भाग में सभी सुविधाओं से सुसज्जित और डीलक्स कई अपार्टमेंट्स थे, जिनमें 'स्वर्ग' अपार्टमेंट्स भी एक है। उसमें सौ घर थे। स्वर्ग अपार्टमेंट्स में लोगों के जीवन को सुखमय और सुगम बनाने के लिए सभी सुख-साधनों की व्यवस्था की गई थी। सुबह की गरमी में चमकनेवाला स्विमिंग पूल था। टेबल टैनिस, बिलियर्डस आदि खेल खेलने के लिए क्लब हाउस था। रंग-बिरंगे फूल-पौधों से भरा बगीचा था, बीच-बीच में गुलमोहर के पेड़ और उनके बीच पगडंडियाँ थीं। कोक, पेप्सी, किटक्याट, रिग्लेस आदि चीजों को बेचने की एक दुकान भी थी।

चौबीसों घंटे बिजली की व्यवस्था करने के लिए जनरेटर का इंतजाम था। इन सबकी निगरानी करने के लिए सेक्यूरिटी गार्डस थे। घर के काम करने के लिए महिलाएँ आती थीं, जिन्हें कन्नड़ के साथ हिंदी, तमिल भी आती थी। उन सबको एक फोटो सहित आईडी कार्ड भी दिया गया था।

स्वर्ग अपार्टमेंट्स में देश के अलग-अलग हिस्सों से आए हुए लोग रहते थे। रेडीमेड गार्मेंट्स, प्लास्टिक्स चीजें आदि छोटे-मोटे कारखानों के मालिक, साफ्टवेर इंजीनीयर्स, जो अमरीका को अपने घर के पिछवाड़े के जैसे समझकर आते-जाते थे, विदेशों में अपने बेटों को भेजकर यहाँ पर कुत्तों को लेकर घूमनेवाले सेवा-निवृत्त अधिकारी लोग, जो आराम की जिंदगी बिता रहे थे। फ्रीलांस पत्रकार, दूरदर्शन सीरियल के निर्मापक, बहुराष्ट्रीय कंपनियों के एक्जिक्युटिव्स—इस प्रकार सभी प्रकार के निवासी थे और सब आपस में शिष्टाचार से बर्ताव कर रहे थे।

इन सौ परिवारों के बीच कभी-कभी छोटी-मोटी लड़ाइयाँ भी हो जाती थीं। किसी कामवाली ने हमारी सीढ़ियों पर पान पीक थूक दी है; हमारे घर में जिस दिन पार्टी हुई थी, उसके दूसरे दिन हमारे घर की कामवाली खाली बीयर की बोतलों को ले जा रही थी, उसमें से चार बोतलों को सेक्यूरिटी गार्ड ने रख लिया है; एक कंपनी का कार ड्राइवर लड़कियों के बारे में, जो काम करने के लिए आती-जाती थीं, हिंदी में कॉमेंट करता है, इन विषयों के बारे में अकसर लड़ाइयाँ होती रहती थीं।

हर महीने कमेटी की मीटिंग होती थी, इसमें इन लड़ाइयों के बारे में चर्चा होती थी। तब सारे सदस्य कहते थे, 'हम सब सिविलाइज्ड पीपल हैं। आम लोगों की तरह लड़ना-झगड़ना हमारी शान के लायक नहीं है। फिर ऐसा बर्ताव करते थे कि कुछ हुआ ही नहीं है और आपस में गुडमॉर्निंग, गुडनाइट कहते जाते थे।

स्वर्ग अपार्टमेंट्स में समारोह की कोई कमी नहीं थी। सप्ताह में एक या दो जन्मदिन आते थे, सभी बच्चे जाकर म्यूजिक शो देखते, कैंडल फूँकते, केक समोसा खाते और हैप्पी बर्थडे गाकर आते थे। कभी-कभी डिनर होता था, जिसमें अपार्टमेंट्स वाले शामिल होते थे, 'रोटी सागर' से जो पंजाबी खाना आता था, खाते, बीयर पीते, अंत्याक्षरी खेलते, सरदारजी के जोक्स सुनाते और अपने हाल ही के सिंगपुर-बैंकॉक, मलेशिया टूर्स के बारे में शेखी बघारते थे। उनके बीच बैनर्जी ने घोषणा की कि मैंने जो कुछ भी किया है, बार-बार करके ऊब गया हूँ, इसलिए इस बार अफ्रीका जाने का इरादा किया है। उनकी समझ में नहीं आता कि आफ्रीका, सिंगपुर और बैंकॉक से बड़ा है या कम? और इसके बारे में प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं कर पाए और बात को यह कहकर चुप हो जाते थे कि 'तुम तो···यू आर डिफरेंट।'

इस प्रकार सुचारू रूप से उस अपार्टमेंट्स का दैनिक जीवन गुजर रहा था। मगर एक रविवार को एक घटना घटी, जिसने वातावरण को

कोलाहल से भर दिया। उस दिन सभी ने भरपूर नाश्ता किया, अखबार हाथ में लिया और आराम से पढ़ने बैठे थे कि एक छोटा त्रिचक्र वाहन अपार्टमेंट्स के सामने आकर रुक गया। उसे कुछ गृहणियों ने बालकनी से देखा और सोचा कि किसी के घर फ्रास्टफ्री फ्रिज आया होगा; फिर वे सब अंदर चले गए। मगर कुछ देर के बाद उन्होंने ऊँचे स्वर में वाद-विवाद होते सुना तो कुछ महिलाएँ फिर से बालकनी में आईं। राधाकृष्णन जो उस बिल्डिंग्स रेसिडेंसी सोसाइटी के सेक्रेटरी थे, हाथ में 'डेक्कन हेराल्ड' पकड़कर ही नीचे उतर आए। वहाँ अनोखी वेश-भूषावाला एक आदमी हाथ में जो कागजात थे, सेक्यूरिटी गार्ड के आगे बढ़ाकर वाद-विवाद कर रहा था। राधाकृष्णन उसके पास गए और उसे सिर से पाँव तक देखा तो परेशान हुए। चौक तसवीरवाली लुंगी, आधा बाहु का महीन कुरता, बड़ी-बड़ी मूँछें, माथे पर भस्म, कुमकुम, गले में रंग-बिरंगी मणियाँ, रुद्राक्षी माला के साथ काले धागे से लटकता तावीज, एक टोकरी जो कंधे से लटक रही थी, बंद थी; मगर उसे देखने से ही पता चलता था कि उसमें क्या है।

राधाकृष्णन गार्ड को देखते हुए गरज पड़े, ''अरे! तुम इससे क्यों बहस करते हो? मैंने कितनी बार कहा है कि ऐसे सपेरों और खेल-तमाशा दिखानेवालों को यों ही अपार्टमेंट्स के अंदर मत आने दो।''

''नहीं सर, ये···'' गार्ड तुतलाया तो पीछे से अडमिनिस्ट्रेटिव मैनेजर शशिधर ने आकर समझाया, ''सर, ये 'ए' ब्लॉक में···किराए पर आए हैं।''

''क्या!'' तीस बरस तक स्टॉक एक्स्चेंज में काम करनेवाले राधाकृष्णन को हर्षद मेहता के नाटक भी इतने शॉक नहीं दे पाए थे।

शशिधर के हाथ में एग्रीमेंट के कागजात थे, उसे आगे बढ़ाते हुए राधाकृष्णन से कहा, ''सभी कागजात नियमानुसार हैं, सर। ओनर ने जो पत्र हमें लिखा है, साथ में लाए हैं।'' राधाकृष्णन ने शशिधर को बगल में आने के लिए कहा।

''मैंने अंदर जाकर चेक किया है, सर। चेक टैली होता है।'' शशिधर ने कहा।

''ओनर को फोन करके पूछिए।'' राधाकृष्णन ने परेशानी से कहा।

''ट्राई किया सर, वे अमरीका गए हैं, अपने बेटे को देखने के लिए।''

सभी खामोश हो गए।

यह खबर पूरे अपार्टमेंट्स में फैल गई, सभी रविवार के अपने काम-काजों को छोड़कर बालकनी में आ गए। बच्चे नीचे जमा होकर सपेरा के चारों ओर खड़े थे। मगर सपेरा विचलित नहीं हुआ और त्रिचक्र वाहन से अपना सामान उतारने में लग गया। उसने एक बिस्तर, जो चटाई से लपेटा हुआ था, कुछ बरतन, दो मिट्टी के बरतन, मिट्टी के तेल का एक स्टोव, भगवान् की तीन-चार तसवीरें, बेडशीट में लपेटे हुए कपड़ों की गठरियाँ, लाठी, एक बोरे में कई चीजें आदि सब उतारीं, बाद में उसने बड़ी सावधानी से दो पूँगियों को उतार लिया, जिन्हें उसने कंधे पर रखा था। पूँगियों को एक के अंदर एक मिलाकर रस्सी से बाँध दिया

सुप्रसिद्ध लेखक एवं अनुवादक। कन्नड़-हिंदी में परस्पर अनुवाद की साठ पुस्तकें प्रकाशित। साहित्य अकादमी का अनुवाद पुरस्कार, कर्नाटक साहित्य अनुवाद अकादमी पुरस्कार, कमला गोयनका अनुवाद पुरस्कार, गोरूर पुरस्कार, विश्वेश्वरैया साहित्य पुरस्कार आदि पुरस्कारों से पुरस्कृत।

गया था। इसे देखते ही सबके होश उड़ गए।

उस आदमी ने सब चीजों को एक-एक करके उठाया और जाकर 'ए' ब्लॉक के अपने घर में रखा, जो तीसरी मंजिल पर था। सेक्यूरिटी गार्ड सोच रहा था कि उसकी चीजों को उठाकर रखूँ या नहीं; मगर राधाकृष्णन ने उसे आँखों से ही मना कर दिया। इस दौरान नटखट डिंपी सपेरा के पास आया और उस टोकरी की ओर इशारा करते हुए पूछा, ''अंकल, इसमें साँप है?'' तब उसकी माँ ने उसे एक थप्पड़ मारा। नए आनेवाले, रजिस्टर में अपना नाम, पेशा आदि दाखिल करते हैं; उस रजिस्टर में शशिधर ने लिखा, 'शंभु, सपेरा-ए-३०'।

शशिधर हस्ताक्षर कराने के लिए रजिस्टर को राधाकृष्णन के पास लाया तो वे शशिधर पर बरस पड़े, ''क्या है ये? तुम्हें जरा भी अक्ल नहीं है? प्रोफेशन की जगह 'बिजिनेस' लिखो,' शंभु पंद्रह मिनट में ही सब सामान अंदर ले गया और दरवाजा बंद कर दिया। फिर बालकनी का दरवाजा खोल दिया। उसी पल से 'स्वर्ग' अपार्टमेंट्स में रहनेवाले लोगों की जिंदगी में एक विचित्र अशांति शुरू हो गई।

पिता और माता ने अपने-अपने बेटे-बेटियों को सावधान किया और कहा कि अगर शंभु उन्हें चॉकलेट, पीपरमेंट दे तो छूना नहीं, उसके बुलाने पर पास न जाना। ए-३२ में सीताचंद्रन रहते थे, उन्होंने सोचा कि हम तो निश्चिंतता से रहते थे, यह विघ्न कहाँ से टपक पड़ा। चीनी, कॉफी पाउडर, कर्ज लेने के लिए अब पड़ोसी न रहा।' उन्होंने आँसू बहाए।

शंभु के बारे में क्या-क्या जानना चाहिए, इसके बारे में घर के कामवालों की एक मीटिंग भी हो गई।

''ऐसे लोगों का संपर्क ही नहीं चाहिए। ये जादूटोना भी करते हैं।''

''उसकी आँखें तुमने देखीं, कैसी है?''

''काम नहीं करूँगा, यह कहने से वह नाराज हो गया तो? कुछ कर डाला तो?''

''ओह, क्या करेगा, साँप को पीछे छोड़ देगा?''

सभी ठहाका मारकर हँस पड़े।

मगर एक बूढ़ी कामवाली नंजम्मा बोली, ''ओह, मुझे कोई डर नहीं है। मेरे कंधे में गरुड़ का तिल है।'' इसे सुनकर दूसरे लोगों ने उसे ईर्ष्या से देखा।

पूरे अपार्टमेंट्स में दूध सप्लाई करने के लिए एक को मात्र अनुमति दी गई थी। जो भी नए आते, दूधवाला उनके यहाँ जाकर पूछताछ करता, इसी प्रकार वह थोड़ा डरता हुआ शंभु के घर गया और कॉलिंग बेल

दबाई। उस आदमी ने दरवाजा खोला और कहा, ''मैं पॉकेट के दूध का इस्तेमाल नहीं करता, मेरे नाग को दुहा हुआ ताजा दूध ही चाहिए।'' और उसने तुरंत दरवाजा बंद कर लिया। उस दिन से एक गोशाला से दुहा हुआ दूध एक डिब्बे में सिर्फ उसके घर आने लगा।

कमिटी ने विमला राजे के ड्राइवर को कार पार्क के एक कोने में सोने की अनुमति नहीं दी थी, इसलिए उसने व्यंग्य से कहा, ''बेचारा हमारा शरद यहाँ सोता तो क्या हो जाता? कहा गया कि बाहर का आदमी नहीं चाहिए। अब बाहरवाले दूधवाले को अंदर छोड़ रहे हैं, परवाह नहीं क्या?'' मगर उस दूधवाले को रोकने की हिम्मत किसी में नहीं थी।

इस प्रकार उस अपार्टमेंट्स को एक तरह से दुष्ट शक्ति ने मानो वश में कर लिया था; सभी का मन शंभु के और उसकी गतिविधियों पर चौबीसों घंटे घूमने लगा। उसके साथ लिफ्ट में जाने से भी लोग डरने लगे, मगर उसके बारे में कहानियाँ गढ़ने लगे।

''शाम के वक्त उसके घर के दरवाजे के पास जाने से केवड़े की गंध आती है, यह तुम्हें पता है?''

''उस आदमी ने परसों हमारे चिंचु और पुट्टू को उसके घर के अंदर बुलाया और चॉकलेट देने की बात कही, मगर दोनों घर आ गए।''

''उस दिन लक्कव्वा ने फूलों को, जिन्हें उस आदमी ने बाहर फेंका था, झाड़ू लगाकर साफ किया था, मगर लक्कव्वा बीमार होकर बिस्तर पर पड़ी है।''

''उससे कहना चाहिए कि तुम छोटी लुँगी पहनकर मत घूमा करो, यहाँ सभी गृहस्थ लोग रहते हैं।''

''मगर कहनेवाला कौन है?''

''अपार्टमेंट्स कितना सुंदर था, मगर अब इसकी हालत कैसी हो गई?''

''जानते हो, रात के बारह बजे पूँगी नाद सुनाई पड़ता है, मैंने पहले सोचा कि किसी ने नागिन का कैसेट चालू किया है, बाद में पता चला कि...''

शंभु के पड़ोसी सीताचंद्रन की बात ही कुछ और थी! बेचारा वह किंकर्तव्यविमूढ़ होकर तड़प रहा था, ''मैं तो इस घर को बेचने के इरादे से एजेंट के पास गया। अब एजेंट मुझसे पूछता है, 'उस घर को खरीदने के लिए कौन आएगा? आपके घर के बारे में सभी को पता चल गया है। चार-पाँच लाख में बेच दीजिए। कोई ऑफिस खोल देगा।' इतना अच्छा घर और इतनी कम दाम में बेचूँ? यह झंझट कहाँ से मेरे गले में पड़ गया।''

अपार्टमेंट्स में सभी परेशान थे। मगर शारदम्मा, जो शंभु के घर के नीचे रहती थी, निश्चिंत थी। वह अस्सी साल की थी। उसका पति नहीं था। बच्चे भी नहीं थे, इसलिए वह अकेली रहती थी। उस दिन सभी इकट्ठे हुए थे, शारदम्मा ने फटकारते हुए कहा, ''वह क्या करेगा, वह तो अपना काम कर रहा है, किसी को परेशान नहीं कर रहा है। अच्छा भाड़ा दे रहा है। सुबह जाता है, शाम को घर आता है। आप क्या कह रहे है, जो हाथ में मोबाइल पकड़कर कार में घूमता है, उसका काम ही काम होता है? वही इज्जतदार आदमी है? देखिए, उस दिन बागबान नहीं आया, दो दिन तक पौधों को पानी देने के लिए कोई नहीं आया, सबने परेशानी व्यक्त की कि पौधे सूख रहे हैं, मगर किसी ने कुछ किया क्या? तब शंभु नीचे आया, पाइप को बगीचे के नल में लगाकर, आधे घंटे में ही सभी पौधों को पानी से सींचकर ऐसे चला गया, मानो कुछ हुआ ही नहीं, आप क्यों पागलों की तरह बातें करते हैं।''

शारदम्मा के सामने सब चुप्पी साधे रहे, मगर उसकी पीठ पीछे कहने लगे, ''यह बूढ़ी औरत पगला गई है। बूढ़ी को इस जमानेवालों के बारे में क्या पता है? किसी को कुछ हुआ तो बूढ़ी को क्या लेना-देना है?''

उस दिन स्वर्ग अपार्टमेंट्स में छाई मुश्किलों के बारे में चर्चा करने के लिए विशेष मीटिंग बुलाई गई। शंभु खुद ही घर छोड़कर चला जाए, इसके लिए उसे तकलीफ देने के उपाय ढूँढ़े जाने लगे।

''और क्या किया जा सकता है? केबल को काट डालना ज्यादा असरदार तो होता है। मगर उसके पास टी.वी. ही नहीं है, क्या फायदा?''

''पानी?''

''जी हाँ, पानी को बंद न किया जाए तो भी...पानी की धारा को तो स्लो कर सकते हैं न? इस हालात में वह शिकायत भी नहीं कर सकेगा। अगर शिकायत की भी तो कह सकते हैं कि सभी के घर की हालत यही है, दुरुस्त करा रहे हैं, बस।''

''ब्रिलियंट आइडिया, इट शुड वर्क।''

दूसरे दिन अपार्टमेंट्सवालों ने एक अचरज की बात देखी। शंभु अपने दोनों हाथों में एक-एक प्लास्टिक का घड़ा पकड़े था और धड़-धड़ आवाज के साथ तीन मंजिल से उतर आया, गार्डन में जो नल था, उससे पानी भरकर फिर चुपचाप ऊपर चढ़ गया। इस प्रकार वह पाँच-छह बार पानी ऊपर ले गया। पानी कम आया है या कम आ रहा है, इसके बारे में उसने मुँह तक नहीं खोला।

शंभु इसी प्रकार घड़ा छलकाते हुए सीढ़ी चढ़ रहा था, तभी दूसरी मंजिल में जो घर खाली था, खरीदने के लिए शू बेचनेवाला एक व्यापारी सामने आया। इसे देखकर उस व्यापारी ने बेचनेवालों से कहा, ''इस अपार्टमेंट्स में पानी के लिए नीचे घड़ा लेकर जाना पड़ता है। मुझे तो ऐसा घर नही चाहिए।'' और वह नाराजगी व्यक्त करते हुए चला गया।

''देखिए, एक आदमी की वजह से इस प्रॉपर्टी की कीमत ही गिर रही है। हमें तो कुछ तो कुछ करना ही पड़ेगा। वकील राजण्णा को भी

इस इमर्जेंसी मीटिंग में ले आया हूँ।'' राधाकृष्णन ने कहा।

मेनन ने ऐसा मुँह बनाया कि सभी के षड्यंत्र का उसे पता है, कहा, ''देखिए, यह सब इस अपार्टमेंट्स के मालिक का ही कारबार है। ऐसे आदमी को यहाँ पर लाकर रखा है और खुद अमरीका जाकर बैठ गया है। मगर अब अपार्टमेंट्स का इमेज खराब हुआ है और कीमत गिर रही है। वह छह महीने के बाद वापस आएगा और पूरे अपार्टमेंट्स को आधे दाम में खरीदकर इस सपेरा को धक्का देकर निकाल देगा।'' मेनन की इस बात से सब परेशान हुए और सोचा कि यह बात हमें क्यों नहीं सूझी?

सभी की शिकायत सुनने के बाद वकील राजण्णा ने कह दिया, ''आप कहते हैं कि इस आदमी के पास राशन कार्ड है, सब डाक्यूमेंट्स हैं, समय पर भाड़ा भी दे रहा है, अपना काम करके शांति से रहता है। हम उसे यह कहकर भगा नहीं सकते हैं कि वह एक अनोखा आदमी है।''

''कोई वजह ढूँढ़िए।'' सभी ने आग्रह किया तो वकील ने कहा, ''अगर वह किन्हीं रहस्यमय गतिविधियों में शामिल हुआ है तो या गुंडा हो तो या आतंकवादी हो तो···ऐसी शंका हो तो?''

सभी के कान खड़े हो गए।

''यस, आई विल वर्क आन दिस।'' राधाकृष्णन ने टेबल पर मुक्का मारा, ''केस को ठीक से रेडी करेंगे और सीधा पुलिस कमिश्नर के पास जाएँगे।''

सभी के चेहरे पर चैन की छाया पसर गई।

'स्वर्ग अपार्टमेंट्स' के चार कमेटी मेंबरों ने पुलिस कमिश्नर से भेंट का समय लिया; मगर उसी दिन सबेरे एक विचित्र घटना घटी। सबेरे शंभु के घर के सामनेवालों ने अखबार और दूध को अंदर ले जाने के लिए जब दरवाजा खोला तो सपेरा के घर का खुला दरवाजा देखकर आश्चर्यचकित हुए। उन्होंने कुछ सोचा और दरवाजा बंद कर लिया। आठ बजे कामवाली आई, उस वक्त भी दरवाजा खुला ही था। पहले जब सपेरा अपने घर का दरवाजा खोलता तो सुराही, बिछाई हुई चटाई, भगवान् की एक-दो तसवीरें—सब दिखते थे, मगर अब सब चीजें गायब थीं। कामवाली को आगे करके कुछ कदम अंदर जाने पर पता चला कि घर खाली हो गया है। तुरंत इंटरकाम से सेक्यूरिटी और राधाकृष्णन को खबर दी गई। सब लोग भागे आए। कदम पर कदम रखते हुए सारे घर का चक्कर लगाया। घर शून्य लग रहा था, घर में मात्र अगरबत्ती की गंध फैली हुई थी, जो अनोखा था। कमरे के कोने में साँप की टोकरी, जो बंद करके रखी हुई थी, उसे देखकर सब डर गए। मगर उसे खोलकर देखने की हिम्मत किसी में नहीं थी। राधाकृष्णन भी टोकरी की ओर देख रहे थे। कहीं टोकरी हिल तो नहीं रही है, सभी ने उसे परखा। फिर धीरे से, खामोशी से, घर के बाहर आए, इशारा किया।

तुरंत दरवाजा बंद किया गया, घर से एक ताला लाकर लगा दिया गया। ताला खींचकर देखा गया कि चाबी लगी है कि नहीं! फिर चाबी को सेक्यूरिटी गार्ड को सौंप दिया गया।

''अभी जाइए और किसी सपेरे को ले आइएगा, यह सब काम हमसे नहीं हो सकता है।'' राधाकृष्णन की आवाज में भारीपन था।

नवनीत, द्वितीय क्रॉस, अन्नाजी राव लेआऊट
प्रथम स्टेज, विनोबा नगर
शिमोगा-५७७२०४ (कर्नाटक)
दूरभाष : ०९६११८७३३१०

# चाबी में लैबर रूम

लघुकथा

● सत्य शुचि

वह पसीने से तर-बतर जैसे-तैसे जिला अस्पताल आ चुका था। पत्नी प्रसव-पीड़ा से बड़ी तकलीफ में थी। परंतु उसी दरम्यान यह सुनकर वह एकदम दुःखी हो उठा कि लैबर रूम पर ताला लगा है।

शाम का वक्त था। इतने में एक नर्स नमूदार हुई और उसे देखते ही उसके बरअक्स उसने सुझाया, ''सिस्टर! पत्नी को लैबर रूम में ले चलिएगा!''

हवा का रुख भाँपकर नर्स ने तुरंत कहा, ''लैबर रूम की चाबी मैं घर भूल आई हूँ, क्यों न प्रसव बाहर खुले में···।''

विवशता में उसने गरदन हिलाकर सहमति दे दी और अल्पकाल में ही पत्नी का प्रसव सकुशल निपट गया।

हाल-फिलहाल वह अभी लगभग उखड़ चुका था। इसी बीच एक मर्तबा वह द्रुतगति से अस्पताल का चक्कर लगा भी आया था। और भीतर-ही-भीतर नर्स को लेकर उसकी स्वचेतना हिल उठी—''··· बेहतर होगा कि खुले में शौच अभियान की तरह खुले में प्रसव पर भी प्रशासन को सख्ती बरतनी चाहिए।'' और स्थिति का निचोड़ निकालता सा वह झल्लाया। अभी-अभी उसे अस्पताल में ही पता चला कि लैबर रूम की चाबी इसी नर्स के पास रहती है। और तो और, रात्रि में लेबर रूम ही कभी से उसकी विश्राम स्थली भी है।

और एक कोफ्त से उसके जेहन का संतुलन डगमगाता चला गया।

साकेत नगर, ब्यावर-३०५९०१
(राजस्थान)
दूरभाष : ०९४१३६८५८२०

कहानी

# बरसे मेघा फिर से

● रजनी गोसाईं

गरमी अपने चरम पर थी! सूर्य देवता अपने प्रचंड रूप में आग बरसा रहे थे। पहाड़ों की हरी-हरी पृष्ठभूमि भूरे रंग में परिवर्तित होती दिख रही थी। सूरज के आग उगलते ताप से पेड़-पौधों की पत्तियाँ झुलस गई थीं। पशु-पक्षी इस गरमी से बेहाल थे। जेठ का महीना समाप्त हो गया था। आषाढ़ कब का लग चुका था, लेकिन आसमान बिल्कुल साफ और चमकीला था। काले मेघों की चुनरी अब तक आसमान ने नहीं ओढ़ी थी। पहाड़ पर बसे घरौंदों में रहनेवाले मानव के साथ-साथ सभी पशु-पक्षियों को अब बस एक ही प्रतीक्षा थी। वर्षा ऋतु के आगमन की। लेकिन इन सब के बीच सत्तावन वर्षीय एक वृद्धा भी थी, जो बिल्कुल नहीं चाहती कि वर्षा इस धरती पर आए। नफरत थी उसे बरसात से! उस वृद्धा का नाम था चैता! उत्तराखंड की पहाड़ियों में ही बसा है चैता का गाँव! चैता यों तो सत्तावन साल की हैं, पर पिछले दो साल से वह अपनी आयु से अधिक बूढ़ी दिखने लगी हैं। पूरा चेहरा झुर्रियों की सिलवटों से भरा था। पहाड़ी तरीके से पहनी हुई सूती साड़ी, सिर हमेशा सूती दुपट्टे से बँधा रहता। शरीर पर न कोई जेवर न साज-शृंगार! मुख पर हमेशा एक उदासी छाई रहती।

चैता शुरू से ऐसी नहीं थी। बहुत ही हँसमुख स्वभाव था चेता का। उसका जन्म चैत के महीने में हुआ था, इसलिए माँ-पिता ने चैता नाम रखा था। वो सत्रह साल की थी, जब इस गाँव में ब्याह करके आई थी। भरा-पूरा परिवार था चैता का। अपने अच्छे स्वभाव के कारण जल्दी ही अपने सास-ससुर सहित ससुराल के सभी सदस्यों के हृदय में अपनी जगह बना ली थी। सजना-सँवरना तो उसे बहुत प्रिय था। पहाड़ की कच्ची-पक्की पगडंडी में सिर पर पानी का मटका लेकर चलती तो कमर तक लटकती चोटी में लगा रंगीन रेशमी धागों से बना चुटीला भी बल खाता। साथ में पैरों में पहनी पाजेब भी खनकती। गाँव के पनघट में, खेतों में चैता ने भी अन्य महिलाओं के साथ सावन के कितने पहाड़ी लोकगीत गाए हैं। गाँव का पनघट, खेत, पगडंडी, घर का चौक-चौबारा इस बात के साक्षी हैं कि चैता के जैसे पहाड़ी लोकगीत गाँव की कोई अन्य महिला नहीं गा सकती।

समय अपने पंख लगाकर उड़ान भरने लगा। चैता चार लड़कों की माँ बन चुकी थी। ससुराल का संयुक्त परिवार अब सिर्फ चैता का परिवार बन गया था। नंदो की शादी हो चुकी थी। सास-ससुर स्वर्गवासी हो गए थे। चैता के लड़के भी अब जवान हो गए थे। उनके विवाह के सपने चैता दिन-रात बुनने लगी थी। आनेवाली बहुओं के लिए धीरे-धीरे जेवर, कपड़े लत्ते सब सहेजने लगी थी। घर में रुपए पैसों की कमी नहीं थी। चैता का पति केदारनाथ में कपाट खुलने के बाद छह महीने वहीं पूजा सामग्री की दुकान लगाता था। केदारनाथ में भक्तों की भारी भीड़ रहती, जिससे उसकी आमदनी अच्छी होती, इसलिए इन छह महीनों के लिए उसका पति अपने गाँव से केदारनाथ चला जाता तथा छह महीने वहीं रहता। गाँव के अन्य लोग भी केदारनाथ जीविकोपार्जन के लिए जाते। अब चैता के लड़के भी जवान हो गए थे, इसलिए पिता के काम में हाथ बँटाने के लिए वे भी पिता के साथ केदारनाथ जाने लगे थे।

सबकुछ ठीक चल रहा था। न जाने वह काली मनहूस रात कहाँ से विनाश लीला खेलने जलसैलाब के रूप में केदारनाथ में टूट पड़ी! दो साल पहले वह जेठ का ही महीना था, पर वर्षा ऋतु अपने चरम पर पहुँच गई थी। चार दिनों से लगातार पानी बरस रहा था। पहाड़ों में बहनेवाले नदी, नाले, झरने अपने उफान पर थे। चैता का पति अपने तीन लड़कों के साथ तब केदारनाथ में ही था, जब लगातार वर्षा के कारण पहाड़ के ऊपर बनी झील पहाड़ी तोड़कर जल सैलाब का रौद्र रूप लेकर ढलान की तरफ तीव्रगति से बह चली थी। हजारों तीर्थयात्रियों के साथ चैता का पति तथा उसके तीनों लड़के भी काल के ग्रास में समा गए थे। परिवार के नाम पर अब चैता और उसका छोटा लड़का ही बचे थे। उसी दिन से चैता को बरसात से सख्त नफरत थी। बादलों की गड़गड़ाहट उसके कान के जालों को फोड़ती। रिमझिम बूँदे उसे यों लगतीं जैसे कोई उसके दिल में तेजाब की बूँदें डाल रहा हो!

१२ मई, १९७६ को जन्म। स्नातक तक शिक्षा प्राप्त। 'ये तो बच्चे हैं जी, समझें इन्हें भी' (पुस्तक); कर्मयोगी कलाम (कविता); 'हिंदी भाषा और हम' (आलेख) प्रकाशित। संप्रति स्वतंत्र लेखन।

दो साल पहले की इस घटना ने चैता की पूरी जिंदगी उजाड़ दी। वह अब जिंदा थी तो इसका यही कारण था ईश्वर ने अभी उसकी साँसें छीनी नहीं थी, वरना जीने की इच्छा उसकी कब की समाप्त हो चुकी थी।

एक साल पहले चैता ने अपने छोटे लड़के का विवाह सादगीपूर्ण ढंग से कर दिया था। उसकी पत्नी गर्भवती थी। नौवाँ महीना चल रहा था। गाँव के सरकारी दवाखाना की डॉक्टरनी ने कह दिया था, इस सप्ताह कभी भी प्रसूति हो जाएगी! शाम के लगभग चार बज चुके थे, जब चैता अपने घर के चौक में लकड़ी काट रही थी। चौक में लगे पत्थर दिन भर की धूप से तपे हुए थे, पर चैता अपनी धुन में नंगे पाँव खड़ी होकर लकड़ी काटती रही। अचानक मौसम ने करवट बदली। चंद सेकंडों में काले-काले बदल घिर आए। नीला आकाश काला स्याह हो गया। गरमी उगलते सूरज को काले बादलों की चादर ने ढक दिया था। रिमझिम फुहार शुरू हो गई थी। पक्षियों का कलरव थोड़ा तेज हो गया था। चौक में बँधी गाय रँभाने लगी। हवा से हिलती-डुलती पत्तियाँ भी जैसे झूम-झूमकर बारिश की पहली फुहार का स्वागत कर रही थीं। बरखा के इस आगमन से सब खुश थे, केवल चैता को छोड़कर। चैता ने मुँह बिचकाया और मन-ही-मन बुदबुदाई 'उँह ये निगोड़ी बरसात शुरू हो गई' और कटी लकड़ियाँ लेकर अंदर बरामदे में चली गई। पूरी रात पानी बरसता रहा। अगली सुबह बारिश थम गई। पर आसमान में काले बादल अभी भी छाए हुए थे। ग्रामीण खेतों में दालों की बुवाई के लिए निकल पड़े। कल रात की बारिश ने वातावरण में ठंडक पैदा कर दी थी। पेड़-पौधों का पत्ता-पत्ता बारिश के पानी में धुलकर चमक उठा था। सूखी मटमैली जमीन भीगकर गहरे भूरे रंग में बदल गई थी। चैता अपने बरामदे में चाय पी रही थी। लड़के के साथ उसे भी खेत पर दाल की बुवाई करने जाना था। दोनों माँ बेटे सुबह का नाश्ता कर खेत की ओर चल दिए।

'माँ समय पर बरसात हो गई है! इस बार दाल की पैदावार अच्छी होगी!' चैता का लड़का चलते चलते बोला।

'सबकुछ तो छीन लिया इस काल बरसात ने, अब क्या लेने आई है!' चैता उदासी भर स्वर में बोली। चैता के लड़के ने कोई जवाब नहीं दिया। माँ के इस उदासी भरे बर्ताव का आदी हो चुका था।

अगले चार दिनों तक रुक-रुककर पानी यों ही बरसता रहा। आज चैता की बहू को दिन से ही प्रसव पीड़ा शुरू हो गई। लड़का नर्स को बुलाने गया था। चैता और उसका बेटा बरामदे में बेचैन बैठे थे। तभी नर्स ने कमरे से बाहर आकर खुशखबरी सुनाई—'बधाई हो माँजी, आप दो जुड़वाँ बच्चों की दादी बन गई हैं!' चैता की बहू को जुड़वाँ बच्चे एक लड़का और एक लड़की हुए थे। चैता की आँखों में खुशी के आँसू तैर गए। वह खुशी से चलते हुए बहू के पास गई। उसकी नजर उतारी, अपने पोते और पोती को स्नेह से गोदी में उठाया; बाहर वर्षा फिर आरंभ हो गई थी, बीच-बीच में बादलों की गड़गड़ाहट भी सुनाई देने लगी थी! चैता दोनों शिशुओं को बहू के पास लिटाकर बाहर बरामदे में आ गई, चैता एकटक बारिश की बूँदों को गिरते हुए देखती रही, फिर उसने चारों ओर नजर घुमाई, चौक के किनारे-किनारे पत्थरों के बीच कितने बरसाती नवांकुर उग आए थे, सामने बगीचे में लगे पेड़-पौधों पर भी नई कोपलें फूट रही थीं! वर्षा ऋतु ने जैसे सबको नया जन्म दिया हो! चैता ने सोचा—आज उसके घर में भी विध्वंस के बाद जीवन के नव अंकुर फूटे हैं! ये सूखी धरती वर्षा के जल से अपनी कोख से कितने नवांकुर को जन्म देती हैं, ताकि ये सृष्टि गतिमान रहे, जीवन चलता रहे, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी सभी इस वर्षा के जल से अपनी प्यास बुझा रहे हैं। चैता के मन से दो साल से भरा उदासी और दु:ख का मैल इस बार की वर्षा ऋतु ने धो दिया। वह मुसकरा उठी! आज खुशी में उसने घर के अंदर दीये जलाए। कुछ दीये उसने आले में रखे, कुछ कमरे में कुछ बरामदे में। उसका बेटा चूल्हे पर बहू के लिए आटे का हलवा बना रहा था और वह दोनों शिशुओं को गोद में लेकर वर्षा ऋतु के पहाड़ी लोकगीत अपनी मधुर आवाज में गा रही थी! बाहर बरसती बूँदों की आवाज ऐसे लग रही थी, मानो वे भी गाने के साथ-साथ अपना सुर मिला रही हों!

एस.आर.बी.-६७ डी
शिप्रा रिवेरा ज्ञान खंड-३
इंदिरापुरम्, गाजियाबाद-२०१०१० (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९९६८२९०२०३

## इस अंक के चित्रकार

### अशोक अंजुम

सुपरिचित चित्रकार एवं रचनाकार। अब तक चार हास्य-व्यंग्य-संग्रह, पाँच गजल-संग्रह, 'एक नदी प्यासी' गीत-संग्रह; हास्य-व्यंग्य एवं गजल, कविता, दोहा, लघुकथा, गीत आदि विधाओं पर सत्ताईस पुस्तकें संपादित। 'राष्ट्रभाषा गौरव', 'काव्यश्री', 'साहित्यश्री' सहित दर्जनों पुरस्कार। संप्रति 'प्रयास' पत्रिका के संपादक।

गली-२, चंद्रविहार कॉलोनी
(नगला डालचंद), क्वारसी बाईपास
अलीगढ़-२०२००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९२५८७७९७४४

# अपने कहन से चमत्कृत करती गजलें

● ब्रजकिशोरी वर्मा 'शैदी'

साहित्य के संबंध में यह वास्तविकता है कि वह समाज व समय-सापेक्ष होता है और तदनुरूप ही अपनी अभिव्यक्ति के स्वरूप का निर्धारण भी करता है। सफल लेखन की कसौटी भी यही है। साहित्य की अन्य विधाओं की भाँति गजल के स्वरूप में भी उल्लेखनीय परिवर्तन हुए हैं। हिंदी-उर्दू की विभाजक रेखा भी मद्धम पड़ती जा रही है। वैसे भी गजल के साथ हिंदी व उर्दू के विशेषण लगा देने मात्र से उसके स्वरूप में अंतर नहीं आ जाता, जब तक कि उसकी सोच, उसका मुहावरा और उसकी कहन अलग न हो। समय-गति का ही प्रभाव है कि जहाँ एक ओर उर्दू गजल अरबी-फारसी के अल्फाज से गुरेज करती जा रही है तो वहीं हिंदी गजल उर्दू के शब्दों का बेरोकटोक इरतेमाल करती आ रही है। वैसे आजकल लिखी जा रही गजलों की भाषा सामान्यत: हिंदुस्तानी है। फारसी, उर्दू, संस्कृत के क्लिष्ट शब्दोंवाली गजलों की संख्या काफी कम है। उन्हें वह लोकप्रियता भी नहीं मिल रही, जो आम बोलचाल की हिंदुस्तानी में लिखी गजलों को मिल रही है। भाषायी कट्टरता का ह्रास धीरे-धीरे स्वयमेव होता चला जा रहा है। कथन की दृष्टि से भी वे अत्यंत व्यापक एव बहुआयामी हो गई हैं। यद्यपि वर्तमान हिंदी गजल की शारीरिक संरचना व रूपाकार में परिवर्तन व संशोधन हो रहे हैं, जिन्हें अनुचित भी नहीं कहा जा सकता, लेकिन इस बात को ध्यान में रखना आवश्यक है कि गजल तगज्जुल से दूर तथा बहर से खारिज न हो जाए। स्तरीय गजल में बात को सीधे-सादे रूप में कहने की बजाय, विभिन्न प्रकार के प्रतीकों, बिंबों, मिथकों व संकेतों के माध्यम से कहा जाता है।

गजल के दोनों भाषायी स्वरूपों में एक अंतर और है। सच तो यह है कि उर्दू शायरी काफी दूर तक विदेशी बिंबों-उपमाओं को ही दोहराती रही। हालाँकि यह काम सलीके से किया गया और उनसे नए-नए अर्थ भी निकाले गए, लेकिन हिंदी गजल इस क्षेत्र में ठेठ देसी और गजल के नजरिए से अनछुए विषयों एवं पहलुओं व प्रताकों को सामने ला रही है तथा नए-नए काफियों और रदीफों का प्रयोग हो रहा है। यही इसकी विशेषता है। हाल ही में, सुप्रसिद्ध समालोचक डॉ. जीवन सिंह ने अपनी नव्यतम कृति 'दसखत' में विस्तार से हिंदी गजल की वर्तमान स्थिति पर बहुत ही शोधपूर्ण अंदाज में विवेचना प्रस्तुत की है। निचोड़ की बात यही है कि भाषा की समझ, भावो की पकड़, छद के निर्वाह और कल्पनाशक्ति के प्रवाह द्वारा एक समर्थ कवि एक सशक्त रचना प्रस्तुत कर सकता है। फिर वहाँ छंद और भाषा के प्रकार बेमानी हो जाते हैं।

ऐसे ही समर्थ कवियो की शृंखला में डॉ. विनय मिश्र भी हैं, जिनका सद्य: प्रकाशित गजल-संग्रह 'तेरा होना तलाशूँ' सन् २०१२ में आए प्रथम संग्रह के बाद दूसरा संग्रह है। आजकल प्रकाश में आ रही बहुत-सी हिंदी गजलें जहाँ निर्धारित मानकों पर खरी उतरने में पूर्णरूपेण सक्षम नहीं कही जा सकतीं, वहीं सतोष की बात है कि इस संग्रह की गजलें उन मानको पर खरी उतरती हैं।

डॉ. विनय मिश्र ने साहित्य की अनेक विधाओं में अपने अभिदान के माध्यम से अपनी अप्रतिम प्रतिभा का परिचय दिया है। उन्होंने अपने वर्तमान गजल-संग्रह के हवाले से यह साबित कर दिया है कि यदि रचनाकार में क्षमता है तो वह हर विधा में अपनी कामयाबी के परचम लहरा सकता है। इसे उनका संकोच कहिए अथवा आत्म-प्रशंसा से गुरेज या फिर गहन आत्मविश्वास कि इस पुस्तक में सिवाय कवर-पलैप के, न तो उन्होंने अपनी ओर से कोई भूमिका दी है और न ही किसी अन्य जाने-माने अदीब से अपने बारे मे कोई आलेख लिखवाया है, जो आमतौर पर विश्लेषक न होकर प्रशंसात्मक ही अधिक होता है। उन्होंने केवल हिंदी कविता में गजल-विमर्श को आगे बढ़ानेवाले ख्यातिलब्ध जनधर्मी आलोचक डॉ. जीवन सिंह को यह संग्रह समर्पित किया है, जो स्वर का आलोचना के प्रति उनकी गहन आस्था को प्रतिबिंबित करता है और वरिष्ठता की गरिमा के साथ-साथ, विनम्रता का भी परिचायक है।

**ये गजलें बनावट और बुनावट दोनों से मुक्त है। बिना लाग-लपेट के सादगी के साथ अपनी बात कहना भी एक कला है। इसी कला का सुंदर और सटीक प्रमाण है इस संग्रह की गजलें। विनय मिश्र ने संस्कृति-अपसंस्कृति, नैतिकता-अनैतिकता, मौलिकता-कृत्रिमता, रिश्ते-नाते आदि अनेक विषयों पर सीधी-सरल भाषा में, तो कहीं व्यंग्यात्मक शैली में, यथा आवश्यक बिंबों-प्रतीकों के माध्यम से शानदार और जानदार अशआर कहे हैं एवं पौराणिक सदर्भों के भी यथायोग्य सटीक प्रयोग किए हैं।**

इस संग्रह की लगभग सभी गजलों में भाषा का रखरखाव, शब्दों का चयन, चिंतन की गहराई व अभिव्यक्ति-कौशल के साथ-साथ गजल की

सभ्यता, सरकार और सिद्धांत, अर्थात् वे सारे तत्त्व मौजूद हैं, जिनकी आशा एक अच्छे गजलकार से की जाती है। ये गजलें बनावट और बुनावट दोनों से मुक्त है। बिना लाग-लपेट के सादगी के साथ अपनी बात कहना भी एक कला है। इसी कला का सुंदर और सटीक प्रमाण है इस संग्रह की गजलें। विनय मिश्र ने संस्कृति-अपसंस्कृति, नैतिकता-अनैतिकता, मौलिकता-कृत्रिमता, रिश्ते-नाते आदि अनेक विषयों पर सीधी-सरल भाषा में, तो कहीं व्यंग्यात्मक शैली में, यथा आवश्यक बिंबों-प्रतीकों के माध्यम से शानदार और जानदार अशआर कहे हैं एवं पौराणिक सदर्भों के भी यथायोग्य सटीक प्रयोग किए हैं।

वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य व नेतृत्व के शंकास्पद मंतव्य को उजागर करते ये अशआर उद्धरणीय हैं—

*आजादी बेजान पड़ी है, कैसा मंजर है/अंधे राजा, गूँगे मंत्री, सैनिक बहरे हैं।*

× × ×

*बदलता देखते ही रुख हवाओं का/सुबह से शाम तक झंडे बदलते हैं।*

× × ×

*तेरे खेमे में शामिल जो नहीं है/कहीं चर्चा में तेरी, वो नहीं है।*

बेहयाई भी सियासत का नमूना है/लुट गई सारी प्रजा, सरकार कायम है।

राजनेताओं व प्रजा के मध्य की दूरी को दरशाते ये कटाक्ष भी प्रशंसनीय हैं—

*जो देता है गरीबों की दुहाई/ताज्जुब है कि वो महलों में ठहरा।*

× × ×

*तुम्हारे देश में हम भी हैं, लेकिन/तुम्हें इस बात का शायद पता हो।*

दिल्ली के प्रतीक के माध्यम से भी सामाजिक विषमता, राजनीतिक संप्रभुता एवं वैचारिक मतभिन्नता जैसे विषयों पर व्यंग्यात्मक टिप्पणियों की हैं।

समाज के अतिम छोर पर बैठे व्यक्ति के वक्तव्य में छिपे व्यंग्य में बहुत कुछ अंतर्निहित है। माचिस की तीली के प्रतीक में उसकी क्षुद्रता व दीनता के आभास के साथ-साथ उसमें छिपी चिनगारी का भी बोध कराना ही इस शेर को कहाँ से कहाँ पहुँचा देता है—

*हूँ माचिस की तीली-भर/बोलूँ मेरी क्या औकात।*

सफल नेतृत्व का अभाव दिग्भ्रमित जनता को निरंतर उद्वेलित करता रहता है—

*हमारे दौर का संकट न पूछो/दिशा तो है, दिशासूचक नहीं है।*

वर्तमान समाज अपनी भौतिक उपलब्धियों और कोरी विकासगाथाओं की कितनी भी डींगें हाँक ले, लेकिन उसकी इकाई, अर्थात् सामान्यजन के जीवन के एकाकीपन की अपनी ही अलग कहानी है—

*अजब मेरी कहानी है कि जिसमें/कहीं भी जिक्र मेरा ही नहीं है।*

× × ×

*जिंदगी से जिंदगी ऐसे अलग/एक घर में हो कई कमरे अलग।*

और इस एकाकीपन को दूर करने का वैज्ञानिक साधन भी उपलब्ध है—

मैं घर में अब अकेला हूँ बताने/मैं सोशल मीडिया पर छा रहा हूँ ।

इनसान में यदि आत्मविश्वास है तो वह उसे स्वावलंबी बना देगा, जिससे वह बुरे दिनों में भी असीम संभावनाएँ सुगमतापूर्वक तलाश लेगा—

*बुरे दिन हैं, मगर ये जिद है मेरी/इन्हीं में कोई अच्छा-सा तलाशूँ।*

× × ×

*मैं चाहे था पसीने में नहाया/मेरा चलना ही आखिर काम आया।*

× × ×

*वो कही भी ढूँढ़ लेगा अपने हिस्से की जमीन/आसमाँ जब तक सलामत है परिंदे के लिए।*

प्रगतिशीलता का अर्थ अपनी परंपराओं और अपनी जमीन से कटना नहीं है, बल्कि यही परंपरा और विकास का समायोजन है—

*है बचाना जमीन से रिश्ता/चाँद तक है मुझे पहुँचना भी।*

इस संग्रह में शामिल गजलों में कहन, मुहावरे, बिंब, प्रतीक, शब्दों और गाँवों के कुछ प्रयोग तो चमत्कृत ही कर जाते हैं, जैसे—

*मुझे जो सुख मिला है, क्या बताऊँ/घड़ी जो बंद थी, उसको चलाकर।*

× × ×

*मौत का जायका बढ़ाता है/जिंदगी तेरा बेमजा होना।*

उपर्युक्त संदर्भों के माध्यम से हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि डॉ. विनय मिश्र हिंदी-उर्दू की साझा विरासत को अपनी सर्जना में समाहित करनेवाले सक्षम रचनाकार हैं। उन्होंने अपने युगीन यथार्थ को स्वर देकर अनुभूति के काव्यात्मक संवेदन के आलेखन का प्रयास किया है। जीवन के विभिन्न आयामों को बेबाकी से प्रस्तुत करती इन गजलों को पढ़कर भरपूर दाद देने को जी करता है। इस संग्रह के संदर्भ से उन्हें 'होने को तलाशने' की आवश्यकता नहीं है, बल्कि इसके माध्यम से उन्होंने अपनी प्रतिभा को प्रस्तरांकित कर दिया है।

इन गजलों के संबंध में ये मेरी कुछ पाठकीय प्रतिक्रियाएँ हैं, मूल्यांकन नहीं। मुझे आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि अपनी संप्रेषणीयता के बल पर ये गजलें वृहद पाठकवर्ग तक अपनी पहुँच बना सकेगी और यह संग्रह चिरपठनीय होने के साथ-साथ संग्रहणीय भी रहेगा, ऐसा मेरा विश्वास और शुभकामना है।

११/१०८, राजेंद्र नगर
सहिबाबाद-२०१००५ (गाजियाबाद)
दूरभाष : ०९८७१४३७५५२

# वह शर्त

*मूल* : **अंतोन चेखव**

*अनुवाद* : **बाल मुकुंद नंदवाना**

वह पतझड़ की एक रात थी। बूढ़ा बैंकर अपने स्टडी रूम में तेजी से इधर-उधर घूम रहा था और आज से ठीक पंद्रह वर्ष पहले दी गई एक दावत को याद कर रहा था। उस दावत में शहर के गण्यमान्य व्यक्ति मौजूद थे। उस दावत में अन्य विषयों के साथ-साथ मृत्युदंड पर भी गरमागरम बहस हुई थी। अधिकांश मेहमान, जिनमें बुद्धिजीवी और पत्रकार भी थे, मृत्युदंड पर अपनी असहमति जता रहे थे। उनका मानना था कि सजा के रूप में मृत्युदंड एक क्रिश्चियन राज्य के लिए अनुपयुक्त और अनैतिक है। उनमें से कुछ का विचार था कि मृत्युदंड को आजीवन कारावास में बदल देना चाहिए।

'मैं आपसे सहमत नहीं हूँ,' मेजबान ने कहा, 'हालाँकि मेरा अनुभव न तो मृत्युदंड का है और न ही आजीवन कारावास का। लेकिन अगर हम तार्किक दृष्टि से देखें, तो मृत्युदंड कारावास की तुलना में अधिक न्यायसंगत एवं मानवीय है। फाँसी व्यक्ति की जान तुरंत ले लेती है, आजीवन कारावास उसे किश्तों में मारता है। अधिक मानवीय जल्लाद कौन है, वह जो आपका जीवन कुछ ही क्षणों में समाप्त कर देता है या वह जो वर्षों तक आपके जीवन का कुछ हिस्सा लगातार निकालता रहता है?'

'दोनों ही समान रूप से अनैतिक हैं,' किसी दूसरे मेहमान ने अपना मत व्यक्त किया, 'क्योंकि दोनों का उद्देश्य एक ही है—जीवन को समाप्त कर देना। राजसत्ता कोई भगवान् नहीं है। उसे यह अधिकार कतई नहीं है कि वह उस वस्तु को छीन ले, जिसे वह चाहे भी तो वापस नहीं दे सकती।'

उस मंडली में एक अधिवक्ता भी था, करीब पच्चीस वर्ष का युवक। जब उसकी राय के बारे में पूछा गया, उसने कहा, 'मृत्युदंड और आजीवन कारावास समान रूप से अनैतिक हैं; परंतु अगर मुझे किसी एक को चुनने के लिए कहा जाए तो निश्चि रूप से मैं आजीवन कारावास को चुनूँगा। कैसे भी हालात में जीवित रहना जीवित नहीं रहने से बेहतर है।'

इस तरह एक रोचक परिचर्चा प्रारंभ हो गई थी। बैंकर ने, जो उस समय नवयुवक था, और कुछ असहिष्णु भी, अचानक आपा खोते हुए टेबल पर मुक्का मारा और अधिवक्ता की ओर पलटकर चिल्लाया, 'यह झूठ है।' मैं तुमसे बीस लाख की शर्त लगाता हूँ, तुम जेल की कोठरी में पाँच वर्ष भी नहीं रह पाओगे।'

'अगर तुम वास्तव में गंभीर हो,' अधिवक्ता ने उत्तर दिया, 'तो मुझे तुम्हारी शर्त मंजूर है, और हाँ, मैं पाँच नहीं, पंद्रह वर्ष तक रहूँगा।'

'पंद्रह! मंजूर है। बैंकर चिल्लाया, 'महानुभावो, मैं बीस लाख का दाँव लगाता हूँ।'

'मुझे मंजूर है। तुम बीस लाख का दाँव लगाते हो, और मैं अपनी आजादी का।' अधिवक्ता ने कहा।

इस तरह एक बेहूदी और हास्यास्पद शर्त लग गई। बैंकर के पास उन दिनों काफी धन-दौलत थी, बिगड़ैल और तुनक-मिजाजी, वह उसी के उन्माद में डूबा हुआ था। रात्रि-भोजन के समय उसने अधिवक्ता से मजाक में कहा, 'जवान घोड़े, इससे पहले कि बहुत देर हो जाए, जरा होश में आओ। मेरे लिए बीस लाख की रकम कुछ नहीं है, लेकिन तुम अपने जीवन के तीन या चार बेहतरीन वर्ष खो दोगे। तीन या चार वर्ष मैं इसलिए कह रहा हूँ कि इससे अधिक तुम किसी भी हालत में नहीं रह पाओगे। मेरे अभागे मित्र, यह मत भूलो कि स्वेच्छिक कारावास बाध्य-कारावास से अधिक दुखदायी है। तुम्हारे मन में उठता विचार कि तुम जब चाहो मुक्त हो सकते हो, काल-कोठरी के तुम्हारे समस्त जीवन में विष घोल देगा। मुझे तुम पर तरस आता है।'

और अब स्टडी रूम में तेजी से घूमते हुए, बैंकर को यह सब याद आया और उसने स्वयं से पूछा, 'मैंने यह शर्त क्यों लगाई? इससे क्या हासिल हुआ? अधिवक्ता अपने जीवन के बेशकीमती पंद्रह वर्ष खो रहा है, और इधर मैं बीस लाख गँवा रहा हूँ। क्या यह लोगों को विश्वास दिला पाएगा कि मृत्युदंड आजीवन कारावास से अच्छा है या बुरा? नहीं-नहीं! यह सब बकवास है। एक खाते-पीते अभिमानी व्यक्ति की सनक और एक अधिवक्ता की निरी धन-लोलुपता के सिवाय कुछ नहीं।'

उसे फिर याद किया, जो उस शाम दावत के बाद हुआ था। यह तय हुआ था कि अधिवक्ता को कारावास, बैंकर के बगीचे के पार्श्वभाग में, कड़े-से-कड़े निरीक्षण के तहत भोगना होगा। यह सहमति बनी थी कि कारावास के दौरान वह तय सीमा को लाँघने, लोगों को देखने, मानव-आवाज सुनने और पत्र-पत्रिकाओं-अखबारों को प्राप्त करने के अधिकार से वंचित रहेगा। हाँ, उसे वाद्य यंत्र रखने, पुस्तकें पढ़ने, पत्र लिखने, मदिरा व तंबकू के सेवन की अनुमति थी। अनुबंध के अनुसार वह बाहरी-संसार से संपर्क बनाए रख सकता था, लेकिन मौन रहते हुए, एक खिड़की के जरिये, जो खासतौर पर इस प्रयोजन के लिए बनाई गई थी। खिड़की से एक नोट भेजकर, वह आवश्यकता की सभी वस्तुएँ,

पुस्तकें, संगीत के यंत्र, मदिरा आदि प्राप्त कर सकता था। अनुबंध को बहुत ही बारीकी से तैयार किया गया था, जिसने कारावास को पूरी तरह से एकाकी बना दिया था और अधिवक्ता को ठीक पंद्रह वर्ष १४ नवंबर, १८७० के बारह बजे से १४ नवंबर, १८८५ में बारह बजे तक के लिए बाँध दिया था। अनुबंध की शर्तों को भंग करने का उसका कोई भी प्रयास, उसका समय से दो मिनट पहले बाहर निकलना भी बैंकर को उसे बीस लाख देने की बाध्यता से मुक्त कर सकता था।

कारावास के पहले वर्ष में, उसके लिखे छोटे-छोटे नोट्स से जो निष्कर्ष निकला, अधिवक्ता एकाकीपन और उबाऊपन से भयंकर रूप से पीड़ित रहा। बगीचे के पार्श्व भाग से दिन-रात पियानो की आवाज आती। मदिरा और तंबाकू को उसने हाथ नहीं लगाया। 'मदिरा,' उसने लिखा, 'वासनाओं को भड़काती है, और वासनाएँ एक कैदी की प्रमुख शत्रु हैं, साथ ही अच्छी मदिरा अकेले पीने से अधिक उबाऊ कोई और चीज नहीं है,' और तंबाकू उसके कमरे की दूषित करता है। पहले वर्ष में अधिवक्ता के पास हलकी-फुलकी किस्म की पुस्तकें भेजी गईं; पेचीदा प्रेम-संबंधों के उपन्यास, अपराध व कल्पनालोक की कहानियाँ और हास्य-नाटक इत्यादि।

दूसरे वर्ष में पियानो के स्वर नहीं सुनाई दिए। अधिवक्ता ने केवल क्लासिक्स की माँग की। पाँचवें वर्ष में संगीत के स्वर फिर से सुनाई दिए और कैदी ने मदिरा की माँग की। उस पर नजर रखनेवालों ने बताया कि उस वर्ष वह केवल खाता रहा, पीता रहा और बिस्तर पर लेटा रहा। वह अकसर उबासी लेता और अपने आप पर झल्लाता रहता। पुस्तकें उसने नहीं पढ़ीं। रात को कभी-कभी वह लिखने जरूर बैठ जाता। वह लंबे समय तक लिखता और सुबह सबकुछ फाड़ देता। एक-दो बार उसे रोते हुए भी देखा गया।

छठे वर्ष की दूसरी छमाही में कैदी ने बहुत ही उत्साह के साथ विभिन्न भाषाओं का, दर्शनशास्त्र और इतिहास का अध्ययन प्रारंभ किया। इन विषयों पर गहन अध्ययन की उसकी लालसा के चलते बैंकर को पर्याप्त पुस्तकें जुटाना भी मुश्किल हो गया। चार वर्षों की समयावधि में, उसकी माँग पर करीब छह सौ जिल्दें खरीदी गईं। उसके इस जुनून की समाप्ति के साथ ही बैंकर को कैदी से यह पत्र प्राप्त हुआ, 'मेरे प्रिय जेलर, मैं इन पंक्तियों को छह भाषाओं में लिख रहा हूँ। उन्हें विशेषज्ञों को दिखाना, वे उन्हें पढ़ें, अगर उन्हें एक भी गलती नहीं मिलती है, तो मैं तुमसे विनती करता हूँ, तुम बगीचे में बंदूक से गोली चलाने का आदेश देना। गोली की आवाज से मैं समझ जाऊँगा कि मेरे प्रयास व्यर्थ नहीं गए हैं। सभी युगों और देशों की प्रतिभाएँ अलग-अलग भाषाओं में बोलती हैं, परंतु उन सभी के भीतर एक सी ज्योति प्रज्वलित होती है। ओह, काश! तुम मेरे परमानंद को जान पाते कि अब मैं उन्हें समझ सकता हूँ!' कैदी की माँग पूरी हुई। बैंकर के आदेश पर बगीचे में दो गोलियाँ दागी गईं।

दसवें वर्ष के पश्चात् अधिवक्ता अचल-स्थिर अवस्था में मेज के सामने बैठकर केवल 'न्यू टेस्टामेंट' को पढ़ता रहा। बैंकर को यह देखकर बहुत ही आश्चर्य हुआ कि जिस व्यक्ति ने चार वर्षों में छह सौ से अधिक बहुश्रुत ग्रंथों में प्रवीणता हासिल कर ली थी, उसे लगभग एक वर्ष का समय केवल एक पुस्तक पढ़ने में लगा, जो समझने में आसान थी और मोटी भी नहीं थी। बाद में 'न्यू टेस्टामेंट' का स्थान धर्मों के इतिहास और धर्मशास्त्र ने ले लिया।

अंतिम दो वर्षों के उसके कारावास में कैदी ने असाधारण मात्रा में अध्ययन किया, लेकिन बहुत ही अव्यवस्थित रूप से। कभी वह प्राकृत विज्ञान का अध्ययन करता, तो कभी बायरन अथवा शेक्सपियर को पढ़ता। उसके नोट्स आते रहते, जिनमें एक ही साथ रसायनशास्त्र की पुस्तक, चिकित्सा पद्धति की पाठ्य-पुस्तक, उपन्यास और कुछ दर्शन या धर्मशास्त्र पर समीक्षात्मक पुस्तकों की माँग होती। उसने इस तरह से अध्ययन किया, जैसे वह टूटे हुए जहाज के खंडों के साथ समुद्र में तैर रहा था, और अपनी जीवन-रक्षा की अदम्य इच्छा से प्रेरित एक के बाद दूसरा खंड व्यग्रता से पकड़ रहा था।

बूढ़े बैंकर ने यह सब याद किया, और विचार किया, 'कल बारह बजे उसे अपनी आजादी मिल जाएगी। अनुबंध के अनुसार मुझे उसे बीस लाख देने पड़ेंगे। अगर मैं रकम देता हूँ, तो मेरा सबकुछ समाप्त समझो। मैं हमेशा के लिए तबाह हो जाऊँगा···।'

पंद्रह वर्ष पहले उसके पास करोड़ों की संपत्ति थी, परंतु आज उसे अपने से पूछने में भी डर लगता है कि उसके पास अधिक क्या है—पैसा अथवा कर्ज? स्टॉक मार्केट पर जुआ, जोखिम भरी सट्टेबाजी और लापरवाही, जिनसे वह इस उम्र में भी छुटकारा नहीं पा सका था, उसके व्यवसाय को धीरे-धीरे चौपट कर दिया था; व्यापार-जगत् का वह साहसी उद्यमी, आत्मविश्वास से भरा हुआ स्वाभिमानी व्यक्ति, एक साधारण सा बैंकर बनकर रह गया था—बाजार के हर उतार-चढ़ाव पर काँपता हुआ।

'वह अभिशप्त शर्त,' बूढ़ा व्यक्ति बुदबुदाया, हताशा में अपने माथे को जकड़ते हुए···'वह व्यक्ति मर क्यों नहीं गया? वह केवल चालीस साल का है। वह मेरी दमड़ी तक ले लेगा, शादी करेगा, जीवन का लुत्फ उठाएगा, एक्सचेंज पर सट्टा लगाएगा और मैं एक ईर्ष्यालु भिखारी की तरह उसे देखूँगा तथा उसके मुँह से हमेशा इन्हीं शब्दों को सुनूँगा, 'मेरे जीवन की तमाम खुशियों के लिए मैं तुम्हारा कृतज्ञ हूँ। मुझे तुम्हारी सहायता करने दो।' नहीं, नहीं! यह असहनीय है! दिवालियेपन और कलंकित होने से बचने का एक मात्र उपाय है कि उस व्यक्ति को मरना होगा।'

घड़ी ने अभी तीन घंटे बजाए थे। बैंकर सुन रहा था। मकान में सभी सो रहे थे, खिड़की के बाहर केवल बर्फ से ढके पेड़ों के रिरियाने की आवाज आ रही थी। चुपचाप, बिना कोई आवाज किए, उसने तिजोरी में से उस दरवाजे की चाबी निकाली, जो पिछले पंद्रह वर्षों से नहीं खुला था, अपना ओवरकोट पहना और मकान से बाहर निकल गया। बगीचे में ठंडक और अँधेरा था। बारिश हो रही थी। सर्द, कँपकँपानेवाली तीखी हवा बगीचे में सनसना रही थी और वृक्षों को विचलित कर रही थी। हालाँकि उसने आँखों पर जोर डाला, लेकिन बैंकर न ग्राउंड, न सफेद मूर्तियाँ, न बगीचे का पार्श्वभाग, न वृक्षों को देख पाया। बगीचे के पार्श्वभाग में पहुँचकर उसने दो बार वॉचमैन को आवाज दी। उधर से कोई जवाब नहीं आया। अवश्य ही वॉचमैन खराब मौसम से बचने के लिए रसोईघर या पौधघर में कहीं सोया हुआ था।

'अगर मुझमें अपने लक्ष्य तक पहुँचने का साहस है,' बूढ़े व्यक्ति ने सोचा, 'तो सबसे पहले वॉचमैन ही संदेह के घेरे में आएगा।'

अँधेरे में उसने सीढ़ियों और दरवाजे को टटोला और बगीचे के पार्श्वभाग में दाखिल हो गया। फिर, धीरे-धीरे रास्ता बनाते हुए सकिंड़े गलियारे तक आया तथा माचिस जलाई। वहाँ कोई प्राणी नहीं था। किसी का पलंग बिना कवर के वहाँ पड़ा हुआ था और कोने में एक लोहे का स्टोव, अँधेरे में धुँधला-सा दिखाई देता हुआ। उस दरवाजे की सील, जो कैदी के कमरे की ओर खुलता था, साबुत थीं।

जब दियासलाई बुझ गई, बूढ़े व्यक्ति ने उत्तेजना से काँपते हुए उस छोटी सी खिड़की में से झाँककर देखा। कैदी के कमरे में एक मोमबत्ती मंद रूप से जल रही थी। कैदी खुद मेज के पास बैठा हुआ था। केवल उसकी पीठ, उसके सिर के बाल और उसके हाथ दिखाई दे रहे थे। खुली पुस्तकें मेज, दो कुरसियों पर, और मेज के पास कॉरपेट पर बिखरी हुई थीं।

पाँच मिनट गुजर गए और कैदी एक बार भी नहीं हिला। पंद्रह वर्षों के कारावास ने उसे स्थिर बैठना सिखा दिया था। बैंकर ने अपनी उँगली से खिड़की को धीमे से थपथपाया, लेकिन कैदी में कोई हलचल नहीं हुई। तब बैंकर ने सावधानी से दरवाजे पर लगी सील को तोड़ा और ताले में चाबी लगाई। जंग लगे ताले से एक कर्कश आवाज आई और दरवाजा चरमराया। बैंकर को एक आकस्मिक चीख और कदमों के आवाज की प्रत्याशा थी। तीन मिनट बीत गए, लेकिन अंदर पहले जैसी शांति बनी हुई थी। उसने अंदर जाने का मानस बनाया।

मेज के सामने एक व्यक्ति बैठा हुआ था, एक साधारण मानव से भिन्न। वह एक कंकाल था, कसी-खिंची चमड़ी, औरतों की तरह लंबे घुँघराले बाल और झबरी दाढ़ी। उसके चेहरे का रंग पीला था, मिट्टी का शेड लिये हुए; गाल पिचक गए थे, पीठ लंबी और सिकुड़ी हुई, और वह हाथ जिस पर उसने अपना झबरा माथा झुका रखा था, इतना पतला-दुबला था कि उसको देखना बहुत ही कष्टदायक था। उसके बाल सफेद हो गए थे, और उसके जराग्रस्त क्षीण चेहरे को देखकर लगता ही नहीं था कि वह केवल चालीस वर्ष का था। वहाँ मेज पर, उसके झुके हुए सिर के सामने, एक कागज की शीट पड़ी थी, जिस पर छोटे अक्षरों में कुछ लिखा हुआ था।

'बेचारी दुष्टात्मा,' बैंकर ने सोचा, 'वह नींद में है और शायद सपनों में लाखों में खेल रहा है। मुझे केवल इस अधमरी-सी वस्तु को उठाना है और उसे बिस्तर पर पटक देना है, और तकिये से एक क्षण के लिए उसका गला दबा देना है। किसी भी तरह की जाँच-पड़ताल, इस अस्वाभाविक मृत्यु का सुराग नहीं लगा पाएगी। लेकिन पहले पढ़ लूँ कि उसने यहाँ क्या लिखा है।

बैंकर ने मेज से शीट उठाई और पढ़ा, 'कल आधी रात को बारह बजे, मुझे मेरी आजादी मिलेगी और लोगों से मिलने-जुलने का अधिकार। लेकिन इससे पहले कि मैं इस कमरे से बाहर निकलकर सूर्य को देखूँ, मुझे लगता है कि यह जरूरी है कि मैं आपसे कुछ कहूँ। पवित्र अंतर्मन से और ईश्वर के समक्ष, जिसकी दृष्टि मुझ पर है, मैं आपके सामने घोषणा करता हूँ कि आजादी, जीवन, स्वास्थ्य और वे सभी, जिन्हें आपके महान् ग्रंथ संसार की सुखकर वस्तुएँ मानते हैं, मैं उन्हें तुच्छ मानकर उनका तिरस्कार करता हूँ।

'पंद्रह वर्षों तक मैंने बड़ी लगन और मेहनत के साथ सांसारिक जीवन का अध्ययन किया है। यह सत्य है कि इन पंद्रह वर्षों में मैंने न संसार को देखा और न ही लोगों को। परंतु आपकी पुस्तकों में डूबकर मैंने सुगंधित मदिरा का सेवन किया, गीत गाए, जंगलों में हिरण व जंगली-सूअर का शिकार किया, महिलाओं से प्रेम किया···और, आपके कवियों की प्रतिभा के मंत्र-मोह से सृजित सुंदर महिलाएँ, अलौकिक बादलों की तरह, रात को मेरे पास आतीं और मुझे अद्‌भुत गाथाएँ सुनातीं, जो मुझे मदहोश कर देती। आपकी पुस्तकों के जरिए ही मैं एल्ब्रूज और माउंट ब्लॉक की चोटियों पर पहुँचा और वहाँ से मैं सूरज को प्रात:काल में उदय होते और सायंकाल में आकाश, समुद्र और पर्वत-श्रेणियों पर सुनहरे नील-लोहित रंग की छटा बिखराते देखा। उन चोटियों से मैंने मेरे ऊपर बादलों को चीरकर बिजलियाँ चमकती देखी; मैंने हरे-भरे जंगलों, खेतों, नदियों, झीलों, शहरों को देखा; मैंने साइरेन की आवाजें और पान देवता का बाँसुरी वादन सुना; मैंने उन दुष्टात्माओं के पंखों को भी छुआ, जो मेरे पास उड़ती हुई आई थीं, भगवान् को बुरा-भला कहने···आपके ग्रंथों से ही मैंने स्वयं को अथाह रसातल में डाला, चमत्कार किए, शहरों को जलाकर धराशायी किया, नए धर्मों का प्रचार-प्रसार किया, समस्त देशों को परास्त कर विजय प्राप्त की।

'आपके ग्रंथों ने मुझे बुद्धिमत्ता प्रदान की। सदियों से निर्मित वह पूरी अथक मानवी-विचार शृंखला मेरी खोपड़ी के छोटे से पिंड में समा

गई है। मैं जानता हूँ कि मैं आप सबसे ज्यादा समझदार हूँ।

'और मैं आपके ग्रंथों का तिरस्कार करता हूँ, सारे सांसारिक सुखों और बुद्धिमत्ता का तिरस्कार करता हूँ। मृगजल की तरह सबकुछ असार, निर्बल, काल्पनिक और भ्रामक है। आप कितने ही अभिमानी और बुद्धिमान एवं सुंदर क्यों न हों, मृत्यु आपको पृथ्वी की सतह से पोंछ देगी; और आपकी संतानें, आपका इतिहास और आपके प्रतिभा-संपन्न व्यक्तियों की अनश्वरता, इस भू-मंडल के साथ-साथ भस्म हो जाएगी।

'आप पागल हैं और गलत राह पर हैं, आप असत्य को सत्य और कुरूपता को सुंदरता समझते हैं। आप अचंभित हो जाएँगे, अगर अकस्मात् सेव और नारंगी के वृक्ष फलों के बजाय मेढक और छिपकलियाँ देने लगे तथा अगर गुलाब के फूल पसीने से तरबतर घोड़े की गंध देने लगे। इसी प्रकार मैं भी आप पर अचंभित हूँ, जिन्होंने स्वर्ग के बदले पृथ्वी लेकर घाटे का सौदा किया है। मैं आप को जानना-समझना नहीं चाहता हूँ।

'कि जिसके साथ आप जी रहे हैं, उसके प्रति मेरी अवज्ञा को प्रकट करता हूँ, मैं उस बीस लाख की रकम पर अपना दावा छोड़ता हूँ, जिसका कभी मैंने स्वर्ग के रूप में सपना देखा था, जिसका अब मैं तिरस्कार करता हूँ। कि उस रकम पर मेरे अधिकार से मुझे वंचित कर दिया जाए, मैं निर्धारित अवधि से पाँच मिनट पहले यहाँ से बाहर आ जाऊँगा, और इस तरह मैं समझौते का उल्लंघन करूँगा।

बैंकर ने पढ़ने के बाद शीट मेज पर रख दी, उस विलक्षण व्यक्ति का माथा चूमा और रोने लगा। वह पार्श्व भाग से बाहर गया। आज से पहले उसे स्वयं पर इतनी ग्लानि कभी नहीं हुई थी, उस समय भी नहीं, जब उसे स्टॉक मार्किट में भयंकर नुकसान हुआ था। घर आकर वह अपने बिस्तर पर लेट गया, परंतु व्याकुलता और आँसुओं ने उसे देर तक सोने नहीं दिया।

अगली सुबह बेचारा वॉचमैन भागता हुआ उसके पास आया और उसे बताया कि उन्होंने उस आदमी को, जो पार्श्व भाग में रहता था, खिड़की से चढ़कर बगीचे में जाते देखा है। वह गेट तक गया और फिर ओझल हो गया। बैंकर तुरंत नौकरों के साथ पार्श्व भाग में गया और अपने कैदी के भाग निकलने की तसदीक की। अनावश्यक अफवाहों से बचने के लिए उसने विरक्त भाव से उस शीट को मेज से उठा लिया और घर लौटने के पर उसे अपनी तिजोरी में रखकर ताला लगा दिया।

१५२, टैगोर नगर, हिरणमगरी
सेक्टर-४, उदयपुर-३१३००२ (राज.)
दूरभाष : ९९८३२२४३८३

# मेहनत रंग लाई

**नवगीत**

● ओम उपाध्याय

## मौसम

मौसम बदलने लगा गिरगिट जैसा रंग,
समझ में नहीं आता उसका अजीब ढंग;
कभी सर्दी कभी गरमी तो कभी बरसात,
तीनों ऋतुओं के दर्शन हो जाते एक साथ;
यह ग्लोबल वार्मिंग है या कोई और बात,
प्रकृति से खिलवाड़ भी बदल देते हालात;
सूखा, बाढ़ अतिवृष्टि के मिल रहे संकेत,
अभी है वक्त वर्ना चिड़िया चुग जाएगी खेत;
गाँव-कस्बे के पेड़-पौधे, जंगल खो गए,
शहर सीमेंट और कंक्रीट के जंगल हो गए।

## चिड़िया का खामोश रुदन

मैंने चिड़िया का उत्साह देखा है
जब वह अपने साथी के साथ
तिनके एकत्र कर
नीड़ बना रही थी
चिड़िया की चीं-चीं की वह चहचहाहट में
उसका जोश उसकी तत्परता
उसका समर्पण फूट पड़ा था
उसकी चहक में गीत उभरकर आ रहा था
मानो वह निर्माण गीत गा रही हो
चिड़िया और उसके साथी की
मेहनत रंग लाई
नीड़ का निर्माण संपन्न हुआ
दोनों बेहद खुश थे, प्रफुल्लित थे
और चहचहा रहे थे
उनके चहचहाने से महसूस हो रहा था
कि वे कोई प्रणय-गीत गा रहे हैं
कुछ दिनों बाद चिड़िया ने घोंसले में अंडे दिए
फिर कुछ दिन बाद अंडों में से बच्चे निकले
चिड़िया और उसके साथी की
प्रसन्नता का कोई ठिकाना न रहा
दोनों बारी-बारी से बाहर जाते
चुग्गा लाते, बच्चों को चुगाते
बच्चों के साथ चहचहाते
एक-दूसरे के लिए बधाई गीत गाते
फिर अचानक एक दिन बच्चे
कभी न घोंसले में लौटने के लिए उड़ गए
उधर साथी भी कहीं चला गया
अब घोंसले में रह गई निपट-नितांत अकेली
उदास, खोई-खोई गुमसुम चिड़िया
विरह गीत गाते हुए
और फिर एक दिन
चिड़िया भी उड़ गई न जाने कहाँ
घोंसला लावारिस होकर टूट गया और बिखर गया
अब घोंसले में कुछ भी न था
सिर्फ उसके होने के निशान शेष थे
जिसका पता, जिसका एहसास, जिसका
आभास मुझे कभी-कभी होता था
जब कभी मेरी निगाहें उस ओर उठती थीं
और शेष था चिड़िया का खामोश रुदन
ऐसा बार-बार, कई बार हुआ और हो रहा है
केवल चिड़ियाएँ बदलीं, साथी बदले,
बच्चे बदले और बदले घोंसले।

फ्लैट नं.-१०७, बी-ब्लॉक,
प्रथम तल, स्टर्लिंग स्काई लाइन, इंदौर-१६ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४०७५१५१७४

# हिंदी का महत्त्व

• कुलभूषण सोनी

हिंदी निज साहित्य में, तव अनुपम अस्तित्व।
भव्य-दिव्य द्युति आपकी, प्रमुख यही गुण-सत्त्व॥

तुम सदैव करती रहीं, सबका हित-सम्मान।
नित्य तुम्हारा जगत् में, करते विद्वत् गान॥

निज साहित्य समाज में, अमित सर्वोच्च स्थान।
बिना तुम्हारे कब हमें, भाषे! मिलता ज्ञान?

देवनागरी-सी महा, भव में प्रिय सुठि नाम।
स्मरण मात्र से ही बनें, सभी काम नाकाम॥

जग में तुम सुखदा हुईं, श्रुति पुरान हैं खान।
तुमसे ही मिलकर रचें, महाकाव्य विद्वान्॥

भाग्यशालिनी-सुरुचिमय, अद्‌भुत हो छविमान।
क्रांति-कीर्ति तव तेज से, करती हो उत्थान॥

सभी तुम्हें सन्माते, देते सब ही प्यार।
शोभित हो, अनुकूल हो, सबके हृदयागार॥

विज्ञ, सुकवि, लेखक सभी करते सदा प्रशंस।
हिंदी! तव उपयोग से, होते संशय भ्रंश॥

पाकर तुमको हो गए, सभी लक्ष्य युत धन्य।
भारत माँ की लाड़ली, सदा रहो चैतन्य॥

हो महत्त्व की खान तुम, निष्प्राणों को प्राण।
'भूषण' भावों में करो, प्रादुर्भूत विधान॥

## हम

मंजिलें सुकून मिली, फिर भी हम जी न सके,
हयात मकरंद बनी, फिर भी हम पी न सके।

अब तो बेजार हुआ, गुलशने-दिल अपना,
तन के कपड़े भी फटे, उन्हें हम सी न सके।

दो कदम हम भी चले, दो कदम वो भी चले,
बनके जटायु भी, आसमान छीन न सके।

शिकवा करें किससे, हुई खामी 'भूषन',
हमें रुसवाई मिली, मर फिर भी न सके।

## तुम

गम के अँधेरों में, अश्क न बहाया करो,
दर्दे-दिल अपना, हमको सुनाया करो।

तुमको मिलेगा सुकूं, दूर गम भी होगा,
मोहब्बत करके हमें, यों न भुलाया करो।

एक है यही तुमसे ख्वाहिशे-दिले 'भूषन',
नजरें चुराके तुम, चुपके न जाया करो।

## अराजकता की आँधी

अपराध और अराजकता की आँधी ने
फूँक दिया है—दीनों का दिल
और बेसहारों का बचपन,
क्योंकि हर राह पर
भ्रष्टाचार का बोलबाला है।
पता नहीं पल में
क्या होनेवाला है,
कैसे पनपेगी अब मानवता?
क्योंकि उसे तो लोभ रूपी दानव ने
अपने पाश में फाँस लिया है।
इसीलिए मानवता अब
गंदी खाई की गहराई हो गई है
आदमी की जिंदगी तबाह हो रही है,
अब तो माँ की ममता भी
गलियों में खो गई है,
और बूढ़ी माँ भटकती हुई

सुपरिचित कवि एवं कथावाचक। कई काव्य-संग्रह प्रकाशित। देश की अनेक पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित एवं आकाशवाणी के कई केंद्रों से प्रसारित। सामाजिक-धार्मिक कई संस्थाओं द्वारा सम्मानित-पुरस्कृत। संप्रति विभिन्न कलाओं के नवांकुर तैयार करने में संलग्न।

दुत्कारें खा रही है
भिखारियों और कूकरों की तरह।
वह सोचता है—
कब होगा भ्रष्टाचार
और अराजकता का अंत?
कब महकेगा लहलहाता हुआ
वसुधा के आँगन में
फिर से सुखद बसंत?
या फिर अभी और होगा
मानवता-संहार?
लगता है भ्रष्टाचार के कुत्सित कदम
अब और बढ़ गए हैं।
जैसे बहती नदी में लहरें
और सुदूर जाकर
उसके कगार
इर्द-गिर्द के प्रदूषण से
बेशुमार कहीं आर-पार
नए गढ़ गए हों।

श्याम ज्वैलर्स, निकट गोल मार्केट
प्रताप विहार, किराड़ी, दिल्ली-११००८६
दूरभाष : ९२११६२५५६१

# मेरी चार धाम यात्रा

● गुंजन गुप्ता

चार धाम यात्रा के नाम से मन बहुत उत्साहित हो गया था, जब हमारे परिवार के लोगों ने गरमियों की छुट्टियों में जाने का निश्चय किया। जब चार धाम यात्रा की बात होती है तो भारत के चारों सीमा क्षेत्र परम पावन तीर्थ श्रीबदरीनाथ, उत्तर में हिमालय शृंखला की चोटी, फिर पश्चिम में अरब सागर के निकट पूजनीय मंदिर श्रीद्वारकाधीशजी, उसके बाद धुर दक्षिण में हिंद महासागर के निकट परम पूज्य रामेश्वरम् और पूर्व में बंगाल सागर के निकट श्रीजगन्नाथपुरी के नाम लिये जाते हैं। हमारे ऋषियों, तपस्वियों एवं मनीषियों ने चार और धाम भी जोड़ दिए। उन्हें भी हम भारतीय चार धाम की यात्रा एवं धार्मिक आस्था के तीर्थ मानते हैं और ये चारों धाम हिमालय पर्वत के उत्तर में स्थित हैं। ये चार धाम हैं—बदरीनाथ, श्रीकेदारनाथ, जमुना का उद्‌गम स्थल जमुनोत्तरी या यमुनोत्तरी और पावन गंगा नदी का गोमुख या उद्‌गम स्थल गंगोत्तरी। इन चारों धामों की यात्रा जितना पुण्य देती है, उतनी ही प्रकृति सौंदर्य का आनंद भी। मन को लुभानेवाले दृश्य सभी का मन मोह लेते हैं। इन धामों के दर्शन बड़े भाग्यशाली लोगों को ही होते हैं।

हम लोग दक्षिण भारत में रहते हैं और पहाड़ों पर जाने का यह पहला ही अवसर था। मैं और मेरे पति को पहाड़ों पर जाने के लिए कुछ दिन पहले पैदल चलने का अभ्यास शुरू करना पड़ा था। वहाँ जाने से पहले हम लोगों ने गरम कपड़े, दस्ताने, मफलर, टोपी आदि खरीदे। हमारे साथ मेरी नंद-ननदोई, जेठानी आदि भी गए थे। हम लोग विद्यानगर तौरंगलू, जिला बल्लारी में रहते हैं। वहाँ अभी नया एयरपोर्ट बना है। एक फ्लाइट हैदराबाद से विद्यानगर, फिर विद्यानगर से बंगलौर जाती है, वही फ्लाइट फिर लौटकर विद्यानगर होती हुई हैदराबाद जाती है। मैं और मेरे पति श्री श्रीनिवासजी २५ अप्रैल, २०१८ को जिंदल एयरपोर्ट से दोपहर दो बजे सुपरजेट हवाई जहाज से बंगलौर के लिए रवाना हुए। लगभग एक घंटे में बंगलौर के एयरपोर्ट पर हम लोग पहुँच गए थे। हमारी फ्लाइट २६ अप्रैल को सुबह बंगलौर से दिल्ली के लिए थी। हम लोग बंगलौर में अपनी छोटी पुत्री संध्या के घर ठहरे।

२६ अप्रैल को सुबह हम लोग बंगलौर एयरपोर्ट पहुँचे, वहाँ पर मैं, जेठानी, दो ननदें व जीजाजी (ननदोई) तथा उनके छोटे भाई एवं उनकी पत्नी भी पहुँच गए थे। इस तीर्थयात्रा में हम कुल आठ व्यक्ति थे। हमारी यह बंगलौर से दिल्ली की फ्लाइट ९:२० बजे की थी। हम लोग दिल्ली एयरपोर्ट १२:३० बजे पहुँच गए थे। दिल्ली से हरिद्वार शताब्दी एक्सप्रेस से रात ८ बजे पहुँचे। दो इनोवा गाड़ी से हम होटल आ गए, जो पहले से आरक्षित करवाए थे। रात का खाना खाए और सो गए।

२७ अप्रैल को सुबह हम सब तैयार होकर 'हरकी पौड़ी' गंगा-स्नान के लिए निकल पड़े। गंगा नदी कल-कल करती स्वच्छ एवं पवित्र जल से बह रही थी। पानी बहुत ठंडा था; हमने भगवान् का नाम लेकर उसमें डुबकी लगाई। परिवार के लोगों के नाम से भी डुबकी लगाई। हम महिलाओं ने आरती की तथा मंदिरों के दर्शन किए। शिव-पार्वती मंदिर के भी दर्शन किए, उसके बाद भारत माता मंदिर देखा, जो सात मंजिला है। एक-एक मंजिल पर अलग-अलग धर्म के देवी-देवता तथा संत-महापुरुषों की मूर्तियाँ हैं।

सुपरिचित लेखिका। अब तक विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित। संप्रति जिंदल विद्या मंदिर, विद्या नगर में हिंदी की अध्यापिका।

दोपहर में भोजन किया व थोड़ा-बहुत जो वहाँ मिलता था, खरीदा भी। शाम को उड़न-खटोले से मनसा देवी व चामुंडा देवी के दर्शन करने गए। रात को बड़ी ही मनमोहक 'हरकी पौड़ी' पर गंगाजी की आरती का आनंद लिया। हरकी पौड़ी पर हम लोगों ने पंडितों के माध्यम से अपने पूर्वजों का तर्पण भी किया।

२८ अप्रैल को श्रीबदरीनाथ धाम की यात्रा के लिए ट्रेवल एजेंट के द्वारा हमने बड़ी गाड़ी टाटा ट्रेवलर का प्रबंध कर लिया था। यात्रा आरंभ करने से पहले ड्राइवर ने हमें कहा कि माया देवी मंदिर के दर्शन करने चाहिए। उसने हमें दर्शन कराए व एक नारियल चढ़ाया। यात्रा प्रारंभ हुई गाड़ी का ए.सी. खराब था तथा गाड़ी में कुछ खराबी भी थी। ऋषिकेश पहुँचकर हमें पंजाब के रजिस्ट्रेशन की गाड़ी लेनी पड़ी। इस ड्राइवर का नाम नीटू था। यह समझदार टैक्सी ड्राइवर था। हम रात के ९ बजे देहरादून-मसूरी होते हुए बड़कोट पहुँच गए। यहाँ हम लोग होटल में रुके, जो पहले से ट्रेवल एजेंट के द्वारा बुक था। यहाँ रात को आराम किया।

२९ अप्रैल को सुबह जल्दी ही हम लोग यमुनोत्तरी के लिए निकले। पहाड़ों की वादियों में हमारी गाड़ी साँप जैसे घुमावदार रास्तों पर चल रही थी। चारों ओर के दृश्य बहुत आकर्षक लग रहे थे। प्राकृतिक सौंदर्य का आनंद हम ले ही रहे थे कि अचानक हमारी गाड़ी रुक गई। पता चला कि रात को बारिश होने के कारण भू-स्खलन हुआ और यात्रा में रुकावट आ गई थी। सड़क से पत्थर साफ करने-हटाने में लोग लगे हुए थे। हमें वहाँ आधा घंटा ही रुकना पड़ा। रास्ता बहुत सुंदर लग रहा था, अलग-अलग तरह के पहाड़ तथा नीचे नदी बह रही थी। बादलों में आँख-मिचौनी खेलते पहाड़ और देवदार के पेड़ों की हरियाली ने सफर

बड़ा सुहाना बना दिया था। दो घंटे की यात्रा के बाद ड्राइवर ने गाड़ी रोक दी, क्योंकि उसके बाद की यात्रा पालकी, पिट्ठू या घोड़े पर करनी थी। छह किलोमीटर हम लोग पालकी में बैठकर गए। पालकी के ऊपर बैठकर जाना अच्छा तो नहीं लगता, क्योंकि वहाँ के पहाड़ी लोग अपनी जीविका चलाने के लिए ही पालकी हमारे बोझ के साथ उठाते हैं। एक पालकी का किराया हमें चार से साढ़े चार हजार रुपए देना पड़ा था। वे बड़े मेहनती लोग हैं। हम लोग पालकियों में बैठकर प्रकृति का आनंद ले रहे थे। धीरे-धीरे पहाड़ियाँ सीधी ऊँची हो रही थीं, हमें डर लग रहा था। नीचे देखते तो दिल काँप उठता था। पालकीवाले आगे-पीछे होते रहते थे। इन पालकीवालों के पास अपने आई.डी. कार्ड थे, इसलिए हमें इन पर विश्वास भी था। पहाड़ी रास्तों पर पल-पल पर कुछ-न-कुछ नया देखने को मिलता था। वहाँ स्वच्छ-निर्मल यमुना नदी के भी दर्शन होते रहे। बीच-बीच में हमें पैदल भी चलना पड़ा, साँस फूल जाती थी। पालकी उठानेवालों में बड़ा धैर्य-साहस होता है। उनके प्रति हमें दया आती थी, उन्हें नमन करने का मन होता था।

*केदारनाथ*

जब हम लोगों की पालकी एक-दूसरे से अलग हो जाती तो डर भी लगने लगता था। वहाँ के ताल कुंड में स्नान करने का मन भी किया, पर केवल उसके जल से हमने अपने ऊपर कुछ छींटे मारे। कुंड में चावल पकाए। गंगा माता और यमुना मैया की मूर्ति के आगे शीश नवाए, पूजा-अर्चना की। यमुना नदी का उद्‌गम बहुत रोमांचित करनेवाला था। पालकीवाले ने कहा कि यहाँ रोज एक से दो बजे के लगभग वर्षा होती है, ईश्वर की कृपा है। बस फिर वर्षा प्रारंभ हो गई। हमने रेनकोट खरीदे। वहाँ खाना खाया और उसके बाद पालकी में बैठकर नीचे उतरने लगे। रास्ते में देखा कि घोड़ों पर अधिक लोग यात्रा कर रहे थे, डर लग रहा था कि कोई घोड़ा टक्कर न मार दे। हम लोग सुरक्षित नीचे आ गए। हम लोग इस यात्रा में चित्र भी खींचते रहे और बड़कोट आ गए, रात का भोजन करके अपने होटल में विश्राम किया।

३० अप्रैल को हम लोग तैयार होकर अपनी टैक्सी से उत्तरकाशी के लिए निकले। यह रास्ता भी बड़ा रमणीय था। ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ, उनसे निकलते छोटे-बड़े झरनों की मधुर आवाज मन को मोह रही थी। बर्फ से ढकी पहाड़ों की चोटियाँ मन गद्‌गद हो गया था। दोपहर एक बजे हम लोग उत्तरकाशी के होटल ग्रेट गंगा पहुँच गए थे। होटल के पीछे गंगा नदी अपनी तेज धारा के साथ, संगीतमय आवाज के साथ बह रही थी। हम लोगों ने दोपहर का खाना खाकर विश्राम किया।

एक मई की सुबह हम लोगों ने गंगोत्तरी के लिए प्रस्थान किया। हिमालय पर्वत की घुमावदार सर्पीली सड़कों पर हमारी टैक्सी चली जा रही थी। रास्ते में पाइन के वृक्ष तथा रंग-बिरंगे फूलों की छटा मन को मोह रही थी। गंगोत्तरी के तट से एक किलोमीटर पैदल चलना पड़ा था। मेरी जेठानी के लिए व्हील चेयर ले ली गई थी। रास्ते में लोग जड़ी-बूटियाँ, रुद्राक्ष की मालाएँ आदि बेच रहे थे। हमने वहाँ कुछ खरीदा नहीं, बस पूजा-अर्चना का सामान खरीदा। गंगाजल के लिए कलश खरीदे।

गंगा कोई साधारण नदी नहीं है। वेदों से लेकर वेदव्यास तक, वाल्मीकि से लेकर आधुनिक कवियों और साहित्यकारों ने इसका गुणगान किया है। इसका भौगोलिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक महत्त्व है। शास्त्रों ने इसे एक स्थावर, सुगम नित्य तीर्थ कहा है। वेदों और पुराणों में गंगा को बार-बार तीर्थमयी कहा गया है। महाभारत में कहा गया है कि गंगा अपना नाम उच्चारण करनेवाले के पापों का नाश करती है। दर्शन करनेवालों का कल्याण करती है तथा स्नान-पान करनेवालों की सात पीढ़ियाँ तक पवित्र हो जाती हैं। इसके लिए भगीरथ ने बहुत तप किया था। गंगा माँ के दर्शन गंगोत्तरी जाकर करने का सौभाग्य हमें मिला। हमने गंगाजी के तट पर बैठकर विधि-विधान से पंडित द्वारा पूजन किया। वहाँ पंडितजी ने पितृ तर्पण कराया। वहाँ गंगाजी में स्नान करने का मन था, परंतु रात को बारिश के कारण ऊपर ग्लेशियर टूट गया था, जिससे पानी में रेत अधिक थी। हम लोगों ने वहाँ के सुंदर चित्र अपने मोबाइल कैमरों से लिये। सभी स्थानों पर शिव-पार्वती, हनुमानजी की मूर्तियाँ थीं। वहाँ हमने अपने कलश में गंगाजल भरा। वहाँ प्राकृतिक सौंदर्य तो था ही, साथ में स्वच्छता भी थी। कहीं कोई प्रदूषण नहीं था। जनता के लिए सुलभ शौचालय बना हुआ था।

*बदरीनाथ*

दो मई को हमने गुप्तकाशी के लिए यात्रा शुरू की। यह यात्रा ८-१० घंटे की थी। हम लोग रास्ते भर अंताक्षरी का खेल, गाने गाते, भगवान् के भजन गाते हुए सफर का आनंद ले रहे थे। पहाड़ी रास्तों का सफर, फिर घनघोर घटाएँ, हलकी और कभी तेज बारिश में आनंद आ रहा था। हम गुप्तकाशी पहुँच गए। वहाँ हमारे ट्रेवल एजेंट शास्त्रीजी ने पहाड़ी जगह पर कैंप होटल का प्रबंध किया था। हम सभी लोग बड़ी आयु के व कुछ बुजुर्ग भी थे, लगा कि यहाँ ठंड में कैसे रुका जाएगा। जब हम लोग कमरों में गए तो देखा कि वहाँ सब व्यवस्थित था, उस होटल का एक दिन पहले ही उद्‌घाटन हुआ था। वहाँ गरम पानी, बाथरूम आदि की अच्छी व्यवस्था थी। रात को खाना खाकर स्वेटर-मोजे आदि पहनकर सो गए। सुबह उठकर बाहर देखा तो बहुत ही सुंदर दृश्य था पहाड़ों का, उसे देखकर दाँतों तले उँगली दबा ली।

इतनी सुंदरता की कभी कल्पना ही नहीं की थी। लोग विदेशों में घूमने जाते हैं, जबकि भारतवर्ष के पहाड़ कितने सुंदर हैं।

तीन मई को हम लोग सुबह ५ बजे केदारनाथ भगवान् के दर्शन के लिए निकल पड़े। वहाँ जाने के लिए हम लोगों ने हेलीकॉप्टर से यात्रा की। इसके लिए हम लोग निर्धारित स्थान हेलीपैड ग्लोबल पर गए। टिकट पहले से आरक्षित करा ली थी। इस यात्रा के लिए पास लेने होते हैं, इसकी लंबी लाइन थी और सबका वजन होना था, क्योंकि हेलीकॉप्टर में पाँच व्यक्ति ही बैठ सकते हैं। वजन के अनुसार हम लोग तीन समूहों में बँट गए। हम लोगों का नंबर आने में समय था। हमें भूख लगने लगी, हमारे साथ जो कुछ खाने-पीने का सामान था, वह खाया। जब तक हम अपनी बारी की प्रतीक्षा करते रहे, हम लोगों ने हेलीकॉप्टर टेकऑफ और लैंड करने के चित्र लिये। जो यात्री केदारनाथजी के दर्शन करके आते तो उनसे पूछते कि कैसा है वहाँ का मौसम? दर्शन कैसे हुए? हम लोग उनसे ऐसे पूछ रहे थे, जैसे वे कोई इंटरव्यू देकर लौटे हों। उन्होंने बताया कि ठंड बहुत है। इंतजार समाप्त हुआ, हमारा नंबर भी आ गया। हेलीकॉप्टर में सफर करने का यह हमारा पहला ही अवसर था। हल लोगों ने प्राकृतिक सौंदर्य का आनंद लिया। ५-१० मिनट में हम लोग महादेवजी की भूमि पर उतर गए। ठंड बहुत थी, दाँत बजने लगे, हड्डियाँ काँपने लगीं, चारों ओर बर्फ-ही-बर्फ थी। हलकी-हलकी बारिश भी हो रही थी। इंद्र भगवान् के पल-पल बदलते रूपों को देखकर दो आँखें भी कम पड़ रही थीं। हेलीपैड से मंदिर तक जाने का सीड़ीनुमा रास्ता एक किलोमीटर था।

*यमुनोत्तरी*

हमें जेठानीजी, जो वृद्ध हैं, उनके लिए पिट्ठू करना पड़ा था। चलने में हमारी साँस फूलने लगी थी। साथ में कपूर लाए थे, उसे सूँघा। उससे शक्ति आई। 'हर-हर महादेव' बोलते हुए आगे बढ़े। पूजा-अर्चना के लिए प्रसाद व फूल आदि लिये और दर्शन के लिए लाइन में लग गए। एक घंटा प्रतीक्षा करने के बाद मंदिर के द्वार पर पहुँचे। वहाँ मन प्रफुल्लित हो गया। मंदिर की भव्यता विशाल लिंग रूपी शिला अवर्णनीय है। वहाँ पंडितजी ने हम दंपती से लिंग अभिषेक करवाया। लिंग के स्पर्श से मन श्रद्धा-भक्ति में नतमस्तक हो गया। साक्षात् प्रभु के दर्शन कर जीवन सार्थक हो गया। मंदिर की परिक्रमा की, वहाँ देखा कि सन् २०१३ में वर्षा के कारण जो बाढ़ आई थी, कि विशाल शिला ने मंदिर की रक्षा की थी। मन रोमांचित हो गया। वहाँ खूब ठंड थी, ऑक्सीजन की कमी हो जाती है, इसलिए हम लोग एक छोटा ऑक्सीजन का सिलेंडर लेकर चले थे। पर इसकी आवश्यकता नहीं हुई। हम लोग हेलीकॉप्टर से सुरक्षित वापस आ गए, प्रभु की कृपा रही। केदारनाथ सचमुच स्वर्गलोक है, जहाँ देवताओं का वास है।

अगले दिन ४ मई को हम लोग जोशीमठ के लिए चले। रास्ते में चोपाता एक स्थान है, जिसे छोटा स्विट्जरलैंड कहा जाता है। वहाँ गाड़ी रोकी और प्रकृति की सुंदरता का आनंद लिया। वहाँ की घाटियों, पहाड़ियों, झरनों आदि के चित्र अपने कैमरों में कैद किए। भारत के हिमालय पर्वत इतने सुंदर होंगे, सोचा भी न था। शाम ६ बजे हम लोग श्रीबदरीधाम पहुँच गए। वहाँ जिस होटल में हमारे ठहरने का प्रबंध था, अच्छा था। कमरे ऊपर की मंजल में थे, वहाँ लिफ्ट से गए। शाम को नृसिंह देव मंदिर गए। शंकराचार्यजी की समाधि देखी।

*गंगोत्तरी*

पाँच मई की सुबह श्रीबदरीनाथजी मंदिर के दर्शन के लिए निकले। वहाँ ठंड बहुत थी, पर आसमान साफ था। पूजा-अर्चना की सामग्री लेकर हम मंदिर के प्रवेश-द्वार पर आ गए। लगभग डेढ़-दो घंटे में मंदिर के अंदर प्रवेश किया। वहाँ बदरीनारायण की मूर्ति, कुबेरजी की मूर्ति, लक्ष्मीजी की मूर्ति देखकर मन प्रसन्न हो गया। मंदिर की परिक्रमा की, हनुमानजी की मूर्ति को प्रणाम किया। वहाँ प्रसाद लिया व दान-पुण्य किया। वहाँ के पंडों, पुजारियों, गाइडों से श्रीबदरीनाथ धाम के बारे में जानकारी लीं। मंदिर में जो आरती गाई जाती है, वह एक मुसलमान भक्त द्वारा लिखी गई है। हमारे पास समय था, इसलिए हम फिर श्रीबदरीनाथजी के दर्शन करने गए। वहाँ खाना खाकर कुछ खरीदारी की। वहीं एक और दर्शनीय स्थान था—'माना गाँव'। २-३ किलोमीटर पैदल चलकर उनके दर्शन किए। वहाँ सरस्वती नदी और अलकनंदा का संगम है, जो अलग-अलग रंग की हैं। बहुत अद्‌भुत दृश्य था। वहाँ सरस्वती लुप्त हो जाती है।

छह मई को हम लोग बदरीधाम से सुबह ७ बजे वापस हरिद्वार के लिए टैक्सी से निकले। ८-१० घंटे की यात्रा कर ऋषिकेश पहुँचे, वहाँ लक्ष्मण झूला देखा। रात ९ बजे हरिद्वार पहुँच होटल में आराम किया। रात को भोजन कर सो गए। सात मई को शताब्दी एक्सप्रेस से हम लोग दिल्ली आ गए। वहाँ से एयरपोर्ट पहुँचे। दिल्ली से हमारी फ्लाइट दोपहर २ बजे की थी। हम शाम ५ बजे बंगलौर पहुँच गए। बंगलौर से मेरी दोनों बेटियाँ भी रात को हंपी एक्सप्रेस से हमारे साथ विद्यानगर तौरंगलू आ गईं। इस तरह आठ तारीख की सुबह हम अपने घर आ गए। ईश्वर को धन्यवाद दिया।

०-१/२ जे.एस.डब्ल्यू. टाऊनशिप
विद्यानगर तौरंगलू
जिला—बल्लारी-५८३२७५ (कर्नाटक)

# पावस के दोहे

• शिवमूर्ति सिंह

बरखा के संग उठ रही, सोंधी-सोंधी गंध।
धरा गुनगुनाने लगी, खुशबू के मधु छंद॥

पुरवा-प्रत्यंचा चढ़े, घन छौनों के तीर।
इंद्रधनुष चढ़ छूटते, तन-मन करें अधीर॥

मेघ-कपोलों पर उगी, चपला-चुंबन रेख।
पानी-पानी हो गया, नभ-दर्पण मुख देख॥

घिरी घटा बूँदें झरीं, नाच उठा मन मोर।
सोंधी-सोंधी गंध में, डूबी धरा अछोर॥

बरखा की लेखनी से, रस भीगे मधु छंद।
लिख-लिख है नभ भेजता, पढ़े धरा सानंद॥

आखेटक घन जब चले, लिये इंद्रधनु हाथ।
धैर्य-धर्म ने साथ ही, छोड़े तन का साथ॥

मेघ मृदंगी हो गए, मेघनाद के वाण।
वानर-सेना सा हरें, विरहीजन के प्राण॥

बरसे वारिद झूमकर, सरसे गिरि-वन-बाग।
सरसिज-सरसिज हो गए, सरसी-सरित-तड़ाग॥

आखेटक घन जब चले, दुंदुभि पर दे थाप।
मृगी-दामिनी हो विकल, भागी ले संताप॥

इंद्रधनुष ले हाथ में, बरखा के शर तान।
मार रहा नभ, मेदिनी मुदित झेलती बान॥

घन-मयूर-निर्झर हुए, प्रमुद-प्रफुल्लित गात।
गरजें, कूकें, झरें नित, हर्ष न हृदय समात॥

नदियाँ सावन की चढ़ी, तोड़ें सब तटबंध।
नहीं जवानी जानती, शील, शर्त, अनुबंध॥

बिछे गलीचे घास के, तरु-तोरण अभिराम।
ऋतुरानी की शान में, दादुर पढ़ते 'साम'॥

शस्य-श्यामला धरा का, गदराया हर अंग।
निर्निमेष नभ देखता, हुई तपस्या भंग॥

घन बरसे, तरसे नयन, प्रीतम हैं परदेश।
दंश दे रही दामिनी, काट रहा परिवेश॥

नभ-सागर के तट जुड़े, मेघों के गजराज।
मुक्त-मस्त क्रीड़ा करें, तनिक न आती लाज॥

'आश्लेषा' को अंक ले, भागा रसिया मेह।
विसुध अभागिन 'आर्द्रा', रही सिसकती गेह॥

अस्तंगत रवि-रश्मियों की तूलिका विचित्र।
लेकर नभ-पट पर प्रकृति, रचे मेघ के चित्र॥

कहीं मोर, हाथी कहीं, कहीं शशक अभिराम।
पल भर में रच रख दिया, अनगिन चित्र ललाम॥

पलक झपकते नभ हुआ, जंगल में तब्दील।
रंग-बिरंगे पशु लगें, चरने मीलों-मील॥

वारि भरे वारिद झुके, यथा वृक्ष फल-भार।
विनय, क्षमा औदार्य है, संतों के शृंगार॥

आत्मसात् कर सरित जल, सिंधु न होता क्षुब्ध।
संत-शैल पा गुण-रतन, होते कभी न मुग्ध॥

घिरे घोर घन, छिप गया, दिन में ही दिनमान।
ज्यों दुर्जन का संग पा, हों विनष्ट सद्ज्ञान॥

वारि भरे वारिद झुके, बरसे-सरसे खेत।
ईर्ष्या से जलता रहा, फूला-फला न बेंत॥

## नाप पावस रहा संयम

आ गए फिर घन निगोड़े आ गए
साँप सुधियों के रुधिर में
फिर लगे तिरने
हिला पर्वत, शिला पिघली
बह चले झरने
धैर्य की वल्गा हृदय के
हाथ से छूटी
कामनाओं के हुए
बागी नए घोड़े
निगोड़े आ गए घन।

वल्कलों पर लगा चढ़ने
इंद्रधनुषी रंग
सुरमई, श्यामल प्रकृति के
अंग-अंग अनंग
उर्वशी उभरी पुरुरवा प्राण-तल से
मेघ ने नभ के धरा से
सूत्र फिर जोड़े
निगोड़े आ गए घन।

श्याम मन में मेघ के
विद्युल्लता उभरी
नाप पावस रहा संयम
लिये सोनछरी
गंध तन-मन की भिनी वातावरण में
फिर प्रवासी ने चरण
निज गेह को मोड़े
निगोड़े आ गए घन।

सुपरिचित रचनाकार। 'ढाई आखर' (गीत-संग्रह); 'गीत मेरा कवच' (नवगीत-संगह); 'झाड़ मंडली का भूत', 'जब सपना टूटता है' (कथा-संग्रह); 'सूरज की आग' (कविता-संग्रह); 'एक अनवरत यात्रा' (दोहा-संग्रह); 'कुछ लोग एसे भी' (गाँव की डायरी) प्रकाशित।

साअ

डी-११, पी.डब्ल्यू.डी. फ्लैट
अलोपी बाग (पंजाबी कॉलोनी)
इलाहाबाद-२११००६
दूरभाष : ०८८५३९९१२२६

# लोककाव्य में कुँअर सिंह

● सुनील कुमार पाठक

सन् १८५७ के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम की शुरुआत बिहार की धरती पर बाबू कुँअर सिंह के नेतृत्व में हुई थी। १८५७ के राष्ट्रव्यापी जन-विद्रोह की अगुआई कुँअर सिंह ने लगातार आठ महीनों तक न केवल बिहार, बल्कि झारखंड, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश के बृहत्तर हिस्सों में की। जिस प्रकार मई १८५७ में मेरठ के सिपाहियों ने विद्रोह कर तत्कालीन मुगल शासन बहादुरशाह जफर का नेतृत्व स्वीकार किया, उसी प्रकार दानापुर की फौजी छावनी के विद्रोही सैनिकों ने २७ जुलाई, १८५७ को बाबू कुँअर सिंह से विद्रोह का नेतृत्व स्वीकार करने का अनुरोध किया और बगैर कुछ सोचे-विचारे पूरे उत्साह के साथ अस्सी वर्ष के इस बूढ़े शेर कुँअर ने सक्रिय नेतृत्व प्रदान करने का बीड़ा उठा लिया।

वीर कुँअर सिंह महान् योद्धा, कुशल प्रशासक और सच्चे राष्ट्रभक्त के रूप में सदैव याद किए जाते हैं। उस समय के सभी स्वतंत्रता-सेनानी और रण-बाँकुरे, यथा बहादुर शाह जफर, बेगम हजरत महल, नाना साहेब, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई और तात्या टोपे आदि, इन सबों से सामरिक रणनीति, त्वरित निर्णय-क्षमता, रण-कौशल आदि सभी दृष्टियों से वीर कुँअर आगे ही थे। दामोदर विनायक सावरकर ने लिखा है—''सत्तावन की क्रांति में अपनी युद्ध-पद्धति और रण-कौशल में कुँवर सिंह की बराबरी का कोई नहीं था।''

लोकनायक और महान् क्रांतिकारी बाबू कुँअर सिंह की वीरगाथाओं का लोकगीतों में भरपूर उल्लेख हुआ है। भोजपुरी लोकगीतों में बाबू कुँअर सिंह को क्षेत्रीय अस्मिता से जुड़ाव के कारण महात्मा गांधी से भी ज्यादा महत्त्व देते हुए उनकी वीरता और प्रेरक कथाओं को बड़े विस्तार से चित्रित किया गया है। लोकगीतों की विभिन्न धुनों और लयों में कुँअर सिंह पर विभिन्न रचनाएँ उपलब्ध हैं।

आज भी होली-गीतों की शुरुआत बाबू कुँअर सिंह को याद करते हुए ही की जाती है, ''बाबू कुँवर सिंह तेगवा बहादुर/बँगला में उँड़ेला अबीर।'' एक अन्य होली-गीत में लड़ाई में कुँअर सिंह की जीत की कामना की गई है, ''बाबू कुँअर सिंह तोहरे राज बिनु, अब न रँगइबो केसरिया। इतते आइल घेरि फिरंगी, उतते कुँअर दोऊ भाई। गोला-बारूद के चले पिचकारी, बिचवा में होला लड़ाई।'' होली के अवसर पर ही गाए जानेवाले 'जोगीड़ा' गीत में भी कुँअर सिंह की वीर-गाथा का उत्साहवर्धक उल्लेख है, ''बगसर में अब चले कुँअर सिंह, पटना जाकर ठीक। पटना में मजिस्टर बोले, करो कुँअर को ठीक। पटना अतना बात जो सुनलें कुँअर सिंह, बँगला देले फुँकवाई। गली-गली मजिस्टर रोव, लाट गए घबराई।'' 'चैता' गीत में भी कुँअर की वीरता का अद्‌भुत

सुपरिचित लेखक। हिंदी और भोजपुरी की दर्जनों पत्र-पत्रिकाओं में शताधिक रचनाएँ प्रकाशित-संकलित। आकाशवाणी तथा दूरदर्शन से भी साहित्यिक कार्यक्रमों की प्रस्तुति। संप्रति महामहिम राज्यपाल के जनसंपर्क पदाधिकारी, बिहार।

बखान है, ''आहे, बाबू हो कुँअर सिंह गदर मचावे, ए रामा गाँवा-गाई। गँवा-गँवा नेवता पठावे ए रामा गँवा-गाई।'' तथा ''कुँअर के लड़इया लड़े जाइब हो रामा, आरा नगरिया।'' 'बिरहा गीत' में भी अस्सी वर्षीय बाबू कुँअर की वीरता का गायन आज भी रोंगटे खड़ा कर देता है—''बबुआ ओहि दिन दादा लेले, तरूअरिया हो ना। बबुआ असी हो बरिस के उमिरिया हो ना। बबुआ थर-थर काँपे जेकर मुड़िया हो ना/ बबुआ बकुला के पाँख अस केसिया हो ना।'' पचरा-शैली के गायन में भी बाबू कुँअर सिंह की अस्सी वर्ष में जगी जवानी का उल्लेख अत्यंत प्रेरणादायी है—''धन भोजपुर, धन भोजपुरिया पानी/असियो बरिस में जहाँ आवेला जवानी/जेकर अस्सी बरिस में लवटल बा जवनियाँ/कहनियाँ बाबू कुँअर के सुनीं।'' एक धोबी गीत में कुँअर सिंह द्वारा लौह वस्त्र सिलवाने का उल्लेख मिलता है—''बाबू कुँअर सिंह पछिम से जब पाँयत कइलीं/ पवना में डेरा गिरवलीं ना। लोहा के जामा सिअवलीं कुँअर सिंह तम्मन बंद लगवलीं ना।'' शिशु-जन्म के समय होनेवाले पँवरिया नृत्य के अवसर पर पँवरिया द्वारा गाए जानेवाले गीत में भी कुँअर की वीरता का विस्तृत और अनुपम उल्लेख है—''भर भोजपुर में कुँअर बिरजलें, रीवाँ रहल सरनिया नूँ/हाट-बजरिया कवन विसारे, के कहल सब गुनवा नूँ/बेतिया अवरू दरभंगा बाड़े, अउर बाड़े टेकारी नूँ/जयपुर-जोधपुर दूर बसेलें, छोटे राजा मझउली नूँ/भोजपुर में डुमराँव बसेले, ऊहो बाड़े फिरंगिये नूँ/सबे बिसेन मिली घुस लुकइलें, बाबू पड़ले अकेले नूँ/ जल्दी-से-जल्दी कागज मँगाव, जल्दी पूरजा लिखाय नूँ/परयाग जी में उतरे सिपहिया, सबके कुरसी दिहलसि नूँ/उहाँ से चिट्ठी जगदीशपुर अइलें, सुन ल अमर सिंह भाई नूँ/पतिया देखि अमर सिंह रोअलें, छाती मुक्का मरलनि नूँ/होके सवार कुँअर अमर सिंह, बिज्जू घोड़ा कसवलनि नूँ/ऊहाँ से डेरा टेकारी में राखल, रानी अकेले बेचारी नूँ/बाबू साहेब गुनावन करीला, अब का करीं अमर सिंह नूँ।''

मल्लाह लोग भी उनका कीर्ति-गायन मानर-शैली में करते हैं—''घोड़वा चढ़ल जब चललन कुँअर सिंह हो बाबू, धरती पर मचल हो कुलेल/ मोंछ के उठान देख ताना मारे घोड़वा, खेलेला जवनिया गुलेल/

जबहिं कुँअर सिंह तनलें लगमियाँ, घोड़ा उड़ी चललन आकास/फर-फर उड़इत विजय के पतखवा, झनर-झनर बाजे तरूआर/कंकरी-अस फाटे अँगरेज के करेजवा, बाबू हो कुँअर सिंह के बार/पीछे-पीछे चलइन हजारो-लाखों सेनमा, दुसमन के लागेला पिआस।''

दिन भर की खेती-बारी से निबटने के बाद रात में ढोल-झाल पर पद्यात्मक कथा सुनने की परंपरा भोजपुर क्षेत्र में रही है। एक कथा-गीत 'पँवारा' में कुँअर सिंह की शौर्य-गाथा का उल्लेख इस प्रकार है, ''गंगा माता, गंगा देवी, गंगा सरन तोहार/सात तरी हेल कर गंगा, तू बड़ी संसार/हूकुम दीन का ऐसा होय, एक दिन दुनिया पैदा होय/ जनम युग लिये न कोई, हँसि-खेलि के माटी होय/कौन-कौन बाबू बाँधे तरूआर, श्रीकिसुन सिंहवाले नाम/दरभंजन सिंह वाके नाम, कुँअर सिंह बाँधे तरूआर/अँगरेज के देहिया देव उड़ाय, इतना बात लाट सुना'''भोजपुर मानी बाबू है, हन-हन तेगा मारता है/सोन नदी में धोता है, विक्टोरिया को मेरा सलाम।''

विभिन्न प्राकृतिक गीतों में भी कुँअर सिंह के शौर्य और पराक्रम का बड़ा मार्मिक उल्लेख मिलता है। 'कजरी' धुन में भी कायरपन छोड़ युद्ध के मैदान में कुँवर सिंह का साथ देने के लिए अपने प्रियतम को प्रेरित करती एक वीरांगना कहती है—''जाहु-जाहु पिया तूँ कुँअर के लड़इया में, छोड़ी देहु अब कदरइयो, हे हरि/होके मरद मरदानी देखाव, अब देसबा में होखता लड़इया, हे हरि/नाहीं त समर छोड़ घर में बइठ जाहु, औरत के पहिर लुगरिया, हे हरि/पहिर के साड़ी-चूड़ी मुँहवाँ छिपाई लेहु, नाहीं त रन में लड़इया, हे हरि।''

खेल-गीतों में भी कुँअर सिंह की मर्दानगी को याद करते आम जन अपना जोश बढ़ाते दिखते हैं। एक कबड्डी-गीत भोजपुर क्षेत्र में खूब प्रचलित है—''चल कबड्डी आरा। संतावन गोली मारा/मारा, मारा-मारा।'' चिक्का खेलने के दौरान भी लोग बोलते गाते हैं, ''बाँसे फराठी/बाबू कुँअर सिंह के लाठी/झनाझन तरूआर/झनाझन तरूआर।''

लोकगीतों और लोकगाथाओं में कुँअर सिंह से संबंधित विभिन्न गीत तो मिलते ही हैं, भोजपुरी शिष्ट साहित्य में भी कुँअर सिंह पर कई प्रबंध काव्य, नाट्य रचनाएँ और स्वतंत्र कविताएँ देखने को मिलती हैं।

कुँअर सिंह के ही समकालीन हथुआराज के राजकवि तोफा राय ने घनाक्षरी के पचास छंदों में 'कुँअर पचासा' की रचना की, जिसमें वीर काव्य के अनुकूल वर्ण-विन्यास, रस-विधान और काव्य-सौष्ठव देखते ही बनता है। 'कुँअर पचासा' में बीबीगंज (शाहाबाद) की लड़ाई का वर्णन है। कुँअर सिंह की वीरतापूर्ण विजय-कथा के साथ-साथ उनके युद्ध-कौशल और शौर्य का भी वर्णन अत्यंत उत्कृष्ट बन पड़ा है। यथा ''एक-एक पेड़ पीछे एक-एक वीर जवान, तेज संगीन खाड़ा गही छिपी बइठल नूँ/दन्न-दन्न गोली चले, तोप धाँय-धाँय, झमझम मेघ करै लौका घहरि लौकल नूँ/'''झूमत कुँअर बाँका वीर रन बीच जैसे, हाथी-दल कोपी सिंह फाँदी पइठल नूँ।''

बाबू कुँअर सिंह के राज्याश्रित कवि रामकवि ने भी कुँअर सिंह के पराक्रम का बड़ा विशद वर्णन किया है। कुँअर सिंह के समकालीन होने की वजह इनकी रचनाओं में कथ्य की मौलिकता तो है ही, काव्य की रुचिरता भी है—''जैसे मृगराज-गजराजन कै झुंडन पै प्रबल प्रचंड सूँड़ खंडत उदंड है/जैसे बाजि लपकि लपेट के लवान दल, दलमल डारत प्रचारत विहंड है/कहै रामकवि जैसे गरुड़ गरब, गहि अहि कुल दंडि-दंडि मेटत घमंड है/तैसे ही कुँअर सिंह कीरति अमर मंडि, फौज फिरंगानी की करि सु खंड-खंड है।''

'कुँअर विजयमल' भी बहुत प्रसिद्ध गाथा-काव्य है। इसका समय भी 'सोरठी बृजभान' के बाद का है। डॉ. ग्रियर्सन ने इसको ११३८ पंक्तियों में 'जर्नल ऑफ द एसियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल' (भाग-१, संख्या-१, सन् १८८४) के ६४-६५ पृष्ठों पर छपवाया है। यह शाहाबाद (बिहार) से प्राप्त पाठ था। इसकी पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—''रामा उहाँ सूबा साजेले फउदिया हो ना/रामा धुरिया लागेला असमनवा हो ना/रामा जवा बाजे जुझरवा हो ना/रामा बोलि उठे देबी दुरगवा हो ना/कुँअर इहे हवे मानिक पलटनिया हो ना/रामा घेरि लिहले सभ फउदिया हो ना/रामा बाजि गइले लोहवा जुझारवा हो ना/रामा मारे लागल कुँअर विजइया हो ना/रामा देबी दुरूगा कइलीं छतरछहिया हो ना/रामा बाचि गइले राजा मानिकचंदवा हो ना/रामा उनहके नाक काटि घलले हो ना/रामा उन्हके बहिया काटि घलले हो ना/रामा बाँधि देले घोड़ा के पिछड़िया हो ना/रामा चलि गइले राजा मानिकचंदवा हो ना।

वीर कुँअर सिंह को चरितनायक बनाकर भोजपुरी काव्य में प्रबंध काव्यों एवं नाट्य-ग्रंथों की भी रचना हुई है। श्री कमला प्रसाद मिश्र 'विप्र' का खंडकाव्य 'वीर बाबू कुँअर सिंह', हरेंद्रदेव नारायण का महाकाव्य 'कुँअर सिंह', चंद्रशेखर मिश्र का महाकाव्य 'कुँअर सिंह', सर्वदेव तिवारी 'राकेश' का महाकाव्य 'कालजयी कुँअर सिंह', हीरा प्रसाद ठाकुर के काव्यग्रंथ 'वीर कुँवर सिंह', दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह नाथ की नाट्य-रचना 'बाबू कुँअर सिंह' आदि कृतियाँ भोजपुरी साहित्य की अनमोल धरोहर हैं। भोजपुरी साहित्य में जितना बाबू कुँअर सिंह पर लिखा गया है, उतना किसी भी अन्य ऐतिहासिक व्यक्तित्व पर नहीं रचा गया। सन् १९५७ में प्रकाशित हरेंद्र देव नारायण का महाकाव्य 'कुँवर सिंह' महाकाव्यीय निकष पर एक अत्यंत सफल रचना है। इस लोकप्रिय महाकाव्य के द्वितीय सर्ग की पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—''हड्डी ठोस पेसानी दमकत पुष्ट वृषभ कंधा बा/अस्सी के बा उमर भइल, का कहे बूढ़-अंधा बा/सिंह चलन, रवि जलत नयन, जुग सुगठित चंड भुजा बा/अइसन डोलेला जइसे, डोलेला विजय-पताका।''

पं. कमला प्रसाद मिश्र 'विप्र' के खंड काव्य 'वीर बाबू कुँअर सिंह' में कुँअर सिंह का अंग्रेजों के प्रति रोष देखने लायक है, ''जागल जोश-रोष बाबू का/जमल लहू गरमाइल रे/आँखियन से बरिसल अँगार/मुँह पर

खुनवाँ बढ़िआइल रे।'' पं. चंद्रशेखर मिश्र रचित 'कुँअर सिंह' भोजपुरी का गौरव-ग्रंथ है। अनुपम भाव-सौंदर्य और काव्य-कला की दृष्टि से सौष्ठवपूर्ण इस कृति को हिंदी के किसी भी उत्कृष्ट महाकाव्य के समतुल्य विवेचित किया जा सकता है। कुँवर सिंह की वीरता और प्रताप का उल्लेख करते हुए चंद्रशेखरजी की पंक्तियाँ हैं—''शेष परान रहा जबलें किछु, लालि रही लोहुआ कतरे में/मैल न लागन बाप की पाग, न माई के दाग लागल अँचरे में/काहे ना भाई गुमान करई, छिपलै अस लाल जहाँ कचरे में/झूमत बा इतिहास जहाँ, तँह कइसे भूगोल रहे खतरे में।''

कुँअर सिंह के राज में गाँवों में चूड़िहारिनों का आना बंद हो गया है। नई चूड़ियाँ बहुओं ने पहनना छोड़ दिया है। कवि-कल्पना की यह उड़ान चंद्रशेखरजी की मौलिक उद्‌भावना है, जहाँ काव्योत्कर्ष अद्वितीय है—''नेवता बलि बेदी-क छोड़ि के, औरन कऽ कबहूँ यहँ आवत नाहीं/मारू-जुझारू बजइँ बजना, केउ दूसर राग बजावत नाहीं/ छोड़ि के बीर भरी कविता-रस दूसर में केहु गावत नाहीं/ छूरी-कटारी बिकइँ सगरउँ चुरिहारिनि गाउँ में आवत नाहीं।''

अपनी आहत भुजा को बाबू कुँअर सिंह ने अपनी ही तलवार से भंजित कर माँ गंगा को समर्पित कर दिया था। इस मार्मिक प्रसंग का चंद्रशेखरजी की लेखनी ने अद्‌भुत वर्णन किया है—''छाँटलि बाँह गिरी छपसे, किछु दूरी बनी तब लाल निसानी/भोजपुरी भुइयाँ हुलसी, कोखिया जनमा बेटवा बलिदानी/भागीरथी से कहइ धरती, जब लेइ लहरा नदिया इतिरानी/बोलऽ ई नीर तोहार हउ कि, हमरे बेटवा के कटार क पानी ?''

सर्वदेव तिवारी राकेश का महाकाव्य 'कालजयी कुँअर सिंह' भोजपुरी प्रबंध काव्यों की परंपरा में एक 'मील का पत्थर' माना जाता है। इसकी पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—''भेदिन भेदले माई के खोजले, सोझले गोरन संग लड़ाई/ठीक बुझाइ, कि कुँवर आइल, लाल कपीस के भेख बनाई।'' कुँअर सिंह में यहाँ भगवान् बजरंगबली की छवि देखी गई है।

बाबू कुँवर सिंह और अंग्रेजों के युद्ध को कवि राकेश ने जिस ओज और तेज के साथ वर्णित किया है, उसमें आलंकारिकता एवं ध्वनि काव्य की अपूर्व छटा देखते ही बनती है, ''खंड गिरे, मुंड गिरे, झुंड-झुंड तुंड गिरे/कुंड भरे रक्त के प्रचंड चंड जारी बा/खंड-खंड भंड-महामंड हंड-दंड परे/भड्‌ड-भड्‌ड फटफटात तोबन के लारी बा।'' हीरा प्रसाद ठाकुर के काव्य-ग्रंथ 'वीर कुँवर सिंह' में कुँवर सिंह की वीरता का बखान इन शब्दों में किया गया है—''लह-लह धरती खूब अघइली/भइल सोर जोरे मयदान/रहे तेइस अप्रील महीना/विजय पताका उड़े असमान।'' भुवनेश्वर प्रसाद श्रीवास्तव 'भानु' के अप्रकाशित महाकाव्य के कुछ अंश 'कुँअर बावनी' के नाम से प्रकाशित हुए हैं, जिससे भोजपुरी वीर काव्य की परंपरा समृद्ध हुई है। उनके काव्य-ग्रंथ की पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—''ओरे माई-लॉड कहि गोरन के गोड़ छूटे/भागे भहरात छछनत लेले के/जीभ अस काल के निकलि करे लप्प-लप्प/छप्प-छप्प छाँटि छीटे रन में फिरंगी के।''

कुँअर सिंह पर रामाकांत द्विवेदी 'रमता' की भी रचना उत्कृष्ट काव्य का नमूना है—''झाँझर भारत के नइया खेवनहार कुँअर सिंह/आजादी के सपना के सिरिजनहार कुँअर सिंह/रहे मोछ ना ऊ बरछी के नोख रहे रे/तरूआरे अइसन, तेगा अइसन चोख रहे रे/कसल सोटा अइसन देह मनसोख रहे रे/अइसन वीर जनमावल धनि कोख रहे रे/ओह बुढ़ारी में जवानी के उभार कुँअर सिंह/अलबेला रे बछेड़ा असवार कुँअर सिंह/अस्सी बरिस के भोजपुरी चमत्कार कुँअर सिंह/लक्ष्मीबाई-तँतिया-नाना के इयार कुँअर सिंह।''

सन् १९८२ में रचित डॉ. प्रभाकर पाठक का खंड काव्य, 'वीर कुँअर सिंह' सर्गों में निबद्ध प्रबंधकाव्यीय गरिमा से परिपूर्ण है। इस कृति का अब तक प्रकाशित नहीं हो पाना, भोजपुरी काव्य-जगत् के लिए विस्मयकारी है। कुँअर सिंह की घमासान लड़ाई का वर्णन डॉ. पाठक की पंक्तियों में काव्यात्मक सौंदर्य की दृष्टि से भी अप्रतिम है, ''बढ़ले कुँअर तेरूआर लेके आपन हो/धरती से सरग ले जोन्हिया छिंटइले/चमकल बिजुरी कि लावका लउकले हो/हाय दुसमन लोग के अँखिया मुंदइले/अगिया बरल कि जरल दुपहिरया हो/लुहिया लागल अँगरेज थहरइले/जोन्हिया, बिजुरिया, अगिनिया के साथ देखी/देखी तेरूआर दुसमन घबरइले।'' इनके अतिरिक्त महेंद्र शास्त्री, श्यामजी सिंह मधुप, हरिहर सिंह, राजनाथ पाठक प्रणयी, सत्यनारायण लाल, अविनाश चंद्र विद्यार्थी सहित अन्य कई कवियों ने कुँवर सिंह पर बड़ी धारदार कविताएँ लिखी हैं।

कुँअर सिंह भोजपुरी क्षेत्र के ऐसे काव्य-नायक रहे हैं, जिनका उदात्त चरित्र कवियों और लोकगीतों में पूरी गरिमा में अभिव्यंजित हुआ है। भोजपुरी काव्य में कुँअर सिंह पर जितने काव्य-ग्रंथ, लोकगीत, कविताएँ व गीत, नाट्य, रचनाएँ आदि उपलब्ध हैं, उतनी शायद ही किसी लोकभाषा के काव्य में उनके किसी महानायक पर लिखी गई होंगी। लोकभाषा भोजपुरी में वीरकाव्य की जो परंपरा है, उसे इसके लोकगीतों और शिष्ट साहित्य, दोनों ने पर्याप्त रूप से प्रतिष्ठित और गौरवान्वित किया है। कुँअर सिंह भोजपुरी क्षेत्र के ही नहीं, सन् १८५७ के स्वतंत्रता-संग्राम के ऐसे वीर-बाँकुरे रहे हैं, जिन्हें भारतीय इतिहास में और अधिक समादर और गौरव मिलना चाहिए था। भोजपुरी लोकभाषा और साहित्य के साथ-साथ, इस क्षेत्र के महापुरुषों एवं व्यक्तित्वों को पर्याप्त ख्याति और प्रतिष्ठा मिल सके, इसके लिए इस क्षेत्र की विरासतों, सांस्कृतिक परंपराओं, सकारात्मक प्रतिरोधी क्षमताओं, संघर्षों आदि का पुनर्मूल्यांकन अत्यंत आवश्यक है। स्वतंत्रता-संग्राम में बाबू कुँअर सिंह के योगदान का अध्ययन एक ऐसा सार्थक प्रयत्न है, जिससे यह स्पष्ट हो सकेगा कि भोजपुरी क्षेत्र की व्यापक स्वातंत्र्य-चेतना सामाजिक दृष्टि से भी जाति, धर्म एवं लिंग आदि के समस्त विभेदों से ऊपर उठकर कितनी समरस, समतामूलक और प्रगतिशील रूप में संचरित हुई है।

साअ

जी-३, ऑफिसर्स फ्लैट,
भारतीय स्टेट बैंक के समीप,
न्यू पुनाई चक, पटना-८०००२३
दूरभाष : ०९४३१२८३५९६

बाल-कविता

# शादी के दिन का इंतजार

● हरीश कुमार 'अमित'

## आलू

पूरे साल है मिलता आलू,
हर सब्जी में डलता आलू।
छोटा-बड़ा, गोल या मोटा,
तरह-तरह का होता आलू।
है कोई दुनिया में ऐसा,
जिसको नहीं है भाता आलू।

ऐसा नहीं कि बस सब्जी ही,
बन सकता है अपना आलू।
पराँठे, पकौड़े, चिप्स, रायता,
कई रूपों में ढलता आलू।

## भोलूराम का ब्याह

कल है भोलूराम का ब्याह,
मन में उनके भरा उत्साह।
यही तमन्ना भोलूजी की,
सब कहें—भई वाह, भई वाह!
कसर न आए कोई निकल,
ध्यान रख रहे वे पल-पल।
उनको नहीं जरा भी चैन,
बात-बात पर हों बेचैन।
उनकी चिंता नहीं बेकार,
आखिर ब्याह होना इक बार।
बेचैनी से कर रहे वे,
शादी के दिन का इंतजार।

## अच्छा लगता है

सुबह देर तक मुझको सोना अच्छा लगता है,
बिस्तर में लेट अलसाना अच्छा लगता है।
करते रहते मना मम्मी-पापा मगर फिर भी,
खट्टी इमली-मीठा चूरन खाना अच्छा लगता है।
लगता मुझे बहुत प्यारा छोटा-सा भइया,
लेकिन जब-तब उससे लड़ना अच्छा लगता है।
सब कहते हैं बात-बात पर मत करो रूठा,
बार-बार पर रूठ जाना अच्छा लगता है।

## भूख का इलाज

नन्हा चूहा जाने लगा स्कूल,
इक दिन खाना घर गया भूल।
हुई आधी छुट्टी दो घंटे बाद,
खाने की तब उसे आई याद।
हुई हालत खराब भूख के मारे,
खाना खाते थे दूजे बच्चे सारे।
नन्हा चूहा कुछ लगा सोचने,
किताब लेकर फिर लगा कुतरने।

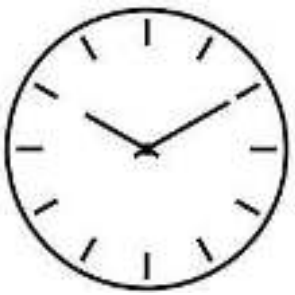

## दीवार घड़ी

बड़ी निराली यह दीवार घड़ी,
लगता है अपनी जिद पर अड़ी।
वैसे चलती रहती है दिनभर,
रुक जाती है सात तीन पर।
इस कारण हो जाती गड़बड़,
हों सब लेट, करें फिर हड़बड़।
करवा लेंगे इसको ठीक कल,
यही सोचते दिन जाते निकल।

## गरमागरम रोटियाँ

होती हैं मजेदार गरमागरम रोटियाँ,
हर एक का प्यार गरमागरम रोटियाँ।
भूख लगी हो जब-जब भइया जोरों की,
लगें स्वाद का भंडार गरमागरम रोटियाँ।
दिखती हैं फूली हुई गोलगप्पे-सी,
सोंधी-सोंधी खुशबूदार गरमागरम रोटियाँ।
भरे किसी का पेट एक ही खाने से,
कोई खाए तीन-चार गरमागरम रोटियाँ।

सुपरिचित लेखक-कवि। अबतक एक कविता-संग्रह, एक कहानी-संग्रह, एक गजल-संग्रह, एक बालकथा संग्रह, एक विज्ञान उपन्यास, तीन बाल-कविता-संग्रह एवं विभिन्न विधाओं में सौ से अधिक रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। छोटे-बड़े दर्जन भर सम्मान प्राप्त। कई रचनाएँ पुरस्कृत।

३०४, ए.एम.एस. ४,
केंद्रीय विहार, सेक्टर ५६,
गुरुग्राम-१२२०११ (हरियाणा)
दूरभाष : ९८९९२२११०७

## पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक प्राप्त हुआ। आलेख 'एक महीना ऐसा भी' में डॉ. मालती शर्मा ने अधिकमास, लोंद का महीना के विषय में बहुत ही विस्तार से लिखा है। यह क्यों पुरुषोत्तम मास कहलाया, उसमें दान-पुण्य, पूजा-पाठ करना चाहिए। इस अंक में 'भारतीय नवजागरण की अद्‌भुत मिसाल : सर सी.वाई. चिंतामणि' तथा 'एक संपूर्ण आलोचक का आलोचना कर्म' आलेख पढ़कर दो महान् विभूतियों के बारे में जानने को मिला। स्व. पं. रामनारायण उपाध्यायजी की जन्मशताब्दी पर उन्हें स्मरण किया। 'दादा की भीनी-भीनी यादें' पढ़ा, संस्मरण अच्छा लगा। लोक साहित्य के अंतर्गत 'लोककंठ से निकली बरखा की फुहार' में सुधा तैलंग ने बुंदेलखंड में बरसात में जो लोकगीत गाए जाते हैं, अच्छा वर्णन किया है। 'खबरें चौमासे के आवन की आई/गौरैया धूरा में गई लोट-पोट।' बी.एस. जौहरी की कविता 'जोश में होश कहाँ रहता है', बरसों पेड़ों को बहुत बेरहमी से हमने काटा है, एक नई कार के लिए घर के बाहर का बाग उजाड़ा है। पूरा अंक पठनीय है।

***—विनोद शंकर गुप्त, हिसार***

आपके कुशल संपादन में प्रकाशित होनवाली देश की ख्याति प्राप्त एवं चर्चित साहित्यिक पत्रिका 'साहित्य अमृत' का अगस्त अंक बहुत ही जोरदार निकाला गया है। संपादकीय में 'राजनेताओं की नैतिकता' सटीक एवं महत्त्वपूर्ण है। प्रतिस्मृति में मदनमोहन मालवीयजी के आलेख एवं स्मरण में संतोष शुक्लाजी का आलेख लाजवाब हैं। विदेश में हिंदी के विद्वानों एवं उनके द्वारा किए गए कार्यों का सविस्तार वर्णन किया गया है, इतने अधिक संख्या में आलेख संग्रह कर उन्हें एक साथ प्रकाशित करना प्रशंसनीय कार्य है। आपका संपादन गजब का है। पत्रिका के इस अंक हेतु आपके द्वारा बहुत श्रम किया गया, यह दृष्टिगत होता है। यह अंक एक पूरा शोध बन गया है, अंक संग्रहणीय बन पड़ा है। एक बेहतरीन अंक के लिए संपादक मंडल व टीम को बधाई।

***—राजीव नामदेव 'राना लिधौरी', टीकमगढ़ (म.प्र.)***

पिछले १४ वर्षों से पत्रिका से कुछ ऐसा जुड़ाव हो चला है कि एक भी अंक न मिले तो मेरी तो खैर छोड़ो, परिवार के सदस्य भी तिलमिला उठते हैं। बिटिया खुशी तो यहाँ तक कह देती है, ''पापा, मुझे नहीं पता, कहीं से भी, कैसे भी लाओ, पत्रिका मँगवाओ।'' पत्रिका हर आयुवर्ग के लिए रुचिकर, ज्ञानवर्धक व संग्रहणीय है। कितनी भी विधाओं को एक साथ सँजोए गागर में सागर भरने जैसी है। मई अंक में रंजना किशोर को 'अपना-पराया', जून में रुचिरा शर्मा को 'रंग' व जुलाई में लवलेश दत्त को 'उधार' जैसी सुंदर रचनाओं (कहानियों) के लिए बहुत-बहुत बधाई। कलेकर भी पत्रिका की जान है, जो हर बार खास (जुदा) बन पड़ता है। स्वतंत्रता दिवस की हार्दिक शुभकामनाओं के साथ।

***—ब्रह्मानंद खिच्ची, महेंद्रगढ़ (हरि.)***

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक प्राप्त हुआ। आलेख 'भारतीय नवजागरण की अद्‌भुत मिसाल : सर सी.वाई. चिंतामणि' वर्तमान की पत्रकारिता को आईना दिखाता है। ब्रिटिश काल में चिंतामणि ने ऐसी पत्रकारिता की, जो आज यह चाटुकारिता बनकर रह गई है। हमारे पत्रकार बंधु कुछ सीख सकें, लेखक हेरंब चतुर्वेदी का यही आशय है। वैसे ही अरुण लता ने 'एक संपूर्ण आलोचक का आलोचना कर्म' प्रस्तुत किया है। प्रो. रामस्वरूप चतुर्वेदी के संपूर्ण व्यक्तित्व का आकलन इस आलेख में है। 'छायावाद' को 'शक्तिकाव्य' में प्रस्तुत करनेवाले आलोचक चतुर्वेदी को सादर नमन। राकेश भ्रमर की कहानी 'राजरानी की गाय' संवेदनाओं से भरपूर है। यह हर उस घर की कहानी है, जिसमें एक बूढ़ी गाय है। इस संबंध में पंचायत को विचार कर कुछ सकारात्मक राह निकालनी चाहिए। सिर्फ गो-हत्या आक्रोश की खाली-पीली बात से कुछ हासिल नहीं होने वाला। इसी प्रकार विजय शंकर पांडे की 'नींद भर सोए' सकारात्मक व भली कहानी है।

***—चितरंजन भारती, पंपग्राम (असम)***

सर्वप्रथम सहर्ष आभार कि आपके द्वारा मेरे यात्रा-वृत्तांत 'मनोहारी केरलम्' को 'साहित्य अमृत' के मार्च अंक में प्रकाशित किया गया। साथ ही प्रत्युत्तर में हुई देरी के लिए क्षमा भी चाहूँगी। 'साहित्य अमृत' से मेरा नाता विद्यालय के दिनों से ही है, क्योंकि मेरी माताजी वर्षों से पत्रिका की पाठक हैं। जब मैं कॉलेज में आई तो 'साहित्य अमृत' ने मेरी कविताएँ प्रकाशित कर मेरे लेखन को प्रोत्साहित किया। 'यात्रा-वृत्तांत' जैसी गद्य विधा में मेरी लेखनी के प्रयास को प्रकाशन योग्य समझ आपने जो उत्साहवर्धन किया है, उसको प्रकट करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। आपका निरंतर आशीर्वाद व प्रोत्साहन मिलता रहेगा, इसी आशा के साथ मेरी ढेर सारी शुभकामनाएँ स्वीकार करें।

***—रेणुका बड़थ्वाल***

'साहित्य अमृत' का जून अंक अपने हरीतिम आवरण में रचनाओं की खुशबू भी दे गया। 'एक कुत्ते की डायरी' वफादारी का सबूत दे आदमी को अहसान-फरामोश होने पर सार्थक व्यंग्य करता है। लक्ष्मीनिवास झुनझुनवाला का 'भारतीय दर्शन में आनंद', प्रमोद कुमार 'सुमन' का 'छुटकारा', अशोक चक्रधर का 'लघुता में एक महामानव : बालकवि बैरागी', आनंद शर्मा का 'क्या मृत्यु का पूर्वाभास संभव है', राजशेखर व्यास का 'विक्रम के पराक्रम का सूर्य', गोपाल चतुर्वेदी का 'पत्थर फेंको, सुखी रहो', रेखा लोढ़ा 'स्मित' की 'कसक', प्रेमपाल शर्मा का विश्वप्रसिद्ध जंतुविज्ञानी डॉ. रामेश बेदी : कुछ संस्मरण', विनय मिश्र की गजलें अच्छी लगीं, उत्प्रेरक भी। संपादकीय में सामयिक वर्णित विचारों ने एक नई सार्थक सूझ दी। पढ़ने की जिज्ञासा, पुस्तकों का प्रेम, प्रभाव कैसे भूला जा सकता है। आदमी अपने विचारों, व्यवहारों में ही तो जिंदा रहता है। भावनाओं का मर जाना जिंदगी का मर जाना है। मैं बिना पानी के शायद जी भी लूँगा चार दिन, जल की खातिर छटपटाती मछलियों का क्या करूँ? भाव ही तो घाव देते हैं और सद्‌भाव से ही उसका इलाज होता है। सभी रचनाकारों को बहुत-बहुत धन्यवाद।

***—नंद किशोर तिवारी, वाराणसी***

'साहित्य अमृत' के जुलाई अंक का मुखपृष्ठ अत्यंत आकर्षक तथा मर्मस्पर्शी है। बरसात में पढ़ने जाने के लिए घर से निकलने का आनंद कुछ

और ही होता है। छोटे छात्र की खुशी उसकी आंतरिक प्रसन्नता की मुखर अभिव्यक्ति है। चित्रकार को बहुत सी बधाई। वह दिन कितना सुखद और शुभद होगा, जब प्रत्येक छात्र के मुख पर ऐसी मुसकराहट दिखेगी। विजय शंकर पांडेय की कहानी पसंद आई। मालती शर्मा की मलमास, अधिकमास, पुरुषोत्तम मास की पौराणिक, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक विवेचना महत्त्वपूर्ण तथा उपयोगी है। एम.डी. मिश्रा 'आनंद' की कहानियाँ किसी विशेष लक्ष्य को लेकर लिखी जाती हैं। उनकी कहानी 'उड़ान' गोसेवा में महत्त्वपूर्ण एवं समाजोपयोगी पक्ष की सार्थक उपस्थिति है। अरुण होता ने 'एक संपूर्ण आलोचक का आलोचना कर्म' नामक लेख में प्रो. राम स्वरूप चतुर्वेदी के आलोचना कर्म को प्रामाणिक रूप से प्रस्तुत किया है। साहित्य के विद्यार्थियों तथा विद्वानों के लिए प्रो. चतुर्वेदी उदाहरण हैं। गोपाल चतुर्वेदी के हास्य व्यंग्य में पूर्ववत् बेबाकी और यथार्थ का सम्मिश्रण है। श्रीराम परिहार के ललित निबंध 'पावस और सर्जन' ने मन को स्पर्श किया। प्रकृति और साहित्य उतना सटीक तालमेल कम ही निबंधों में मिल पाता है। सुधा तैलंग के लोक साहित्य के परिप्रेक्ष्य में लेख 'लोककंठ से निकली बरखा की फुहार' अच्छा लगा। मेघदूत के उद्धृत श्लोक में वर्तनी विषयक त्रुटियाँ हैं, इन्हें सुधारना चाहिए, जैसे प्रकाशित आसाढस्य होना चाहिए आषाढ़स्य। प्रकाशित मेघमष्लिष्ट होना चाहिए मेघमाश्लिष्ट, प्रकाशित प्रेक्षणीय होना चाहिए प्रेक्षणीय, प्रकाशित ददर्ष होना चाहिए ददर्श।

***—सुशील कुमार पांडेय, सुल्तानपुर (उ.प्र.)***

'साहित्य अमृत' के अगस्त अंक ने मेरी मनोकामना पूर्ण कर दी। हिंदी की आन-बान-शान-स्वाभिमान को बढ़ावा देनेवाला आपका सार्थक प्रयास सराहनीय-अभिनंदनीय और अनुकरणीय है। विदेशों में हिंदी की बढ़ती लोकप्रियता और उसका फलना-फूलना-फैलना गर्व का विषय है। एक ही विषय पर ढेर सारी सामग्री इकट्ठी करना संपादक मंडल की योग्यता, परिश्रम को दरशाता है। हिंदी अगर हर हिंदुस्तानी के हृदय में बस जाए और देश का बच्चा-बच्चा भी हिंदी बोलने में धन्यता महसूस करे तो हम दुनिया में सर्वाधिक बोली जानेवाली चीनी भाषा को भी मात दे सकते हैं। राष्ट्रमंडल में हिंदी शामिल हो, यही सपना शेष है।

बहनजी मृदुल कीर्ति मेरे तीन प्रिय विषय हैं—राष्ट्र, राष्ट्रपिता, राष्ट्रभाषा। हिंदी भाषा मेरे लिए मातृभाषा के समान सम्माननीय, अनुकरणीय और वंदनीय है। 'साहित्य अमृत' का हिंदी भाषा को समर्पित अगस्त अंक मेरे लिए संग्रहणीय है। इसमें प्रकाशित आपके आलेख ने विशेष प्रभावित किया। चिंतन-मंथन योग्य सुलेख में सकारात्मक सोचवाली सार्थक बातों और सही, सटीक जानकारी का सुंदर संगम देखने को मिला। विदेश धरती पर हिंदी का फलना-फूलना-फैलना संतोषजनक, साश्चर्यजनक है हमारे लिए। अंग्रेजी को आवश्यकता से अधिक अहमियत देना और हिंदी को हेयदृष्टि से देखने का दृष्टिकोण बदलने की सख्त जरूरत है। मेरा तात्पर्य यह है कि हिंदी को उचित आदर, मान-सम्मान मिले। हिंदी हर हिंदुस्तानी के हृदय में बसे। अंत में सुपाठ्य आलेख लिखने के लिए दिल से साधुवाद!

***—अशोक वाधवाणी, गांधी नगर (महा.)***

विश्व में हिंदी की वर्तमान स्थिति पर केंद्रित 'साहित्य अमृत' पत्रिका का अगस्त अंक पढ़ने को मिला। बहुत ही संतोषजनक लगा कि भारतवंशी विश्व में हिंदी का परचम लहराने में सक्रिय कार्य कर रहे हैं, जबकि भारत में तो अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा पाने के लिए गाँव से लेकर छोटे शहर तक बेचैन हैं। विश्व हिंदी सचिवालय हिंदी को विश्व की भाषा बनाने के लिए निरंतर क्रियाशील है। महासचिव विनोद कुमार मिश्र का आलेख 'हिंदी की वैश्विक यात्रा का अहम पड़ाव' आशा की किरण बिखेर रहा है। दानूता स्ताशिक का 'वारसा में हिंदी' प्रभावी लगा। हिंदी के प्रख्यात लेखकों की रचनाओं का अनुवाद स्थानीय भाषाओं में किया जा रहा है, जानकर बेहद खुशी हुई। नीदरलैंड में प्रो. पुष्पिता अवस्थी द्वारा हिंदी को स्थापित करने की दिशा में किया जा रहा कार्य भी उल्लेखनीय है। अमरीका में हिंदी की दशा एवं दिशा विषय पर आस्था नवल का आलेख प्रभावी तथा उनका कार्य सराहनीय लगा। सभी लेखकों के आलेख प्रशंसनीय हैं। विश्व में हिंदी की स्थिति पर विस्तृत जानकारी प्रकाशित करने के लिए 'साहित्य अमृत' पत्रिका के संपादक मंडल को धन्यवाद।

***—प्रदीप गौतम सुमन, रीवा (म.प्र.)***

'साहित्य अमृत' का प्रतीक्षित अगस्त अंक पाकर अत्यंत प्रसन्नता हुई, लेकिन आवरण पृष्ठ और अगस्त माह में वैश्विक हिंदी विशेषांक देखकर उलझन सी महसूस हुई। अगस्त अंक हमेशा से ही हमारी 'आन-बान-शान' का प्रतिनिधित्व करता रहा है। इस बार की संपादकीय का शुभारंभ इन्हीं भावों से किया गया है, आगे सोद्देश्य स्पष्ट कर दिया गया है कि साहित्य अमृत का अगस्त माह का 'वैश्विक हिंदी विशेषांक' विश्व में हिंदी की स्थिति पर केंद्रित है। भले ही यहाँ हिंदी के माध्यम से राष्ट्र को विश्व से जोड़ने का अवसर अथवा परंपरा से आगे चलने का उद्देश्य निहित हो, परंतु एक से बढ़कर एक अगस्त अंकों का अभ्यस्त मन तो ऐसा ही महसूस कर रहा है कि 'अगस्त' के स्थान पर 'सितंबर' का अंक हाथ लग गया हो, किंतु है तो यह अगस्त अंक ही।

***—प्रमिला मजेजी, कोरबा***

विगत तेईस वर्षों से प्रकाशित होनेवाली पत्रिका 'साहित्य अमृत' का अपना विशिष्ट स्थान है। यह पत्रिका यथानाम तथा गुण है। वाकई हम हिंदीप्रेमी साहित्यकारों के लिए यह अमृत स्वरूप है। मॉरीशस में आयोजित हो रहे विश्व हिंदी सम्मेलन को देखते हुए 'साहित्य अमृत' का अगस्त माह का अंक 'वैश्विक हिंदी विशेषांक' के रूप में प्रस्तुत किया गया, जिसमें अमेरिका, चीन और जापान से लेकर ऑस्टेलिया, इटली, कनाडा, स्विट्जरलैंड और संयुक्त अरब अमीरात जैसे लगभग तीस देशों में हिंदी की स्थिति अथवा दशा और दिशा का विश्लेषण अधिकारी विद्वानों द्वारा किया गया है। यहाँ यह उल्लेखनीय तथ्य भी उभरकर आया कि विदेशों में हिंदी के प्रचार-प्रसार और विकास में न केवल भारतीयों का योगदान रहा है, बल्कि अहिंदी भाषी विदेशियों का भी प्रमुख सहयोग रहा है। यह विशेषांक तो मुझे एक दुर्लभ पुस्तक जैसा लगा। इस विशेषांक के लिए संपादक मंडल ने कितना परिश्रम किया होगा, यह इसके कलेवर को देख-पढ़कर ही समझा जा सकता है।

***—प्रेमचंद्र स्वर्णकार, हटा (म.प्र.)***

'साहित्य अमृत' का जुलाई अंक अत्यंत प्रेरणात्मक एवं संग्रहणीय लगा। आपके हर संपादकीय लेख सारगर्भित पैनी दृष्टि (गहन पैठ) किए

होते है, क्योंकि वह श्रेय आपके चिंतन और मजबूत विचारों को है, जोकि अच्छे लगे। कहानी 'नींद भर सोए' में लेखक विजयशंकर पांडेय ने हिंदी भोजपुरी भाषाओं का मिश्रण कर गरीब मजदूर का दु:ख व्यक्त किया है। मालती शर्मा का आलेख 'एक महीना ऐसा भी' में मल मास के विषय में नए पाठकों के लिए विशेष जानकारी है। ब्रह्मजीत गौतम की गजलें भी अच्छी और भावनात्मक हैं। शेष अंक की कुछ अन्य रचनाएँ भी कम रोचक नहीं हैं, आपका संग्रह एवं प्रकाशन परिश्रम स्तुत्य है। आभारी हूँ।

***—कुलभूषण सोनी, दिल्ली***

'साहित्य अमृत' का अगस्त अंक प्राप्त हुआ। कमाल का आवरण! किस देश में हिंदी उपस्थित है और कैसी स्थिति में है, इस विशेषांक के माध्यम से हम सामान्य पाठकों को अवगत कराने के लिए केवल 'साहित्य अमृत', वरन् सभी लेखकों को हमारा प्रणाम! इतने व्यापक विस्तार को इस विशेषांक में समोकर 'साहित्य अमृत' ने कितना स्तुत्य एवं महनीय कार्य किया है, यह इसकी स्थूल काया से स्वयमेव उजागर हो रहा है। पठन सामग्री को बड़े मनोयोग से बाँचना होगा, स्वाभाविक भी है कि समय लगेगा। तभी प्रतिक्रिया प्रकट करना सार्थक होगा। संपादकीय में 'समग्र भारतीय संस्कृति की संवाहिका हिंदी' बिल्कुल सही कहा है। हरीश नवलजी का 'हिंदी नियुक्तियों के विविध आयाम' युवाओं के लिए मार्गदर्शक है। ज्ञातव्य है कि अहिंदी भाषी राज्यों में हिंदी लिखने-पढ़ने-बोलने-सीखने की मुहिम पिछले कई दशकों से निरंतर चल रही है। इसके विपरीत हम हिंदी भाषी उतनी गंभीरता से हिंदी को नहीं लेते। यहाँ तक कि शद्ध लिख भी नहीं सकते, क्योंकि मुद्रित शोधक हैं न इस काम के लिए। अनुस्वार तो गेंद की तरह फेंक दिए जाते हैं कहीं। अस्तु। 'साहित्य अमृत' को धन्यवाद अर्पण के लिए शब्द नहीं हैं। हृदय पुलकित है। पृष्ठ-दर-पृष्ठ बाँचते हुए पुलक बनी रहे, यही कामना है।

***—आशागंगा प्रमोद शिरढोणकर, उज्जैन***

'साहित्य अमृत' का अगस्त का 'वैश्विक हिंदी विशेषांक' पढ़ने को मिला। लेखकों ने अपने लेखों में भारत समेत दुनिया के अधिकांश देशों में पढ़ी जानेवाली हिंदी और उसकी दशा तथा दिशा के बारे में विस्तृत रूप से जानकारी दी गई है। इन लेखों में लेखकों ने वह जानकारी दी है, जो आम भारतीयों को हिंदी के विषय में जानकारी नहीं है। विदेशों में रहनेवाले लोग हिंदी भाषा को सीखकर-ढ़कर भारत भ्रमण पर आकर यहाँ के बारे में अधिक-से-अधिक जानकारी लेना चाहते हैं। जो इतिहास, जो सभ्यता भारत देश में वह दुनिया के किसी भी देश में नहीं है। इस विशेषांक में गीता शर्मा द्वारा लिखा गया लेख 'वैश्विक स्तर पर हिंदी की स्वीकार्यता का आग्रह क्यों' हर उस ओर साफ इशारा करता है, जो आज भारत में हिंदी की स्थिति है। किसी भी राष्ट्रभाषा को बनाने के लिए भी उन्होंने विस्तार से चर्चा की है। संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी को स्थान क्यों नहीं मिलता—इस पर भी चर्चा की गई है। वो एक स्थान पर लिखती है कि संयुक्त राष्ट्र संघ में मंदारिन जो चीनी भाषा है अंग्रेजी, स्पेनिश, रूसी, फ्रेंच और अरबी कुछ छह भाषाएँ सम्मिलित हैं। ये वे भाषाएँ हैं, जो उनके अपने देशों की राष्ट्र भाषाएँ हैं। हिंदी को कैसे विश्व के मानचित्र पर स्थापित किया जाए, इसकी भी चर्चा है। हिंदी की देश में क्या स्थिति है, उसकी भी चर्चा इस लेख में है। मैं इस पत्र के साथ गीता शर्मा को भी बधाई देता हूँ। मैं अंत में यही कहूँगा कि 'साहित्य अमृत' का यह विशेषांक पढ़ने लायक एवं अपने पास सँजोकर रखने लायक है।

***—ब्रजमोहन जैन, दिल्ली***

'साहित्य अमृत' के अगस्त अंक में अर्चना पैन्युली का आलेख 'डेनमार्क में हिंदी व भारतीय संस्कृति का स्वरूप' पढ़कर बहुत अच्छा लगा। आलेख में डेनमार्क में हिंदी की स्थिति, अप्रवासी भारतीयों द्वारा हिंदी व भारतीय संस्कृति का संरक्षण, विभिन्न संस्थाएँ आदि की जानकारी मिली। नि:संदेह आपकी हिंदी सेवा सराहनीय है।

***—शाकिर शेख***

'साहित्य अमृत' का अगस्त अंक अपनी भाषा को समर्पित रूप में जैसे ही हाथ में आया, अविलंब पूरी दुनिया में 'हिंदी' भाषा का कैसे परचम लहरा रहा है, पढ़कर हर्ष और सुखद आशा-विश्वास की स्फूर्ति उमड़ पड़ी कि हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है। वास्तव में अब भारतीय समझ गए हैं कि बिना 'हिंदी' भाषा के वे स्वयं भी सुरक्षित नहीं हैं। पं. मदन मोहन मालवीय की प्रतिस्मृति में यह सत्य अडिग कर दिया गया है कि 'प्रादेशिक भाषाओं की पालना हिंदी से ही संभव'। हिंदी भाषा को हृदय से प्रेम कर समर्पण और कठोर कदम उठाकर ही राष्ट्रभाषा बनाया जा सकता है। देश अनेक क्षेत्रों में अभूतपूर्व विकास कर रहा है, लेकिन हिंदी के प्रति उदासीनता और अंग्रेजी का मोह शहरों की प्रबल चाह बना हुआ है। सरकार यदि दृढ़ संकल्प ले ले तो नोटबंदी और जी.एस.टी. की तरह हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाना मुश्किल नहीं है। अमेरिका, इटली, कनाडा, चीन, रूस, थाईलैंड, नीदरलैंड, जापान, डेनमार्क से लेकर छोटे-बड़े २४-२५ देशों में भारत की भाषा 'हिंदी' का अनेक विद्वान्, प्रवासी और अप्रवासी भारतीयों ने अपने अनुभवों और जानकारियों की अद्‌भुत शब्दांजली से 'साहित्य अमृत' पत्रिका को तन-मन से सौंदर्यबद्ध किया है। अनेक बधाइयाँ।

***—रजनी सिंह, डिबाई***

'साहित्य अमृत' का अगस्त अंक विश्व में हिंदी के प्रचार-प्रसार की स्थिति की विस्तृत जानकारी समेटे हुए एक उत्कृष्ट अंक है। विश्व फलक पर हिंदी के प्रसार को देखकर जहाँ एक ओर गर्व की अनुभूति होती है, वहीं दूसरी ओर यह भी लगता है कि अपने देश में हम लोग गुलामी की मानसिकता से पूरी तरह बाहर नहीं निकल पाए हैं। हमारी हर अच्छी बात जब पश्चिम से होकर आती है, तभी वह हमें अधिक सार्थक व प्राणवान लगती है। यह अंक अपने देश में हिंदी को और अधिक लोकप्रिय बनाने में सहायक हो सकता है। इस समय देश का सशक्त नेतृत्व व विश्व के लगभग हर देश में बसे अपने देशवासी भारतीय संस्कृति, अध्यात्म, योग, दर्शन, नृत्य, संगीत के संवाहक हैं व हिंदी को विश्व मंच पर गौरव दिलाने के प्रयास में संलग्न हैं। यह गर्व का विषय है। नर्मदापुत्र श्री अमृतलाल वेगड़जी पर लेख उनके द्वारा किए गए प्रयास अत्यंत प्रेरणास्पद है, हर नंदी की यही अभिलाषा होगी कि उनका भी कोई ऐसा ही पुत्र हो। उसे शोषण व उच्छिष्ठ से मुक्त कर सके।

***—माला श्रीवास्तव, दिल्ली***

## वर्ग पहेली (१५६)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३० सितंबर, २०१८ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते नवंबर २०१८ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

**बाएँ से दाएँ—**

१. विद्रोह (४)
४. शरीर के किसी अंग पर धीरे-धीरे हाथ फेरना (४)
७. अवस्था, दशा (२)
८. फरार (३)
१०. किसी वस्तु का निचला हिस्सा (२)
११. भाग्यवान (५)
१३. कीचड़, दौड़-धूप करने से होनेवाला श्रम (३)
१५. दौड़कर चलनेवाला, धोबी (३)
१७. चिकित्सक (३)
१८. धनसंपन्नता, अमीरी (३)
१९. चमड़े या सूट की पट्टी, जूता बाँधने का धागा (३)
२१. बस्ती (३)
२३. दया दिखाना (३,२)
२६. कच्ची शक्कर (२)
२८. अपमानित (३)
२९. आदेश (२)
३०. नर्क (४)
३१. सतर्कता (४)

**ऊपर से नीचे—**

१. वीर, शूर (४)
२. कपोल (२)
३. अन्वेषण, खोज (३)
४. एक विषम संख्या (३)
५. पैर, पदाघात (२)
६. बेवकूफ (४)
९. कपड़े की चौड़ाई, चोरी का पता लगानेवाला (३)
११. दैवी प्रकोप (२,१,२)
१३. मुबारकवाद देना (३,२)
१४. वाद-विवाद (३)
१६. वह हल, जो कोमल मिट्टी जोतने में व्यवहार किया जाता है (३)
१९. एक रसीला फल (४)
२०. एक बड़ा वृक्ष, जिसकी पत्तियाँ कुछ खट्टी होती हैं (३)
२२. ब्रह्मज्ञानी, तत्त्वज्ञ (४)
२४. पचा हुआ (३)
२५. एक सिक्ख संप्रदाय (३)
२७. रास्ता (२)
२९. पचास प्रतिशत (२)

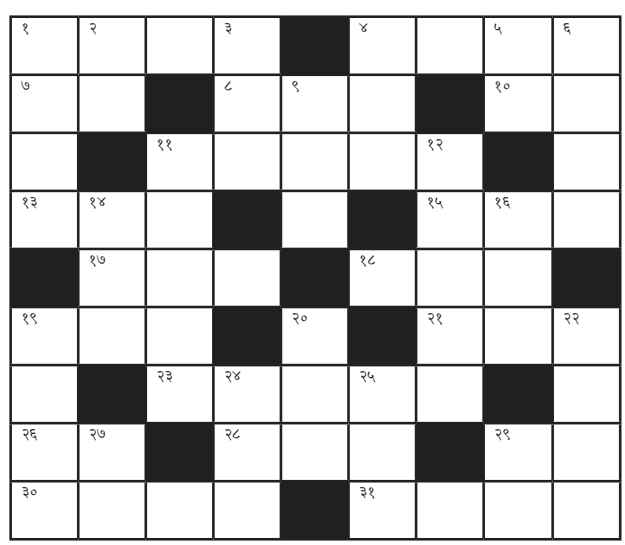

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

**वर्ग पहेली (१५५) का हल अगले अंक में।**

## वर्ग पहेली (१५४) का शुद्ध हल

| | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १ अ | नु | २ रो | ३ ध | ■ | ४ सी | ५ ना | जो | ६ री |
| व | ■ | ७ ग | न्ना | ■ | ८ माँ | ग | ■ | ति |
| ९ य | १० ह | ■ | ११ से | व | क | ■ | १२ फा | का |
| १३ व | र्ष | १४ गाँ | ठ | ■ | १५ न | १६ नि | हा | ल |
| ■ | ■ | ध | ■ | ■ | ■ | शा | ■ | ■ |
| १७ अ | १८ पू | र्व | १९ ता | ■ | २० अ | न | २१ दे | २२ खा |
| २३ ग | र्व | ■ | २४ बे | श | क | ■ | २५ श | क |
| वा | ■ | २६ स | दा | ■ | २७ ब | २८ ला | ■ | सा |
| २९ नी | लां | ब | र | ■ | ३० क | ला | का | र |

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री बद्री लाल व्यास**
भाँवर कॉलोनी, खुजनेर रोड
म.न.-३३२, वार्ड-५
जिला-राजगढ़ (ब्यावंश) (म.प्र.)
दूरभाष : ९८९३०९९१३३

२. **श्री विपिन सिन्हा**
डी.एन. विहार, गैस गोदाम के पास
कोटा रोड, गुढ़ियारी,
रायपुर (छ.ग.)
दूरभाष : ९७७०९६२२०१

*पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।*

**वर्ग-पहेली १५४ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—** सर्वश्री ब्रह्मानंद 'खिच्ची', निखिल नाहड़िया (महेंद्रगढ़), फकीरचंद दुल (कैथल), उषा गोयल (गुरुग्राम), रामेश्वर कुलमित्र (कबीरधाम), फिरदौस जहां (दरभगा), विष्णु कांत झा (वैशाली), शिवशरण दुबे (कटनी), पं. राधारमण त्रिपाठी (राजगढ़), वाई.के. श्रीवास्तव (जबलपुर), पी.एन. शर्मा (उज्जैन), विनय शर्मा (इंदौर), परीक्षित व्यास (रतलाम), अपर्णा गर्ग (ग्वालियर), रुक्मणी संगल (पटियाला), प्रभात कुमार गुप्ता (मोहाली), शोभा दानी (नोएडा), सुभाष शर्मा, पुखराज वार्ष्णेय, दिनकर सहल (दिल्ली), नीरजा शर्मा (अहमदाबाद), माणिक तुलसीराम गौड़ (बंगलुरु), मोहन उपाध्याय (अजमेर), रेणु मिश्र (जयपुर), गिरधारीलाल अग्रवाल (यवतमाल), विनीता सहल (मुंबई)।

## विश्व हिंदी सम्मेलन संपन्न

१८ अगस्त को मॉरीशस के गोस्वामी तुलसीदास नगर में ११वें विश्व हिंदी सम्मेलन का भव्य उद्घाटन समारोह में भारत की विदेश मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज, मॉरीशस के प्रधानमंत्री श्री प्रवीण कुमार जगन्नाथ, गोवा की राज्यपाल श्रीमती मृदुला सिन्हा ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर गोवा की राज्यपाल श्रीमती मृदुला सिन्हा ने विश्व हिंदी सम्मेलन पर निकले 'गगनांचल' के विशेषांक, पश्चिम बंगाल के राज्यपाल व कवि श्री केशरीनाथ त्रिपाठी ने 'दुर्गा' पत्रिका, भारत की विदेश मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज ने 'राजभाषा भारती' पत्रिका विशेषांक, मॉरीशस की शिक्षा मंत्री श्रीमती लीला देवी दुकन लछूमन ने विश्व हिंदी सचिवालय की पत्रिका 'विश्व हिंदी साहित्य', भारत के विदेश राज्य मंत्री श्री एम.जे. अकबर ने श्री अभिमन्यु अनत की पुस्तक 'प्रिया' का और भारत के विदेश मंत्री श्री जनरल वी.के. सिंह ने 'भोपाल से मॉरीशस तक' कृति का लोकार्पण किया। संचालन प्रो. कुमुद शर्मा एवं श्रीमती माधुरी रामधारी ने किया। धन्यवाद भारत के विदेश राज्य मंत्री श्री जनरल वी.के. सिंह ने किया। ☐

## आचार्य गोरेलाल त्रिपाठी निर्वाण जयंती संपन्न

१० जुलाई को कानपुर के देवनगर में डॉ. पुरुषोत्तम वाजपेयी की अध्यक्षता में आचार्य गोरेलाल त्रिपाठी की २९वीं निर्वाण जयंती पर आयोजित संगोष्ठी में सर्वश्री संजीव अवस्थी, रघुनाथ प्रसाद गुप्त, विनोद शुक्ल, विजय प्रकाश त्रिपाठी, प्रेम वाजपेयी, दयानंद सिंह 'अटल', ज्ञानेंद्र पाल सिंह, राजेंद्र तिवारी, गोपीकृष्ण ओमर, प्रदीप पांडेय, सुभाष मिश्र, लल्लन वाजपेयी, सुनील वाजपेयी, सतीश त्रिपाठी, उमेश शुक्ल 'विचारक' ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री सुमित शुक्ल ने किया तथा आभार श्री ऋषि शुक्ल ने व्यक्त किया। ☐

## कथा संगोष्ठी संपन्न

१८ जुलाई को नई दिल्ली के मंडी हाउस स्थित त्रिवेणी सभागार में श्री विष्णु खरे की अध्यक्षता में आयोजित सर्वश्री वैभव सिंह, जीतराम भट्ट, ज्योति चावला ने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री महेश दर्पण ने किया। ☐

## गोष्ठी संपन्न

२९ जुलाई को भोपाल के टीकमगढ़ में श्री राजीव नामदेव 'राना लिधौरी' के आवास पर पं. हरिविष्णु अवस्थी की अध्यक्षता में श्री रामप्रकाश तिवारी की पुस्तक 'आंजनेय' एवं श्री तरुण भटनागर की पुस्तक 'जंगल में दर्पण' पर सर्वश्री रामस्वरूप शर्मा, अजीत श्रीवास्तव, भारत विजय बगेरिया, परमेश्वरीदास तिवारी, आर.एस. शर्मा, राजीव नामदेव 'राना लिधौरी' ने अपने विचार व्यक्त किए। मुख्य अतिथि श्री हाजी जफरउल्ला खाँ 'जफर' एवं विशिष्ट अतिथि श्री एन.डी. सोनी थे। संचालन श्री राजीव नामदेव 'राना लिधौरी' ने किया। गोष्ठी के अंत में प्रख्यात कवि श्री नीरज के निधन पर दो मिनट का मौन रखकर श्रद्धांजलि दी गई। ☐

## विचार गोष्ठी संपन्न

विगत दिनों कुशालपुर में नारायणी साहित्य अकादमी एवं ज्ञानवाहिनी शिक्षण समिति के संयुक्त तत्त्वावधान में पाञ्चजन्य विद्या मंदिर में डॉ. स्नेह लता पाठक की अध्यक्षता में 'प्रेमचंद की कहानियों में सामाजिक संदेश' विषय पर आयोजित विचार गोष्ठी में श्रीमती शशि दुबे के मुख्य आतिथ्य एवं श्री अजय अवस्थी किरण के विशिष्ट आतिथ्य में सर्वश्री मृणालिका ओझा, करण यादव, नीलिमा सोनी, सुरेंद्र कुमार यादव, शारदा अग्रवाल, तनु साहू, भावना साहू, श्वेता चिचोलकर, संजना वर्मा, निशा हाईत, प्रीति देवांगन, रजनीश कुमार यादव, संजीव ठाकुर, कृष्ण कुमार शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन राजेंद्र ओझा ने किया तथा धन्यवाद श्रीमती इंद्राणी शर्मा ने ज्ञापित किया। ☐

## गोष्ठी संपन्न

१२ अगस्त को भोपाल में साहित्य अकादमी म.प्र. संस्कृति परिषद् के स्थानीय उपक्रम सागर पाठक मंच की ६१वीं गोष्ठी पं. दीनदयाल उपाध्याय शासकीय आर्टस एंड कॉमर्स कॉलेज सागर के सभाकक्ष में डॉ. जी.एस. रोहित की अध्यक्षता में डॉ. छोटेलाल भारद्वाज के उपन्यास 'ककनमठ' पर मुख्य अतिथि डॉ. हरीसिंह गौर, सर्वश्री आनंद मंगल बोहरे, रजनीश जैन, महेश तिवारी, उमाकांत मिश्र, चंचला दवे, सरोज गुप्ता, रंजना मिश्र, हरी शुक्ला, कुंदन पाराशर, संतोष पाठक, शिवरतन यादव, कपिल बैसाखिया ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन प्रो. अमर कुमार जैन ने किया तथा आभार डॉ. सर्वेश्वर उपाध्याय ने व्यक्त किया। ☐

## संगोष्ठी संपन्न

३१ जुलाई को ओडीशा के संबलपुर स्थित ज्योतिबिहार विश्वविद्यालय में प्रेमचंद जयंती के अवसर पर बालकवि बैरागी एवं गोपालदास नीरज को श्रद्धांजलि अर्पित की गई। मुख्य अतिथि डॉ. जयंत शर्मा थे। डॉ. प्रमिला मजेजी ने अपने विचार व्यक्त किए। धन्यवाद सुश्री गायत्री बूढ़ा ने ज्ञापित किया। ☐

## उद्घाटन समारोह संपन्न

२३ जुलाई को दिल्ली के अशोक विहार में दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी की अशोक विहार शाखा का उद्घाटन डॉ. रामशरण गौड़ की अध्यक्षता में किया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि डॉ. हर्षवर्धन, सर्वश्री माँगे राम गर्ग, महेश चंद शर्मा, महेंद्र नागपाल ने अपने विचार व्यक्त किए। आभार डॉ. लोकेश शर्मा ने व्यक्त किया। ☐

## काव्य गोष्ठी संपन्न

२२ जुलाई को वारासिवनी में श्री प्रणय श्रीवास्तव 'अश्क' की अध्यक्षता में स्व. गोपालदास 'नीरज' को काव्यांजलि अर्पित कर काव्य गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें रवि नवानी, साहेबलाल दशरिये सरल, दिनकर राव दिनकर, दीप शिखा, राजेंद्र शुक्ल सहज, मनोज पाराशर, अनुज तिवारी 'जफर', प्रीति समकित सुराना, सुरेश सिंघई, एस.बी. वर्मा,

अजीत जैन, संजय मसानी, राजेश बिसेन, संतोष राजपूत ने विचार व्यक्त किए। संचालन श्रीमती सरिता सिंघई 'कोहिनूर' ने किया। ☐

## काव्य पाठ आयोजित

१० अगस्त को भोपाल की ललित कलाओं के लिए समर्पित स्पंदन संस्था की ओर से स्वराज भवन में हिंदी के प्रख्यात कवि-कथाकार श्री ध्रुव शुक्ल का काव्य पाठ आयोजित किया गया। इस अवसर पर उन्होंने अनेक कविताओं तथा गजलों का पाठ किया। ☐

## राज्यपाल से शिष्टाचार भेंट

साहित्य मंडल, श्रीनाथद्वारा के प्रधानमंत्री श्री श्यामप्रकाश देवपुरा ने उत्तर प्रदेश के राज्यपाल महामहिम श्री राम नाईकजी से लखनऊ में मुलाकात की। श्री देवपुरा ने साहित्य मंडल की गतिविधियों से राज्यपाल महोदय को अवगत कराया तथा साहित्य मंडल के संस्थापक कीर्तिशेष श्री भगवती प्रसादजी देवपुरा द्वारा रचित ग्रंथ 'सूरसागर' भेंट किया। राज्यपाल महोदय ने भी शुभकामनाएँ व्यक्त करते हुए स्वयं द्वारा लिख तीन पुस्तकें साहित्य मंडल के लिए भेंट कीं। इस अवसर पर साहित्य मंडल के साहित्य-मंत्री श्री विट्ठलजी पारीक भी उपस्थित थे। ☐

## संगोष्ठी संपन्न

२ अगस्त को नई दिल्ली के दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी, केंद्रीय पुस्तकालय के अमीर खुसरो सभागार में श्रीमती संतोष खन्ना की अध्यक्षता में महिलाओं से संबंधित समस्याओं पर आयोजित संगोष्ठी में सर्वश्री रामशरण गौड़, रतना बाली, रिचा आशु, नीना पांडेय ने अपने विचार व्यक्त किए। आभार डॉ. लोकेश शर्मा ने व्यक्त किया। ☐

## अमृत महोत्सव संपन्न

विगत दिनों भोपाल के बानपुर में श्री कैलाश मड़बैया के अमृत महोत्सव पर 'कीर्ति कलश कैलाश' का दूसरा चरण 'अमर शहीद मर्दनसिंह स्मृति दिवस' पर श्री गोविंदरसिंह छतरपुर की अध्यक्षता एवं श्री मनोहर लाल पंथ के मुख्य आतिथ्य में आयोजित किया गया। संचालन डॉ. जवाहर द्विवेदी ने किया। इस अवसर पर श्री कैलाश मड़बैया की अध्यक्षता एवं श्री गोविंदसिंह छतरपुर के मुख्य आतिथ्य में अखिल भारतीय कवि सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसमें सर्वश्री दुर्गेश दीक्षित, पियूष, स्वदेश, अतुल गुप्त, शकील मुहम्मद, शकुन, सत्यनारायण तिवारी, जवाहर लाल, शीलचंद्र शास्त्री, रामगोपाल रायकवार 'डाइट', शकूर खान, विकास जैन ने काव्य पाठ किया। संचालन श्री पंकज अंगार ने किया तथा आभार श्री जैन ने व्यक्त किया। ☐

## 'क्षण जो जी लिये' कृति विमोचित

२३ जुलाई को उज्जैन में सरल काव्यांजलि संस्था के तत्त्वावधान में राष्ट्रकवि स्व. श्रीकृष्ण सरल जन्मशती वर्ष पर डॉ. मोहन गुप्त की अध्यक्षता में आयोजित समारोह श्री शशिमोहन श्रीवास्तव के काव्य-संग्रह 'क्षण जो जी लिये' के विमोचन में सर्वश्री रमेश दवे, अशोक वक्त, शैलेंद्र कुमार शर्मा, प्रमोद त्रिवेदी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. हरिमोहन बुधौलिया ने किया तथा आभार श्री परमानंद शर्मा अमन ने व्यक्त किया। ☐

## 'अमृतराय : एक प्रतिबद्ध उपन्यासकार' कृति विमोचित

३१ जुलाई को बरेली के एकता नगर स्थित दीक्षित टॉवर में प्रेमचंद जयंती के उपलक्ष्य में डॉ. मुरारीलाल सारस्वत की अध्यक्षता में डॉ. मधु दीक्षित द्वारा रचित पुस्तक 'अमृतराय : एक प्रतिबद्ध उपन्यासकार' का विमोचन डॉ. एन.एल. शर्मा के मुख्य आतिथ्य एवं सर्वश्री रमेश गौतम, मीनू खरे, रामनाथ कपूर, ज्ञानलता गौड़, हितु मिश्रा के विशिष्ट आतिथ्य में किया गया। संचालन डॉ. लवलेश दत्त ने किया तथा आभार श्री संजय दीक्षित ने व्यक्त किया। ☐

## 'मार्क्स में मनु ढूँढ़ती' कृति विमोचित

विगत दिनों जोधपुर के सृजना संस्था के बैनर तले होटल प्रतीक में डॉ. सत्यनारायण की अध्यक्षता में श्री माधव राठौड़ के प्रथम कहानी-संग्रह 'मार्क्स में मनु ढूँढ़ती' के विमोचन कार्यक्रम में सर्वश्री प्रेम भारद्वाज, हबीब कैफी, किशोर चौधरी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. हरीदास व्यास ने किया तथा धन्यवाद श्री त्रिभुवन सिंह राठौड़ ने ज्ञापित किया। ☐

## 'घेरे में है चाँदनी' कृति विमोचित

१२ अगस्त को रायपुर के स्थानीय वृंदावन सभागार में नवरंग काव्य मंच पर कवि श्री राजेश जैन राही की नव दोहा-कृति 'घेरे में है चाँदनी' का विमोचन किया गया। इस अवसर पर ग्रीन आर्मी ऑफ रायपुर, लोक कला साहित्य संस्था सिरजन, महाराष्ट्र महिला मंडल रायपुर, वैदेही मुसकान सोशल वेलफेयर सोसायटी, बैकुंठ धाम निर्माण समिति कोटा रोड रायपुर को 'नवरंग सम्मान'; सर्वश्री संजीव सिंह, श्वेता सिंह, रेशमा अंसारी, प्रशांत पांडेय, पी.के. तिवारी, किरण माणिकपुरी को 'नवरंग विभूति सम्मान' एवं सर्वश्री रामबाबू रस्तोगी, विजय राठौड़, माणिक विश्वकर्मा को 'नवरंग साहित्य विभूति सम्मान' से सम्मानित किया गया। संचालन सर्वश्री राजेश जैन राही, अनिल श्रीवास्तव, मनोज शुक्ला एवं शुभा मिश्रा कनक ने किया। ☐

## लोकार्पण समारोह संपन्न

२९ जुलाई को वाराणसी में साहित्यिक-सांस्कृतिक-आध्यात्मिक चेतना का प्रखर मंच 'शंखनाद' एवं समकालीन संदर्भों की सृजनात्मक अभिव्यक्ति 'काव्यायनी' के संयुक्त तत्त्वावधान में गोलघर स्थित पराड़कर स्मृति भवन के गर्दे सभागार में प्रो. कमलेश दत्त त्रिपाठी की अध्यक्षता में 'समकालीन स्पंदन' पत्रिका के 'बाल विशेषांक' के लोकार्पण समारोह में डॉ. उषा यादव के मुख्य आतिथ्य एवं डॉ. राजेश्वर आचार्य के विशिष्ट आतिथ्य में सर्वश्री नागेश पांडेय 'संजय', मुक्ता, हरिराम द्विवेदी, जितेंद्र नाथ मिश्र, राम अवतार पांडेय, वेद प्रकाश पांडेय ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर सर्वश्री गणेश गंभीर, प्रकाश श्रीवास्तव, सुरेंद्र वाजपेयी, कमलेश भट्ट 'कमल', ओम धीरज, चंद्रभाल सुकुमार को उनकी साहित्य सेवा व रचनाधर्मिता हेतु उत्तरीय एवं मानपत्र प्रदान कर सम्मानित किया गया। इसी क्रम में श्री धर्मेंद्र गुप्त 'साहिल' को विशेषांक के कुशल संपादन व श्री दीपेंद्र नागर को पत्रिका संपादन कार्य में सहयोग हेतु तथा समारोह के कुशल संयोजन के लिए श्री प्रदीप मेहरोत्रा को

उत्तरीय व स्मृति चिह्न प्रदान कर उनके साहित्यिक योगदान हेतु सम्मानित किया गया। संचालन डॉ. रामसुधार सिंह ने किया तथा धन्यवाद श्री गौतम अरोड़ा ने ज्ञापित किया। □

## कृति लोकार्पित

विगत दिनों नई दिल्ली में भारत के उपराष्ट्रपति श्री एम. वेंकैया नायडू के आवास पर श्री दया प्रकाश सिन्हा की पुस्तक 'Two Classical Plays from India' का लोकार्पण किया गया। इस अवसर पर श्री एम. वेंकैया नायडू ने श्री दया प्रकाश सिन्हा के व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला। आभार श्री रविशंकर खरे ने व्यक्त किया। □

## लोकार्पण समारोह संपन्न

८ जुलाई को वाराणसी में साहित्यिक संघ, पराड़कर स्मृति भवन के सभागार में प्रो. हरिकेश सिंह की अध्यक्षता में 'सोच विचार' के नवें काशी अंक का लोकार्पण पद्मश्री मालिनी अवस्थी के मुख्य आतिथ्य एवं पं. हरिराम द्विवेदी व डॉ. ऋतु गर्ग के विशिष्ट आतिथ्य में किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री विजयेंद्र नाथ मिश्र, चंद्रकांत त्रिवेदी, प्रभुनाथ द्विवेदी, कमला पांडेय, वशिष्ठ नारायण त्रिपाठी, नारायण द्रविड़, महेंद्र सिंह नीलम, लोलार्क द्विवेदी, श्रद्धानंद, चंद्रकला त्रिपाठी, अशोक कुमार सिंह, चंद्रभाल सुकुमार, वेद प्रकाश पांडेय, अतुल श्रीवास्तव अतुल, जितेंद्र प्रकाश भिखारी, अत्रि भारद्वाज, अमरनाथ शर्मा 'डैडी', अमिताभ शंकर राय चौधरी, शिवसुंदर गांगुली, ब्रजेश पांडेय, मनीष खत्री, ब्रजेंद्र नारायण द्विवेदी शैलेश, केशव शरण, अलकबीर, सुदामा तिवारी 'सांड', राजेंद्र गुप्त, हिमांशु उपाध्याय, धर्मेंद्र गुप्त 'साहिल', रामअवतार पांडेय, कमलेश भट्ट कमल, सुरेंद्र वाजपेयी, अजय मिश्र, राजेंद्र आहुति, नरोत्तम शिल्पी, सिद्धनाथ शर्मा ने शुभकामनाएँ व्यक्त कीं। संचालन डॉ. जितेंद्र नाथ मिश्र ने किया तथा धन्यवाद श्रीराम माहेश्वरी ने ज्ञापित किया। □

## सम्मान समारोह संपन्न

१५ जुलाई को लालगंज, रायबरेली के बैसवारा इंटर कॉलेज के सभागार में डॉ. शिवबहादुर सिंह भदौरिया की जयंती पर आयोजित साहित्यकार सम्मान समारोह में सर्वश्री ओम प्रकाश अवस्थी, नचिकेता को 'डॉ. शिवबहादुर सिंह भदौरिया स्मृति सम्मान', रामनारायण रमण को 'पंडित ब्रजनंदन पांडेय स्मृति सम्मान', देवेंद्र पांडेय देवन को 'डॉ. उपेंद्र बहादुर सिंह स्मृति सम्मान', हरिनाम सिंह को 'प्रो. हरेंद्र बहादुर सिंह सम्मान', शीलेंद्र सिंह चौहान को 'रामप्यारे श्रीवास्तव नीलम स्मृति सम्मान', विनोद श्रीवास्तव को 'मधुकर खरे स्मृति सम्मान', अवनीश सिंह चौहान को 'दिनेश सिंह स्मृति सम्मान', सतीश कुमार सिंह को 'डॉ. रामप्रकाश सिंह स्मृति सम्मान' से अलंकृत किया गया। सर्वश्री सुरेंद्र बहादुर सिंह, रामबाबू गुप्ता, सुरेश नारायण सिंह 'बच्चा बाबू', नरेंद्र भदौरिया को भी सम्मानित किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री महादेव सिंह, स्वामी भाष्करस्वरूप महाराज, विनय भदौरिया ने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री आशीष सिंह सेंगर ने किया। □

## डॉ. रजनी सिंह सम्मानित

९ जुलाई को मेरठ में एंटी करप्शन मूवमेंट भारत के अध्यक्ष डॉ. ओमकार गुप्ता द्वारा आयोजित द्वितीय विभूतियाँ अलंकरण एवं स्मारिका विमोचन समारोह में डॉ. रजनी सिंह को 'उ.प्र. कवि शिरोमणि विभूषण' से अलंकृत किया गया। उन्हें बैज लगाकर माला पहनाई तथा शॉल ओढ़ाकर प्रतीक-चिह्न से सम्मानित किया गया। संचालन सुश्री शुभम त्यागी ने किया। □

## श्री राजीव नामदेव 'राना लिधौरी' सम्मानित

विगत दिनों भोपाल के टीकमगढ़ स्थित शहीद भवन में अखिल भारतीय बुंदेलखंड साहित्य व संस्कृति परिषद् द्वारा आयोजित बुंदेली समारोह में श्री राजीव नामदेव 'राना लिधौरी' के बुंदेली व्यंग्य-संग्रह 'लुकलुक की बीमारी' को 'शांतिदेवी पुरस्कार' से महामहिम राज्यपाल श्रीमती आनंदी बेन पटेल द्वारा सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें सम्मान-पत्र, शॉल, श्रीफल, पाँच हजार की राशि भेंट की गई। □

## श्री अरविंद कुमार सम्मानित

१ अगस्त को नई दिल्ली के हिंदी भवन सभागार में श्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी के सान्निध्य में राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन की १३७वीं जयंती के अवसर पर हिंदी भवन द्वारा पं. भीमसेन विद्यालंकार की स्मृति में प्रतिवर्ष दिया जानेवाला 'हिंदीरत्न सम्मान' श्री अरविंद कुमार को उनकी दीर्घकालीन हिंदीसेवा के लिए प्रदान किया गया। विशिष्ट अतिथि सर्वश्री बालस्वरूप राही, विजय कुमार मलहोत्रा एवं राकेश टंडन थे। संचालन श्रीमती सरला माहेश्वरी ने किया तथा धन्यवाद डॉ. गोविंद व्यास ने ज्ञापित किया। □

## श्रीमती सूर्यबाला सम्मानित

विगत दिनों मुंबई में माध्यम साहित्यिक संस्थान एवं गया प्रसाद खरे स्मृति साहित्य संवर्धन संस्थान के संयुक्त तत्त्वावधान में डॉ. नरेंद्र चतुर्वेदी की अध्यक्षता में आयोजित समारोह में श्रीमती सूर्यबाला को '२९वें अट्टहास शिखर सम्मान' से सम्मानित किया गया। मुख्य अतिथि डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी एवं विशिष्ट अतिथि सर्वश्री हरि जोशी, गिरीश पंकज, राकेश कुमार पालीवाल, सुभाष राय थे। संचालन श्री अशोक शुक्ल ने किया । □

## श्री व्यग्र पांडे सम्मानित

१६ अगस्त को नई दिल्ली के एन.एस.एस. सत्यवती महाविद्यालय में डॉ. मुन्ना पांडेय के मुख्य आतिथ्य में श्री व्यग्र पांडे को शोध संवाद रिसर्च द्वारा आयोजित राष्ट्रीय कवि सम्मेलन में 'श्रेष्ठ कविता-पाठ सम्मान' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री सतीश खगनवाल, संजीव कौशल, अंजू शर्मा, सरला सिंह, मो. आसिफ, विश्वंभर पांडे 'व्यग्र', अभिषेक विक्रम, प्रियंका ओझा, नीरज शर्मा ने काव्य पाठ किया। संचालन डॉ. दौलतराम शर्मा ने किया। □

## डॉ. चंचला सुशील दवे सम्मानित

२२ जुलाई को जबलपुर के शहीद स्मारक भवन में आयोजित भव्य

मध्य क्षेत्रीय गुजराती बाजखेड़ावल समाज के रजत जयंती समारोह में डॉ. चंचला सुशील दवे को विशिष्ट साहित्य सेवा व रचनाकर्म के लिए मध्य प्रदेश की राज्यपाल माननीया श्रीमती आनंदी बेन पटेल द्वारा 'साहित्य सम्मान' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री निर्मलचंद निर्मल, शुकदेवप्रसाद तिवारी, उदय जैन, सुरेश आचार्य, एस.एस. नेगी, महेश तिवारी, श्याम मनोहर सीरोठिया, अरुण दवे, लक्ष्मी पांडेय, संध्या टिकेकर, कविता शुक्ला, मनीष झा, शिवरतन यादव, गजाधर सागर, आशीष द्विवेदी, सरोज गुप्ता, छाया चौकसे, पवन तिवारी, रंजना मिश्र, संगीता मुखर्जी, आशीष ज्योतिषी, नवनीत धगट, अनिल निरंजना जैन, हरीसिंह ठाकुर, के.के. दवे, एन.एस. पंड्या एवं उमा कांत ने अपने विचार व्यक्त किए। □

## प्रविष्टियाँ आमंत्रित

मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति हिंदी माह के समापन पर इस वर्ष भी हिंदीतर भाषा हिंदी सेवी सम्मान समारोह २ अक्तूबर को आयोजित करेगी। इस सम्मान के लिए बैंकों, सार्वजनिक उपक्रमों तथा अन्य कार्यालयों से संस्तुतियाँ ३१ अगस्त,२०१८ तक हिंदी भवन, भोपाल के पते पर भेजने का अनुरोध है। इसके अतिरिक्त हिंदीतर भाषी लेखकों की हिंदी कृति पर भी तीन पुरस्कार दिए जाते हैं। मध्य प्रदेश में कार्यरत अहिंदी भाषी लेखक भी अपनी कृतियाँ ३१ अगस्त, २०१८ तक भेज सकते हैं। अहिंदी भाषी हिंदी लेखिकाओं, महिला लेखिकाओं की मौलिक कृतियों, भारतीय भाषाओं से हिंदी में अनूदित पुस्तकों, महिला समाज-सेवियों के अतिरिक्त प्रदेश के समाज-सेवी सम्मान के लिए भी नाम प्रस्तावित किए जा सकते हैं। □

## प्रविष्टियाँ आमंत्रित

दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा वर्ष २०१७-१८ के लिए संस्कृति और शहीदों के जीवन और शौर्य गाथाओं के संबंध में लिखी गई श्रेष्ठ कृतियों के रचनाकारों को पुरस्कारों से सम्मानित करने के लिए उनके जीवनवृत्त एवं रचनाओं के विवरण आमंत्रित हैं। इसके साथ ही संस्कृति, हिंदी, उर्दू एवं पंजाबी की श्रेष्ठ साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक और त्रैमासिक पत्रिकाओं को यही पुरस्कृत किया जाएगा। इच्छुक विद्वान् लेखक अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व का विवरण उप-निदेशक (प्रशा.) को दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार का संगठन, डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी मार्ग, दिल्ली-११०००६ के पते पर ३१ अगस्त, २०१८ तक भेज सकते हैं। वेबसाइट : www.dpl.gov.in □

## प्रविष्टियाँ आमंत्रित

साहित्य सदन, भोपाल द्वारा विगत बीस वर्षों से दिए जानेवाले, इक्कीसवें अंबिका प्रसाद दिव्य स्मृति प्रतिष्ठा पुरस्कारों हेतु रचनाकारों से पुस्तकें आमंत्रित हैं। दिव्य पुरस्कारों हेतु कहानी, उपन्यास, कविता (गजल/नवगीत साहित्य) व्यंग्य, समालोचना एवं बाल साहित्य, विषयों पर मौलिक कृतियाँ आमंत्रित की जाती हैं। प्रत्येक विधा में इक्कीस सौ रुपए राशि के अंबिका प्रसाद दिव्य स्मृति प्रतिष्ठा पुरस्कार प्रदान किए जाएँगे। गुणवत्ता के क्रम में द्वितीय स्थान पर आनेवाली पुस्तकों को 'दिव्य प्रशस्ति-पत्र' प्रदान किए जाते हैं। प्रत्येक प्रविष्टि के साथ दो सौ रुपए प्रवेश शुल्क भेजना होगा। हिंदी में प्रकाशित पुस्तकों की मुद्रण अवधि १ जनवरी, २०१६ से ३१ दिसंबर, २०१८ के मध्य होनी चाहिए। इच्छुक विद्वान् श्रीमती राजो किंजल्क, साहित्य सदन, १४५-ए, साईंनाथ नगर, सी-सेक्टर, कोलार रोड, भोपाल-४६२०४२ (म.प्र.) के पते पर ३० दिसंबर, २०१८ तक भेज सकते हैं। दूरभाष : ०९९७७७८२७७७ इ-मेल : jagdishkinjalk@gmail.com □

## साहित्यिक क्षति

### श्री अटल बिहारी वाजपेयी नहीं रहे

१६ अगस्त को प्रख्यात राजनेता एवं कवि श्री अटल बिहारी वाजपेयी का निधन हो गया। उनका जन्म पंडित कृष्ण बिहारी वाजपेयी के घर शिंदे की छावनी (ग्वालियर) में २५ दिसंबर, १९२४ को हुआ। पिता कृष्ण बिहारी वाजपेयी ग्वालियर में अध्यापन कार्य करते थे, इसके अतिरिक्त वे हिंदी व ब्रज भाषा के सिद्धहस्त कवि भी थे। महात्मा रामचंद्र वीर द्वारा रचित अमर कृति 'विजय पताका' पढ़कर अटलजी के जीवन की दिशा ही बदल गई। अटल जी की बी.ए. की शिक्षा ग्वालियर के विक्टोरिया कॉलेज में हुई। छात्र जीवन से वे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक बने और तभी से राष्ट्रीय स्तर की वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में भाग लेते रहे। डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी और पंडित दीनदयाल उपाध्याय के निर्देशन में राजनीति का पाठ तो पढ़ा ही, साथ-साथ पाञ्चजन्य, राष्ट्रधर्म, दैनिक स्वदेश और वीर अर्जुन जैसे पत्र-पत्रिकाओं के संपादन का कार्य भी कुशलतापूर्वक करते रहे। वे भारत के दसवें प्रधानमंत्री रहे। उनकी प्रमख रचनाएँ हैं—'मृत्यु या हत्या', 'अमर बलिदान' (लोकसभा में अटलजी के वक्तव्यों का संग्रह), 'कैदी कविराय की कुंडलियाँ', 'संसद् में तीन दशक', 'अमर आग है', 'कुछ लेख : कुछ भाषण', 'सेक्युलर वाद', 'राजनीति की रपटीली राहें', 'मेरी इक्यावन कविताएँ', 'बिंदु बिंदु विचार'। उन्हें 'पद्म विभूषण', 'लोकमान्य तिलक पुरस्कार', 'भारत रत्न पंडित गोविंद वल्लभ पंत पुरस्कार', 'फ्रेंड्स ऑफ बांग्लादेश लिबरेशन वार अवॉर्ड' एवं सर्वतोमुखी विकास के लिए किए गए योगदान तथा असाधारण कार्यों के लिए दिसंबर २०१४ में 'भारत रत्न' से सम्मानित किया गया।

**साहित्य अमृत परिवार की ओर से दिवंगत आत्मा को भावभीनी श्रद्धांजलि।**